हेमन्त '९

त्वचा एवं सौंदर्य विशेषांक

द्वैमासिक

जीवनीय

स्वास्थ्य पत्रिका

१२ रु

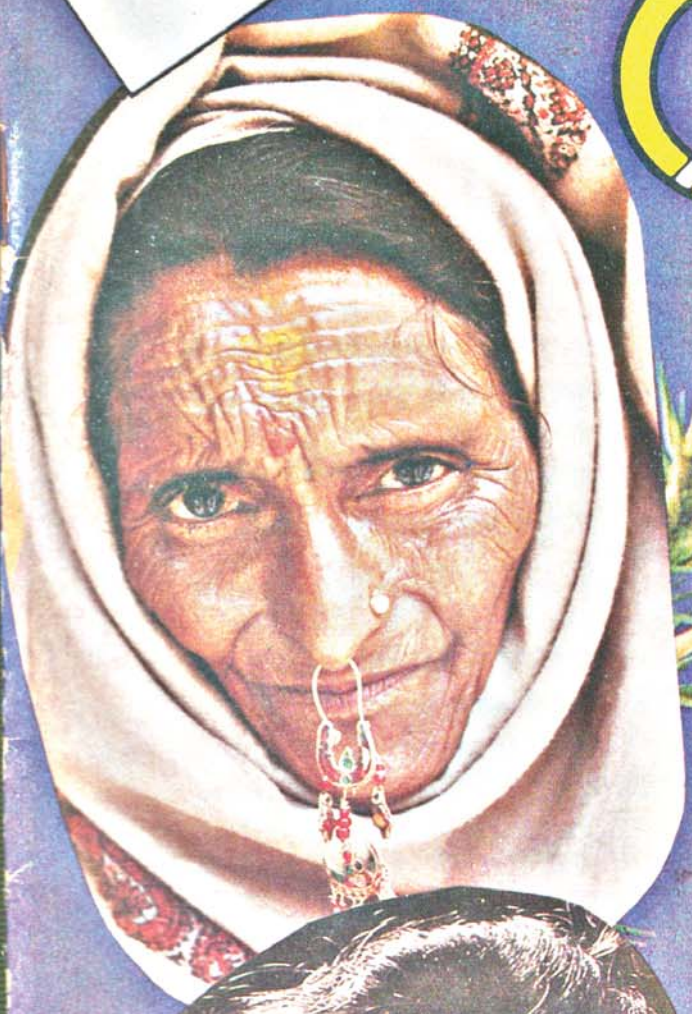

त्वचा में एलर्जी

खुजली से बचें

बालों की देखभाल

हर्बल सौन्दर्य प्रसाधन

जाड़ों में त्वचा की देखभाल

सुन्दर त्वचा के लिये मालिश

जीवनीय द्वैमासिक

मानद संपादक मंडल (लखनऊ)
पं. काशीनाथ गोपाल गोरे
डॉ. पारस नाथ मिश्र
वैद्य पूर्ण चंद्र जैन
डॉ. प्रेम सागर
वैद्य बदलू राम रसिक
डॉ. बिशन नारायण मेहरोत्रा
वैद्य ब्रज बिहारी मिश्र
डॉ. एम. पी. शुक्ल
डॉ. रवि कुमार शर्मा
डॉ. रेनु महेन्द्र
वैद्य सुल्तान अली खां
डॉ. सी.एस. सैंबी
डॉ. हरि प्रकाश शर्मा

कार्यकारी संपादक
डॉ. नरेंद्र नाथ मेहरोत्रा

संयोजक
पं. माधवाचार्य

सम्पादकीय सहायक
कु.वीना टंडन
श्री के.बी.सिंह

साज-सज्जा
श्री संदीप सेनगुप्ता

इस पत्रिका के लिये कापार्ट से मिले अनुदान के हम आभारी हैं।

जीवनीय संबंधित समस्त विवादों का निपटारा लखनऊ के न्यायालयों के आधीन होगा।

जीवनीय सोसायटी की ओर से मुद्रक तथा प्रकाशक डा. नरेन्द्र नाथ मेहरोत्रा द्वारा प्रकाश पैकेजर्स, २५७ गोलागंज लखनऊ-१८ से मुद्रित तथा ई-III/ २४९ सेक्टर एच, अलीगंज लखनऊ-२० से प्रकाशित, संपादक डा. नरेन्द्र नाथ मेहरोत्रा

संपादकीय कार्यालय
जीवनीय
ई-III/२४९, सेक्टर एच
अलीगंज लखनऊ-२२६०२०
फोन-०५२२-७७५६८

अतिथि संपादक

डा.जेड. अन्सारी, लखनऊ

वर्ष ५, अंक ४
१६नवंबर१९९४- १५ जनवरी १९९५

संपादकीय सलाहकार समिति
वैद्य अयोध्या प्रसाद अचल, गया
हकीम अल्ताफ अहमद आजमी, नई दिल्ली
डॉ. गीता बामेजई, नई दिल्ली
वैद्य विवेकानंद पांडे, नई दिल्ली
वैद्य भगवान दाश, नई दिल्ली
वैद्य मायाराम उनियाल,नई दिल्ली
डॉ. टी. के. अब्दुल रज्जाक,पालक्कड़
वैद्य शिव कुमार मिश्र, पीलीभीत
वैद्य सुभाष रानाडे, पुणे
डॉ. उमा, बंगलूर
डॉ. भारतेन्दु प्रकाश, बाँदा
श्री ए.वी. बालसुब्रहमण्यम, मद्रास
वैद्य रमेश म. नानल, मुंबई
वैद्य भास्कर वि. साठ्ये, मुंबई
वैद्य नरेन्द्र सो. भट्ट, मुंबई
हकीम सफदर नवाब, लखनऊ
वैद्य वी.बी. म्हैस्कर, वड़ोदरा

जीवनीय में छपने वाले लेखों को पाठकों के लिए उपयोगी बनाने हेतु हम सतत् संपादकीय प्रयास करते हैं। परंतु रोग निदान एवं चिकित्सा एक कुशल चिकित्सक का ही काम है। स्वस्थ जीवन हेतु आवश्यक जानकारी अवश्य जीवनीय से प्राप्त करें पर रोग-चिकित्सा कुशल चिकित्सक की ही देखरेख में करें।

— संपादक

जीवनीय चंदे की दरें

	व्यक्तिगत (रुपये)	संस्थागत (रुपये)
वार्षिक	५०	८०
द्वैवार्षिक	९०	१५०
त्रैवार्षिक	१३०	२२०
आजीवन	५००	८००

चंदा साधारण डाकखर्च सहित है पर यदि पत्रिका रजिस्टर्ड डाक से मंगाना है तो उपरोक्त दरों में रु. ३५ और जोड़ कर भेजें। चंदे की रकम ड्राफ्ट या मनीआर्डर द्वारा ही 'जीवनीय सोसाइटी, लखनऊ' के नाम से भेजें।लोस्वापसंस के सदस्यों एवं स्वैच्छिक संस्थाओं को चंदे में १० प्रतिशत की छूट मिलेगी।

संपादकीय

आदि काल से मनुष्य की सुन्दर दिखने की इच्छा सभी सभ्यताओं में पायी जाती रही है । स्त्री और पुरुष दोनों ही न केवल दूसरों को दिखाने के लिये बल्कि अपनी संतुष्टि के लिये भी चिकनी, रेशमी त्वचा हेतु सौंदर्य प्रसाधनों का प्रयोग करते हैं। खुरदरी त्वचा के अतिरिक्त खुजली, पित्ती, फुन्सियां आदि भी बहुत से लोगों में हो सकती हैं। यद्यपि अधिकांश त्वचाविकार जानलेवा नहीं होते तथापि प्रत्येक समाज में इनके प्रति वितृष्णा होती है।

भारतवर्ष में वानस्पतिक सौन्दर्य प्रसाधनों का प्रयोग इस हद तक प्रचलित रहा है कि हल्दी, कुंकुम और हिना आदि का प्रयोग सामाजिक सांस्कृतिक परम्पराओं जैसे विवाह, शिशु जन्म के उत्सवों और त्यौहारों का अभिन्न अंग बन गया है। ज्ञान के परम्परागत स्रोतों जैसे आयुर्वेद, यूनानी और सिद्ध आदि ग्रन्थों में त्वचा की देखभाल, सौन्दर्य वृद्धि और त्वचा रोगों की चिकित्सा से सम्बन्धित ज्ञान का विशाल भंडार है। इसी प्रकार हमारी लोक परम्पराओं, घरेलू और आदिवासी स्वास्थ्य रक्षा की परम्पराओं में भी त्वचा की देखभाल सम्बन्धी प्रचुर जानकारी उपलब्ध है। साधारण त्वचा रोगों में इनकी कई औषधियां बहुत प्रभावशाली है।

कुछ समय के लिये बहुत सी रसायन आधारित कृत्रिम सौन्दर्य प्रसाधन सामग्रियों की ओर जनता का झुकाव रहा है परन्तु इनके दुष्प्रभावों ने इनके प्रयोग को हतोत्साहित किया है। वानस्पतिक सौन्दर्य प्रसाधन आजकल पूरी दुनिया में अपनाए जा रहे हैं। बहुत सी भारतीय कम्पनियां निर्यात की विशाल सम्भावनाओं की खोज कर विश्व बाजार में प्रविष्ट हो चुकी हैं। इस विशाल सम्भावना की ओर हमें सावधानी से कदम उठाने चाहिये ताकि हमारे जंगल यद्यपि महत्वपूर्ण संसाधनों का उत्पादन करते रहें पर 'कस्तूरी मृग' जैसी दुर्लभ प्रजातियां नष्ट न हो जाएँ।

हमारी पारम्परिक धरोहर के प्रयोग में इन दिनों कुछ कमी हुई है, विशेषकर शहरी मध्यम वर्ग में जो फैक्टरी निर्मित शैम्पू, साबुन, क्रीम, फेस पैक आदि के प्रयोग को वरीयता देते हैं। जहां एक ओर डिब्बाबंद 'हर्बल कास्मेटिक' ऊंचे मूल्यों के कारण आम जनता की पहुँच से बाहर होते जा रहे हैं, वहीं इनके निर्माण और प्रयोग का हमारा परम्परागत ज्ञान भी लुप्त होता जा रहा है। हमें आशा है कि जीवनीय का यह अँक इस धारा को उलटने में सहायक होगा ताकि सौन्दर्य प्रसाधनों को घर में ही बनाया जा सके अथवा वानस्पतिक सौन्दर्य प्रसाधन निर्माण हेतु कुटीर उद्योगों को प्रोत्साहन प्राप्त हो।

कई रोगों की चिकित्सा में यह परम्पराएं बहुत प्रभावशाली रही हैं और लोग धीरे-धीरे इनकी ओर वापस मुड़ रहे हैं। स्टीरायड और दूसरे रासायनिक पदार्थ, जिनके गम्भीर दुष्प्रभाव होते हैं, को छोड़कर नीम, हल्दी, घृतकुमारी और दूसरी वनस्पतिजन्य सामग्रियों का त्वचा रोगों में प्रयोग एक शुभ संकेत है। हमें आशा है कि जीवनीय आन्दोलन ऐसे सभी प्रयासों को सुदृढ़ करेगा।

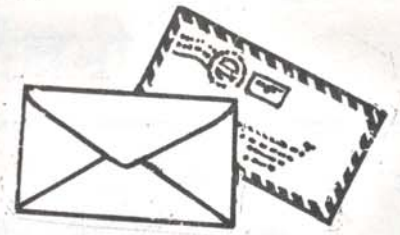

पाठकों के पत्र

सम्पादक जी

मैं आपके द्वारा प्रकाशित "जीवनीय" से बहुत प्रभावित हूं । मैं आयुर्वेद की छात्रा हूं और मुझे इस पत्रिका से समय समय पर बहुत लाभकारी जानकारी मिलती रही है। भविष्य में भी इस पत्रिका में उपयोगी समग्री प्रकाशित होती रहेगी यह मेरी आशा है। आयुर्वेद से कई वर्षों से जुड़ी हूं इसलिए आपसे यह अनुरोध है कि आप अपनी पत्रिका में आयुर्वेद से संबंधित नये अनुसंधान को भी प्रकाशित करिये। इस तरह से यह पत्रिका पाठकों के लिए और अधिक रोचक हो जाएगी।

पल्लवी कस्तूरे, थाने, महाराष्ट्र

मुझे आपकी पत्रिका का एक अंक पढ़ने का अवसर प्राप्त हुआ जिससे बहुत ही अच्छी व सुचारु जानकारी प्राप्त हुई। मुझे यह विश्वास है कि यह पत्रिका मेरी संस्था के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध होगी। आपकी पत्रिका में प्रकाशित लेख रोगों के विषय में महत्वपूर्ण जानकारी देते हैं। मैं इस पत्रिका का प्रत्येक अंक पढ़ना चाहती हूं।

रमाकांती, सतना

मैं "जीवनीय" पत्रिका को नियमित रूप से पढ़ता हूं व मुझे यह पत्रिका बहुत रोचक लगती है। मेरा एक सुझाव है कि यदि इस पत्रिका को ग्रामीण क्षेत्रों के माध्यमिक स्कूलों में भी भेजा जाए तो उन लोगों के लिए बहुत उपयोगी होगी। आज हमारी स्वदेशी औषधियां जिनका उपयोग कम हो गया है, मेरा विश्वास है कि इस पत्रिका के सहारे फिर से अंकुरित हो उठेगा। ग्रामीण क्षेत्रों के जिन लोगों तक इसकी जानकारी पहुंच पाएगी, वह अंग्रेजी दवा की जगह स्वदेशी दवा अपनाएगें। हम लोगों को सही जानकारी व मार्गदर्शन की आवश्यकता है।

गिरीश चन्द्र काण्डपाल, अल्मोड़ा

हमें आपके सुझाव अच्छे लगे। यह जानकर हर्ष हुआ कि आप "जीवनीय आंदोलन " में जो कि अपने पाठकों को परम्परागत चिकित्सा पद्धति व आसानी से प्राप्त औषधियों की जानकारी देने में पिछले कई वर्ष से तत्पर है, शामिल हैं। जीवनीय पत्रिका के कुछ पाठक हमारे ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं और हम उन्हें नियमित रूप से पत्रिका भेजते रहते हैं।

संपादक

प्रिय संपादक

मुझे आपके द्वारा प्रकाशित पत्रिका पढ़ने का अवसर मिला। पत्रिका में विख्यात व अनुभवी वैद्यों के लेख होते हैं, वह बहुत रुचिकर लगते हैं। हांलाकि आपकी पत्रिका में औषधि व आहार द्रव्य के विषय में जानकारी दी जाती है लेकिन इस संदर्भ में मेरा एक सुझाव है कि जड़ी बूटी को पत्रिका में अधिक स्थान दिया जाए। हमारी परंपरागत व वर्तमान चिकित्सा इतनी महंगी होती जा रही है कि शहर व गांवों का निर्धन व मध्यम वर्गीय व्यक्ति दांत दर्द की भी दवा लेने के पहले अपनी जेब देखता है। कुछ लोगों को तो अपने आस पास आसानी से उपलब्ध औषधियों के विषय में भी जानकारी नहीं है जैसे कि कभी कभी एक लौंग के सेवन से दांत के दर्द में कुछ कमी आ जाती है।

डा. कमल प्रकाश अग्रवाल, चन्दौसी

हमारा हमेशा से यह प्रयत्न रहा है कि जीवनीय हर घर की पत्रिका बने और इस दिशा में आप पाठकों के सुझाव हमारे लिए हमेशा ही उपयोगी सिद्ध हुए हैं। हमारा संपादक मण्डल आपके सुझाव पर अवश्य विचार करेगा।

संपादक

मैंने आपकी पत्रिका का एक अंक देखा व पढ़ा। मुझे "जीवनीय" पढ़ने से महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त हुई। मैं ग्रामीण क्षेत्र की एक संस्था में कार्यरत हूं जो कि स्वास्थ्य कार्यक्रम चलाती है। मेरी संस्था व इससे जुड़े लोगों के लिए यह पत्रिका बहुत उपयोगी है। इसमें लोकोक्तियों का समावेश करके और अधिक रोचक बनायें ऐसा मेरा सुझाव है।

श्रीमती कुन्ती, खागा

संपादक जी,

मुझे आपकी स्वयंसेवी संस्था द्वारा प्रकाशित पत्रिका किसी मित्र ने फटी पुरानी दशा में दी। मैंने प्रयास करके उसके पन्नों को पढ़ने के लिए क्रम से लगाया और उसके बाद ध्यान पूर्वक पढ़ा। हालांकि इस पत्रिका के कई पन्ने गायब थे लेकिन इसके बाद भी उसमें जितनी पाठन सामग्री थी वह बहुत ज्ञान वर्धक थी। अब इस पत्रिका के प्रत्येक अंक को पढ़ना चाहता हूं। अपने स्वास्थ्य के प्रति सावधान रखने के लिए यह एक उपयोगी पत्रिका है।

डा. बसन्त लाल गुप्ता, इलाहाबाद

मुझे "जीवनीय" शिशिर 93 अंक की एक प्रति देखने को मिली। मुझे पढ़कर बहुत प्रसन्नता हुई क्योंकि अपने भारतवर्ष से लुप्त हो रहे औषधीय पौधों के विषय में जानकारी देने वाली पत्रिका देखने को मिली। स्वयं व परिवार के अन्य सदस्यों को विभिन्न रोगों के उपचार के तरीकों के विषय में जानकारी देने वाली उपयोगी पत्रिका है।

श्री झगड़े, एस वि, महाराष्ट्र

मैं आपकी पत्रिका नियमित पढ़ता हूं और मुझे यह आसानी से उपलब्ध हो जाती है। लेकिन अब मैं इस पत्रिका का प्रशंसक बन गया हूं इसलिए इसके अब तक प्रकाशित सभी अंकों की एक प्रतियां अपने पास रखना चाहता हूं। भविष्य में भी जीवनीय पत्रिका इतनी रुचिकर होगी, ऐसा मेरा विश्वास है।

श्री चमन लाल नायक, हरियाणा

इस अंक में

आहार और हमारा स्वास्थ्य ९
स्वास्थ्य रक्षा का जनविज्ञान १०
आयुर्वेद में गौ द्वारा चिकित्सा ३१
आयुर्वेद कल, आज और कल ५९

आवरण लेख

त्वचा की रचना एवं इसका महत्व १३
स्वस्थ त्वचा के लिए संतुलित आहार १५
चर्म रोगों में आहार १६
शीतऋतु में त्वचा की देखभाल १७
सौंदर्य का दुखड़ा : मुंहासे १८
श्वेत कुष्ठ या सफेद दाग १९
सामान्य चर्म रोग और उनसे बचाव २१
सौंदर्य प्रसाधन कस्तूरी २२
ऐलर्जी या प्रत्यूर्जता २३
त्वचा रोगों की आदिवासी चिकित्सा २४
शीतपित्त या अर्टीकिरिया २६
खुजली या खाज २७
चर्म रोगों के घरेलू इलाज २८
एग्जिमा की प्राकृतिक चिकित्सा ३०

औषध द्रव्य

प्रकृति की अनुपम भेंट–शहद ३२
शुद्ध फिटकिरी के अनेक गुण ३३
बहूपयोगी इलायची ३५
लाल मिर्च के औषधीय गुण ३६
बाकुची ३७
महागुणकारी लहसुन ३८
लहसुन के लाभकारी योग ३९

आहार द्रव्य

अन्डेः प्राचीन एवं आधुनिक विचार ४०
शरीर का वजन घटाएं–पत्तागोभी खायें ४२
स्वादिष्ट गाजर ४३
आइये देशी चाय पियें ४४
रामदाना ४५

स्थायी स्तंभ

स्वास्थ्य समाचार और विचार ४
हेमन्त ऋतु में हितकारी दिनचर्या ८
आपकी समस्यायें ४६
दादी मां के नुस्खे ४७
स्वयं बनायें ४९
हेमन्त में उपयोगी शाक–सब्जी उगायें ५१
ग्रह और स्वास्थ्य ५३
जीवनीय समाचार ५४
लो.स्वा.प.सं.स. समाचार ५५
ज्ञानकोश– त्वचा ५६
जीवनीय पहेली ५७
पुस्तक समीक्षा ५८
साक्षात्कार ६२
लोकोक्तियां ६२

स्वास्थ्य समाचार और विचार

क्लोरीनयुक्त पानी न लें

प्राकृतिक जल स्त्रोतों से प्राप्त किये गए पानी को जीवाणुओं और रोगजनों (पैथोजेन्स) से मुक्त करने के लिए उसमें क्लोरीन मिलायी जाती है। पेयजल को साफ करने के लिए यह सबसे व्यापक पैमाने पर इस्तेमाल में लाया जाने वाला तरीका है और अब तक का सबसे प्रभावशाली तरीका भी है। लेकिन एक नये अध्ययन से इस बात के संकेत मिलते हैं कि क्लोरीनयुक्त पानी पीने वाले व्यक्तियों में कैंसर होने का खतरा सामान्य से अधिक होता है। "अमेरिकन जर्नल आफॅ पब्लिक हेल्थ" में प्रकाशित इस अध्ययन के आंकलनों के अनुसार संयुक्त राज्य अमेरिका में मूत्राशय के कैंसर के कुल मामलों में ९% और मलाशय के कैंसर के कुछ मामलों में १५% का कारण लम्बे समय तक क्लोरीनरत जल का इस्तेमाल है। अमेरिका में हर साल मूत्राशय के कैंसर के ४२०० और मलाशय के कैंसर ६५०० मामले क्लोरीनयुक्त पानी के उपयोग के कारण होते हैं।

विस्कांसिन मेडिकल कालेज और हारवर्ड विश्वविद्यालय के "स्कूल आफ हेल्थ" के अनुसंधानकर्ताओं का यह अध्ययन कैंसर से संबंधित दस अध्ययनों में प्रकाशित कैंसर की दरों के मूल्यांकन पर आधारित है। जिन दस अध्ययनों को विश्लेषण का आधार बनाया गया है वे १९७८ से हाल तक की अवधि में अमेरिका के विभिन्न भागों में सम्पन्न किये गये हैं। अनुसंधानकर्ताओं का कहना है कि कैंसर उत्पन्न होने का अतिरिक्त खतरा संभवतः सीधे क्लोरीन के कारण नहीं होता। बल्कि इसका कारण शायद वे कैंसरकारी यौगिक हैं जो क्लोरीन और पानी में विद्यमान कार्बनिक पदार्थों के संयोग से उत्पन्न होते हैं। प्राकृतिक जल स्त्रोतों से प्राप्त किये गये पानी में कार्बनिक पदार्थ प्रायः उपस्थित होते ही हैं। क्लोरीन की इनसे क्रिया होने पर क्लोरोफार्म और अन्य कैंसरकारी यौगिकों का निर्माण हो सकता है। सतह जल के उपयोग पर आश्रित अधिकतर जल-आपूर्ति प्रणालियों में क्लोरीन का इस्तेमाल किया जाता है जिससे संक्रामक रोग उत्पन्न करने वाले जीवाणुओं और अन्य रोगजनों को नष्ट किया जा सके। संयुक्त राज्य अमेरिका में ७५% से अधिक पेयजल क्लोरीनयुक्त होता है।

हार्वर्ड के अनुसंधानकर्ता थामस चाल्मेर्स का कहना है कि फिलहाल हम पानी के क्लोरीनीकरण पर रोक नहीं लगा सकते लेकिन हमें रोगजनों को नष्ट करने के वैकल्पिक उपायों की तलाश करनी होगी। अध्ययन रिपोर्ट में क्लोरअमीनीकरण (क्लोर एमीनेशन) नामक प्रक्रिया का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि इस प्रक्रिया को अपनाने पर पानी में क्लोरीनयुक्त उपोत्पादों का निर्माण कम हो जाता है। क्लोर अमीनीकरण की प्रक्रिया में पानी में क्लोरीन और अमोनिया दोनों मिलायी जाती हैं। अमेरिकन वाटर वर्क्स एसोसिएशन द्वारा किये गये एक सर्वेक्षण के अनुसार अमेरिका की २६७ वृहत्तम जलापूर्ति प्रणालियों में से २०% द्वारा इस प्रक्रिया का उपयोग किया जा रहा है।

सुपर धान की सुपर उपज

अंतर्राष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान के वैज्ञानिकों ने हाल ही में धान की एक ऐसी किस्म विकसित कर लेने की घोषणा की है जिसकी उपज १३ टन प्रति हेक्टेयर है। यह उपज वर्तमान अधिकतम उपज से २५ प्रतिशत ज्यादा है। गौरतलब है कि चावल दुनिया की आधी आबादी का पेट भरता है। १९६० के दशक में हरित क्रांति के शुरूआती दौर में चावल की जो किस्में विकसित हुई थीं आदर्श परिस्थितियों में उनकी अधिकतम उपज १० टन प्रति हेक्टेयर आंकी गई थी। उसके बाद से चावल की किस्मों का विकास तो होता रहा मगर उपज में वृद्धि की स्थिति नहीं बनी। इस दौरान वैज्ञानिकों ने ज्यादा ध्यान इस बात पर दिया कि धान में कीटों व बीमारियों के खिलाफ प्रतिरोध क्षमता कैसे उत्पन्न की जाए। इसके अलावा यह भी प्रयास चलते रहे कि कैसे धान को सूखे के प्रति सहनशील बनाया जाय। यानी वैज्ञानिक इस बात पर ध्यान देते रहे कि अधिकतम सम्भावित उपज साकार करने के लिए क्या किया जाए मगर उपज की अधिकतम सीमा को बढ़ाने के प्रयास नहीं हुए।

धान की यह १३ टनी किस्म अभी किसानों को उपलब्ध नहीं हो पाएगी क्योंकि इस वक्त मात्र उपज बढ़ी है मगर कीटों व बीमारियों के खिलाफ प्रतिरोध विकसित नहीं किया जा सका है। मगर वैज्ञानिकों का यकीन है कि यह काम ज्यादा मुश्किल नहीं होगा। मुख्य बात थी कि उपज की सीमा को पार करना और वह हासिल हो चुकी है।

पिछले वर्षों में वैज्ञानिक इस बात को लेकर खासे चिंतित रहे हैं कि अंतर्राष्ट्रीय चावल अनुसंधान केन्द्र के आदर्श परीक्षण खेतों में धान की उपज गिरती जा रही है। इसके अलावा दुनिया के अच्छी उपज वाले धान क्षेत्रों में भी उपज में गिरावट आई है। इस नई किस्म को इस समस्या का समाधान मानने वालों की कमी नहीं है परन्तु कई वैज्ञानिकों का मानना है कि गिरती उपज इस बात का द्योतक है कि लगातार धान की खेती मिट्टी की उर्वरता के ह्रास की इस प्रकिया को तेज करेगी।

धान की इस नई प्रजाति की विशेषता यह है कि इसमें ज्यादा तने फूटते हैं तथा हर तने पर बालियां लगती हैं। हर बाली में चावल के दाने भी ज्यादा होते हैं। कुल मिलाकर होता यह है कि धान का पौधा सूर्य से प्राप्त ऊर्जा का अधिकतम इस्तेमाल दाना बनाने में करता है। यह पौधा ज्यादा सघन होता है तथा बुवाई भी पास पास करना सम्भव है। (स्त्रोत फीचर्स)

ज्वार की सुरक्षा लहसुन से

आधा किलो लहसुन को छीलकर, पीसकर आधा लीटर पानी में मिला दें। इस पानी का छिड़काव करने के बाद आपकी फसल फफूंद से सुरक्षित रहेगी। अंतर्राष्ट्रीय अर्द्ध सूखा क्षेत्र फसल अनुसंधान संस्थान के

शोधकर्ता शिव दयाल सिंह द्वारा किए गए अथक परिश्रम व शोध का यही परिणाम है। उन्होंने इस उपचार को प्रयोगशाला की परिस्थितियों और खेतों में किया। उनका कहना है कि क्लेविसेप्स नामक फफूंद, जो एर्गाट का कारण बनती है, उसके खिलाफ यह उपचार १०० फीसदी कारगर है।

उसी संस्थान के निदेशक डंकन मैकडोनाल्ड बताते हैं कि ज्वार दुनिया भर में साढ़े चार करोड़ हैक्टर में बोई जाती है तथा उसकी उपज सालाना पौने छः करोड़ टन के लगभग होती है। इस महत्वपूर्ण फसल को बीमारी से बचाने के लिए नई किस्में विकसित करने में कामयाबी नहीं मिली है।

क्लेविसेप्स नामक यह फफूंद फूलों पर हमला करती है। इसके हमले की वजह से ये फूल एक मीठा चिपचिपा पदार्थ बनाने लगते हैं। इस मीठे पदार्थ से आकर्षित होकर कीड़े-मकोड़े आते हैं और ये कीड़े-मकोड़े फफूंद को एक पेड़ से दूसरे पेड़ तक फैलाने में मदद करते हैं। इसके अलावा थ्रेशिंग के समय भी फफूंद के अण्डाणु कोष फट जाते हैं और रोग फैलता है।

स्वयं शोधकर्ताओं का मानना है कि यह शोध अनूठा है क्योंकि इसके जरिए एक भयानक बीमारी का एक पर्यावरण प्रेमी समाधान ढूंढ लिया गया है। फायदा यह है कि लहसुन छिड़काव "आसान और सुरक्षित" है। अभी तक जो सबसे प्रचलित फफूंद नाशक उपलब्ध था वह मात्र ७५% कारगर था।

मगर लहसुन उपचार की समस्याएं भी हैं। छिड़काव करने के बाद यदि बारिश हो जाए तो पूरी औषधि धुलकर मिट्टी में मिल जाती है। इसलिए अब शोधकर्ता कोशिश कर रहे हैं कि कोई ऐसा पदार्थ इसमें मिलाया जाए ताकि बारिश के बाद भी औषधि पेड़ से चिपकी रहे। अर्थात पूरा मामला इतना नहीं रह जाता कि किसान लहसुन लेकर फफूंद का उपचार कर दें। उसे इस चिपकाने वाले पदार्थ को प्राप्त करना होगा।

यह तो बहुत दिनों से पता है कि लहसुन में एलिसीन नामक एक अवयव होता है जिसमें कीटनाशक गुण होते हैं। इसके आधार पर बिक्री योग्य उत्पाद बनाने की उम्मीद शोधकर्ता कर रहे हैं। नीम का किस्सा दोहराया जाने को है। **(स्त्रोत फीचर्स)**

कचरा और महामारी

भारत डोगरा, दिल्ली

प्लेग जैसी महामारी का मात्र आर्थिक मूल्यांकन करना सहज नहीं है, फिर भी यदि ऐसा प्रयास किया जाय तो इससे आर्थिक हानि अरबों में कूती जाएगी। यह भी सत्य है कि इस आर्थिक हानि से, साथ ही मनुष्यों को होनेवाले अपार दुःख से, समय पर सफाई कार्य करके जिसमें मात्र कुछ करोड़ का व्यय होता, बचा जा सकता था। लेकिन हमने कुछ करोड़ रुपये बचा कर अरबों का नुकसान तो उठाया ही साथ ही रोग, मृत्यु और तनाव का तांडव भी झेला।

सूरत की त्रासदी से हमें यह शिक्षा लेनी चाहिए कि केवल एक बड़ी महामारी इतनी बड़ी आर्थिक क्षति कर सकती है जो अनिवार्य सफाई कार्य के बजट में कमी से दसियों वर्षों से की गयी बचत पर भारी पड़ती है।

उपयुक्त बजट की कमी के अतिरिक्त दो कारण और हैं जिनसे कचरा और गंदगी भारतीय नगरों की गंभीर समस्या बन गयी है। दोनों ही कारणों का मूल एक ओर गरीबी के जारी रहने से और दूसरी ओर अपेक्षाकृत एक छोटे समुदाय में बढ़ते हुए अपव्ययपूर्ण उपभोक्तावाद से है।

नगरों में गंदी बस्तियों के क्षेत्र में निकृष्टतम गंदगी और कचरा पाया जाता है। परन्तु हमारे समाज का प्रभावशाली तबका इसकी ओर से तब तक आंखे मूंदे रहता है जब तक कि वह महामारी के रुप में फूट नहीं पड़ता। गंदी बस्तियों की अत्यंत आधारभूत आवश्यकताओं तक की उपेक्षा की जाती है। ऐसी बस्तियों के निवासी प्रायः उन्हें साफ करने के लिए प्रस्तुत रहते हैं परन्तु जब तक ऐसी बस्तियों से पानी निकास की व्यवस्था नहीं होगी, शौचालय न होंगे, कूड़ा उठाने की व्यवस्था न होगी, वे कुछ विशेष कर नहीं पायेंगे।

दूसरी समस्या, जो अपव्ययपूर्ण उपभोक्तवाद की उपज है, यह है कि कचरे में गुणात्मक परिवर्तन आ गया है। अब इसमें ऐसे कूड़े की मात्रा बहुत बढ़ गई है, जिसका जैवक्षीणन संभव नहीं। हमने पाश्चात्य देशों के अनुभवों से महंगी शिक्षा नहीं ली और उनकी जीवन-पद्धति के अत्यंत अपव्ययपूर्ण पहलू तक की नकल करने पर तुले प्रतीत हो रहे हैं। इस संदर्भ में यह देखकर स्तब्ध रह जाना पड़ता है कि बड़ी-बड़ी कंमनियां जिनके माल की खपत सारे देश में बड़े पैमाने पर है, अब प्लास्टिक के गिलासों और बोतलों में या अन्य हानिकारक पैकों में अपने मृदु पेय बेच रही हैं। इन प्रवृत्तियों से ऐसे कचरे में बराबर वृद्धि हो रही है, जिसे नष्ट करना अत्यंत कठिन है और जिससे बचा जा सकता है।

कुछ ही वर्ष पूर्व वार्षिक नगरीय कचरा उत्पादन संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रति व्यक्ति ७६२ किग्रा, कनाडा में ६३० किग्रा. और सिंगापुर में ६८५ किग्रा. था। इसमें बहुत बड़ा भाग ऐसे पैकिंग पदार्थों का था, जिनसें बचा जा सकता था। हालांकि ऐसी बरबादी कहीं भी निंदनीय है, लेकिन धनी देशों के पास अपने कचरे को ठिकाने लगाने लायक संसाधन हैं, जो हमारे पास नहीं हैं, लेकिन हम फिर भी उनका अनुकरण करना चाहते हैं।

हाल की महामारी केवल एक प्रकृतिक आपदा न थी इसने हमें यह शिक्षा दी है कि हमारी अर्थव्यवस्था की "कुछ लोगों के लिए सुविधाएं" उपलब्ध कराने की प्रवृत्ति उनके लिए लाभकारी नहीं है, जिनके लिए वह बनी है। जब तक एक ओर आमदनी और धन का समान्तर वितरण नहीं होता और दूसरी ओर अपव्ययपूर्ण उपभोक्तावाद को त्यागा नहीं जाता, तब तक लोक स्वास्थ्य का उन्नयन संभव नहीं।

माया सभ्यताकालीन औषधियों का पुनरुद्धार

फैबियाना फ्रेसीनेट

विश्व की महान प्राचीन सभ्यताओं में माया सभ्यता का महत्वपूर्ण स्थान है। यह सभ्यता लैटिन अमरीका में उसूकेन्टा नदी के किनारे ३०० से ९०० ईसा पश्चात में विकसित हुई। इस सभ्यता में वास्तुकला की दृष्टि से महत्वपूर्ण महलों, मंदिरों, खेल के स्थानों और स्नानगृहों का निर्माण किया। दर्शन और औषध विज्ञान के क्षेत्र में इस सभ्यता में महत्वपूर्ण उपलब्धियां हासिल थी।

ग्वाटेमाला के उत्तरी भाग में रहने वाले इण्डियन, माया सभ्यता के अपने पूर्वजों द्वारा प्रयोग की गई परम्परागत औषधियों का प्रयोग आधुनिक बीमारियों को भगाने के लिए कर रहे हैं।

इन परम्परागत औषधियों का पुनरुद्धार एक बहुत जटिल प्रक्रिया है क्योंकि करीब आधी शताब्दी के विदेशी प्रभुत्व के काल में न केवल इन औषधियों के ज्ञाताओं के साथ सौतेला व्यवहार किया गया बल्कि उसे जादू टोना कह कर निन्दित भी किया गया। यह परम्परा सदियों से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक श्रुतियों के रुप में चलती आ रही है। अब राज्य द्वारा स्वास्थ्य सेवाओं पर बहुत कम खर्च करने के कारण सामान्य जनता के सामने इसके अतिरिक्त और कोई रास्ता नहीं बचता कि वह अपने पूर्वजों द्वारा अपनाई गई औषधियों का पुनः प्रयोग करें।

ग्वाटेमाला की सरकार प्रति ८०,००० की जनसंख्या पर केवल ६ डाक्टर और तीन स्वास्थ्य केन्द्र उपलब्ध करा पा रही है। अत्यधिक गरीबी, खराब सड़कों और सरकारी सैनिकों और विद्रोहियों के बीच चले ३० वर्ष लम्बे सशस्त्र गृह युद्ध के कारण अस्पताल और पश्चिमी (एलोपैथिक) चिकित्सा को सामान्य जनता की पहुंच के बाहर कर दिया है।

माया सभ्यता में औषधि को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था और देश में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध जीव और वनस्पितयों से औषधियां तैयार की जाती थीं। आजकल के स्थानीय परम्परागत चिकित्सक जिन्हें शमान कहा जाता है वनस्पतियों का औषधीय प्रयोग करते हैं। चर्च, गैर सरकारी संगठन और सहकारी संगठन परम्परागत औषधियों के उपयोग को बढ़ावा दे रहे हैं। यद्यपि यह प्रक्रिया देश की सभ्यता पर पड़े विदेशी कुप्रभावों के कारण धीमी है तथा सभी आधुनिक औषधियों के विकल्प नहीं खोजे जा सके हैं। तथापि ग्रामीण जनसंख्या का लगभग ९० प्रतिशत परम्परागत औषधियों का उपयोग करने लगा है। (थर्ड वर्ड रिसरजेन्स अंक ४५ से साभार)

नीम का तेलः एक सुरक्षा कवच

यदि हम ऐसी वनस्पतियों पर दृष्टि डाले, जिनके समस्त अंगों–प्रत्यंगों का उपयोग औषधि निर्माण में होता है, तो सर्वप्रथम हमारी दृष्टि नीम पर जा कर ठहरती है। यूं तो सदियों से हमारे आयुर्वेदाचार्य नीम की पत्ती, फल, फूल व छाल आदि के औषधीय गुणों का वर्णन करते रहे हैं, किन्तु हाल में किए गए अध्ययनों के परिणामस्वरुप इसका एक अन्य मूल्यवान गुण प्रकाश में आया है, वह है मलेरिया निवारण के रुप में ।

ऐसे समय जबकि बाजार में प्रचलित मच्छर भगाने वाली विभिन्न रासायनिक वस्तुओं से स्वास्थ्य पर पड़ने वाले घातक प्रभाव सामने आ रहे हैं और यही नहीं इन वस्तुओं के लिए मच्छरों की प्रतिरोधक क्षमता भी बढ़ रही है, तब नीम के तेल का महत्व और अधिक बढ़ जाता है। सस्ता एवं सरलता से उपलब्ध हो जाने वाला नीम का तेल मच्छरों को दूर भगाने का एक प्राकृतिक एवं अत्यन्त सुरक्षित साधन है।

पुराने आंकड़ों को देखने पर पता चलता है कि वर्ष १९९१ में मलेरिया, विशेषकर मस्तिष्क को प्रभावित करने वाले मलेरिया से पीड़ितों की संख्या लगभग ९.१ लाख थी। जो कि वर्ष १९९२ में घटकर ४.५ लाख रह गई। मलेरिया अनुसंधान केन्द्र द्वारा इस दिशा में किए गए अध्ययनों से ज्ञात होता है कि दो प्रतिशत नीम के तेल को यदि ९८ प्रतिशत नारियल के तेल में मिला कर शरीर के खुले अंगों पर लगाएं तो लगभग १२ घंटों तक एनोफिलीज मच्छर के आक्रमणों से बचा जा सकता है। इस प्रकार न केवल मलेरिया, बल्कि मच्छरों द्वारा फैलाने वाले अन्य घातक रोगों जैसे जापानी इनसेफेलाइटिस तथा डेंगू बुखार से भी निजात पाई जा सकती है।

कुछ वर्ष पूर्व मलेरिया अनुसंधान केन्द्र द्वारा किए गए अध्ययनों से पता चलता है कि कोई भी मच्छर निवारक जैसे क्रीम, अगरबत्ती या मैट मच्छरों से पूर्णरुपेण बचाव कर पाने में सक्षम नहीं हैं। साथ ही साथ अपनी रासायनिक प्रकृति के कारण ये स्वास्थ्य के लिए कई दूसरे प्रकार से हानिप्रद होते हैं। जबकि नीम सदैव से त्वचा संरक्षक के रुप में जाना जाता है, अतः त्वचा पर इसके तेल के मिश्रण से किसी कुप्रभाव का तो प्रश्न ही नहीं उठता। बल्कि यह त्वचा को अन्य संक्रमणों, फोड़े, फुन्सी, कील व मुंहासे आदि से भी सुरक्षित रखता है।

अतः नीम के तेल को उपर्युक्त विधि के अनुसार प्रयोग करने पर मलेरिया तथा अन्य सम्बन्धित रोगों से तो छुटकारा पाया ही जा सकता है, साथ ही रात की शांति को भंग करने वाले मच्छरों के अवांछनीय संगीत से भी मुक्ति पाई जा सकती है।

उपभोक्ता संरक्षण – डाक्टर का नजरिया

डा. आर.सी.गोयल

अभी तक स्थिति यह थी कि डाक्टर या अस्पताल की लापरवाही के खिलाफ मुकदमा दीवानी अदालत में चलाया जाता था। परन्तु १९८६ में पारित "उपभोक्ता संरक्षण कानून" ने स्थिति में भारी फेरबदल ला दिया है। हम देखते हैं कि कई मरीज तथा उनके वारिस अब उ.सं.का. के तहत गठित प्रांतीय/राष्ट्रीय आयोग या जिला उपभोक्ता मंच के जरिए मुकदमे दायर करने लगे हैं। इस कानून के अन्तर्गत उपभोक्ता को कई लाभ होते हैं। यह कानून ऐसे डाक्टरों पर दबाब बनाएगा जो फितरती तौर पर लापरवाह होते हैं। इसके अलावा उपभोक्ता को डाक्टर की लापरवाही की स्थिति में त्वरित न्याय मिलेगा तथा वे मुआवजे के भी हकदार होंगे।

किन्तु दूसरी ओर कतिपय कारणों से इस कानून का नकारात्मक असर भी हो सकता है । "मरीज" उपभोक्ता है या नहीं यह विचारणीय है। यदि अस्पतालों, प्राइवेट नर्सिंग होम या प्राइवेट डाक्टरों आदि की सेवा का उपयोग करने वाले को "उपभोक्ता" परिभाषित कर दिया गया तो गैर जिम्मेदाराना मुकदमेबाजी का सिलसिला हो जाएगा। उपभोक्ता संरक्षण कानून के चलते अनावश्यक मुकदमेबाजी, मुआवजा भुगतान आदि के डर की वजह से डाक्टर स्वच्छंदता से काम नहीं कर सकेंगे। चिकित्सा के क्षेत्र में जूनियर डाक्टरों की ट्रेनिंग तथा सीनियर डाक्टरों के हुनर में विस्तार जरुरी होता है। इस प्रक्रिया में कुछ जोखिम निहित ही होता है तथा इससे जुड़े कई नैतिकता के मुददे भी हैं। हो सकता है कि किसी आपरेशन के लिए सीनियर सर्जन ही सर्वेत्तम हो, किन्तु जूनियर डाक्टरों की ट्रेनिंग की जरुरत के मददेनजर उन्हें भी अवसर देना जरुरी हो जाता है। इस तरह का अवसर जूनियर डाक्टर की क्षमता को ध्यान में रखकर ही दिया जाता है।

डाक्टर प्रत्यक्ष शारीरिक जांच के आधार पर इलाज न करके मुकदमे की गुंजाइश खत्म करने के लिए मरीज को कई जांच/परीक्षण करवाने के लिए मजबूर करेंगे। सिरदर्द का मरीज अपनी खोपड़ी का एक्स–रे निकलवाता नजर आएगा। ऐसे कई परीक्षण करवाने के बाद ही डाक्टर तय करेंगे कि इलाज का रुवरुप क्या हो। यदि मुकदमा चला तो वह सारी जिम्मेदारी परीक्षणों पर डालकर हाथ झाड़ लेगा। नये परीक्षण और नई तकनीक का प्रयोग करने में डाक्टर हिचकिचाएगें। ऐसे कई विशेषज्ञ हैं जिनका काम बहुत जोखिम से भरा होता है। मसलन न्यूरोसर्जन, दिल के सर्जन वगैरह। यह जोखिम उस सर्जरी की प्रकृति में ही निहित है। उ.सं.का. के बाद वे ऐसे क्षेत्र में काम करने से पहले दस बार सोचेंगे। जिला /प्रांत/राष्ट्रीय मंच के विद्वान सदस्य, चिकित्सकीय मामलों में मुआवजा वगैरह देने में गलती कर सकते हैं क्योंकि उन्हें चिकित्सा शास्त्र का ज्ञान नहीं होता। खास तौर पर उन्हें यह इल्म नहीं होता कि इमरजेन्सी के दौरान या चलते आपरेशन में डाक्टरों को कई त्वरित फैसले करने पड़ते हैं। मरीज आमतौर पर डाक्टर के पास एक विश्वास लेकर जाते हैं। फिर भी इस पेशे में आज काफी व्यावसायिक रुझान पैदा हो गया है किन्तु इसे "व्यापार" नहीं कहा जा सकता। डाक्टर को अपनी पेशेगत छवि बहुत प्रिय होती है। उपभोक्ता मंच इस छवि को धूमिल करने का माध्यम बनाए जा सकते हैं। लिहाजा डाक्टर कोशिश करेंगे कि अदालत से बाहर समझौता हो जाए। यानी यह कानून डाक्टर को ब्लैकमेल करने का औजार बन सकता है। यह सभी जानते हैं कि एलोपैथिक दवाइयों के साईड असर भी होते हैं। हो सकता है कि कोई दवा, मर्ज ठीक करने के साथ साथ कोई दूसरी शिकायत पैदा कर दे। इसमें डाक्टर की कोई गलती नहीं होती।

उपभोक्ता संरक्षण कानून लागू हो जाने पर डाक्टर अपने मरीजों का सतर्कता से चुनाव करेंगे। वे मात्र ऐसे मरीजों का इलाज करेंगे जो बाद में कानूनी दिक्कतें न पैदा करें। दूसरे शब्दों में वे मात्र "सुरक्षित मरीजों" का इलाज करने लगेंगे। ऐसे में अन्ततः नुकसान मरीजों का ही होगा।

सुझाव– संसद को चाहिए कि वह इस कानून के प्रावधानों पर सभी के हित में विचार करे तथा "उपभोक्ता" तथा "सेवा" को स्पष्ट रुप से परिभाषित करे। ताकि डाक्टर व अस्पताल गैरजिम्मेदार मुकदमेबाली से बच सकें। यदि मरीज को कोई शिकायत है तो मुकदमा दीवानी अदालत में दायर किया जा सकता है यदि दीवानी अदालतों पर बहुत बोझ है, तो चिकित्सा संबंधी मुकदमों के लिए विशेष अदालतें कायम की जा सकती हैं। दीवनी अदालत का सुझाव दो कारणों से जरुरी है उ.सं.का. के तहत मुकदमें बगैर शुल्क के दायर किए जा सकते हैं। दीवानी अदालत में शुल्क भरना होगा। अतः ऊटपटांग मुकदमें करने से पूर्व लोग सोचेंगे। झूठे मुकदमों को निरुत्साहित करने के लिए यह किया जा सकता है कि दावा राशि का १० प्रतिशत पहले ही जमा करवा लिया जाए। यदि मरीज मुकदमा जीत जाए तो यह राशि वापस दी जाए अन्यथा नहीं। मुकदमा हार जाने की दशा में डाक्टर को मरीज से मुकदमे का पूरा खर्च दिलवाया जाना चाहिए। यदि यह संभव न हो सके तो कानून में संशोधन कर यह प्राविधान किया जा सकता है कि सुनवाई के समय उपभोक्ता मंच में किसी विशेषज्ञ को भी तदर्थ सदस्य के रुप में नामांकित किया जाय।या मरीज उपभोक्ता की शिकायत तथा डाक्टर के जवाब, दोनों को किसी चिकित्सा विशेषज्ञ के समक्ष विचारार्थ प्रस्तुत किया जा सकता है। उनकी सलाह के आधार पर शिकायत खारिज करने अथवा उसे स्वीकार करने का निर्णय हो सकता है। वकीलों को चाहिए कि वे झूठे मुकदमों को निरुत्साहित करें। मरीजों को चाहिए कि वे मुकदमा करने से पूर्व गंभीरतापूर्वक विचार करें। उन्हें सोचना चाहिए कि उन्हें वाकई खराब सेवा मिली या डाक्टर के सामने यही एकमात्र विकल्प था?

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि इलाज में कभी कभार होने वाली त्रुटियों को ठीक करने का तरीका यह नहीं हो सकता कि चिकित्सकों का मनोबल गिराया जाए या उन्हें गुकदमेबाजी में फंसाया जाए। यह प्रक्रिया सभी के लिए नुकसानदेह होगी तथा कानून के मकसद के विपरीत होगी।

(स्त्रोत फीचर्स)

हेमन्त ऋतु में हितकर दिनचर्या

वैद्य मनमीत सिंह, लखनऊ

शरद ऋतु के बाद हेमन्त का आगमन होता है, इसका समय लगभग १६ नवम्बर से १५ जनवरी (मार्गशीर्ष एवं पौष) के मध्य माना जाता है। स्वास्थ्य की दृष्टि से हेमन्त को ऋतुओं में श्रेष्ठ कहा जाता है। सूर्य के दक्षिणायन में रहते हुए यह विसर्ग काल की अन्तिम ऋतु है, इसे शीत की ऋतु भी कहा जाता है। इस ऋतु में सूर्य मण्डल ओस के कणों से मलिन होता है, एवं सब दिशाओं में कोहरा रहता है। वायु शीतल होने के कारण रोंगटे खड़ी करती है। इस ऋतु में अनेक सुन्दर-सुन्दर पुष्प खिलते हैं। व जन्तु हष्ट पुष्ट एवं कामातुर हो जाते हैं।

हेमन्त काल का शरीर पर प्रभाव

इस ऋतु में १६ उष्मांए (भ्राजक आदि ४, रसादि धातु गत ६ और पंचमहाभूतो की ५ अग्नियां) शीत एवं शीतल वायु के प्रभाव से बचने के लिए भीतर प्रविष्ट हो जाती है, जिससे जठराग्नि प्रबल (तीव्र) हो जाती है। अतः इस ऋतु में गुरु अन्नपान (शालि, षस्टिक, पीठी, इक्षुविकार, क्षीर विकार, उड़द, भैंस का दूध, सूअर का मांस आदि) का सेवन करना चाहिए। यदि पुष्टिकारक आहारों का प्रयोग नहीं किया जाता है तो उपयुक्त ईंधन नहीं मिलने के कारण जठराग्नि मन्द हो सकती है या अत्याधिक तीक्ष्ण होकर रस-रक्त आदि धातुओं को पचाने लगती है। अतः धातुक्षय के कारण पक्षाघात आदि वात व्याधियों की सम्भावना बढ़ जाती है।

शीतल एवं रुक्ष वायु के कारण ठंड से शरीर में जकड़न जुकाम एवं बुखार हो जाता है। त्वचा के रुक्ष होने पर वायु के शीतल गुण प्रविष्ट होने से वात प्रकोप, कास, श्वास, तमक श्वास, सन्धिवात, आमवात, पक्षाघात की सम्भावना होती है। इस ऋतु में प्रतिदिन स्नान करके कपड़े न बदलने से त्वचा में खुजली (स्केबीस) एवं अन्य चर्म रोगों की सम्भावना प्रबल रहती है।

हेमन्त ऋतु में आहार-विहार

शीत ऋतु ही मात्र ऐसी ऋतु है जिसमें हमें शरीर और स्वास्थ्य की स्थिति को सुधारने में प्रकृति से मदद मिलती है। इस ऋतु में तेज भूख लगने पर, कार्य में व्यस्त रहना और भूख मर जाने पर भोजन करना, शरीर एवं स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। अतः हमें स्निग्ध (चिकने), मधुर, लवण और अम्ल रस वाले पौष्टिक व बल बढ़ाने वाले पदार्थ- घी, दूध, मलाई, शहद, मिश्री, पुराना गुड़, रबड़ी, मालपुआ, हलवा, मुरब्बा, मौसमी फल, असगन्ध, मूसली, शतावरी, कौंच के बीच, शुद्ध शिलाजीत, रसायन एवं वाजीकरक योग लाभकर होते हैं।

इन दिनों में मालिश करने से त्वचा में स्निग्धता एवं कोमलता आती है साथ ही बल भी बढ़ता है। मालिश के लिए सरसों का तैल सर्वोत्तम है। कपूर मिलाकर मालिश करने से आमवात एवं सन्धिवात की वेदना में लाभ मिलता है। स्नान से पूर्व सप्ताह में एक या दो बार उबटन (सरसों, तिल, हरिद्रा) लगाने से लाभ मिलता है। स्वेदन करने से अंग प्रत्यंग की जकड़ाहट, क्रोध, आलस्य एवं शीतता दूर हो जाती है। स्नान गर्म जल से करना चाहिए। गर्म वस्त्रों को धारण करने से शीत से बचाव होता है। प्राणायाम करने से भी शीत का प्रकोप कम होता है। इस ऋतु में व्यायाम करने से शरीर में लघुता एवं कार्य करने की क्षमता बढ़ती है। दिन में धूप में बैठना, रात्रि में कमरा गरम रखना एवं उष्ण स्थान पर निवास करना लाभकर है। अगर खुले स्थान में घूमने जायें तो ऊनी वस्त्रों से शरीर को ढक लें, एवं खुले वाहनों मे न घूमें। मद्यपान का प्रयोग लघु मात्रा में लाभकर होता है।

हेमन्त ऋतु में वर्जनीय

इस ऋतु में शीत के कारण वायु एवं कफ सम्बंधी विकार होने की प्रबल सम्भावना होती है, वायु बढ़ाने वाले द्रव्य, सत्तू, बरफ, कम खाना, रुखा, कड़वा, ठंडा अन्नपान, आलू, उड़द के बड़े, पुराना एवं शुष्क अन्न इस ऋतु में वर्जनीय है। भोजन कम करने से, अथवा भूख लगने पर भोजन न करने से, जठराग्नि शरीर की धातुओं को जलाने लगती है, अतः वात व्याधियों की सम्भावना बढ़ जाती है, अतः हमें ऐसा आहार विहार नहीं करना चाहिए, जिससे वात एवं कफ का प्रकोप हो। जब तक तीव्र ठंड न पड़े, अधिक गरिष्ठ एवं पौष्टिक आहार, रसायन एवं वाजीकारक द्रव्यों का प्रयोग कम करना चाहिए।

रात्रि में देर से भोजन करना, एवं देर तक जागना स्वास्थ्य के लिए हानिकर है। शीत में अति शीत, अति ऊष्ण जल से स्नान नहीं करना चाहिए। रात में कमरे को हीटर या एयर कंडीशन से गर्म कर सकते हैं परन्तु अंगीठी का प्रयोग सावधानी पूर्वक करें, कभी कभी बंद कमरे में अंगीठी जलाने से उसका धुआँ (कार्बन डाई आक्साईड एवं कार्बन मोनो आक्साईड) बाहर न निकल पाने से स्वास्थ्य के लिए हानिकर साबित होता है। रात में सोते समय मुंह ढक कर भी नहीं सोना चाहिए। तमक श्वास के रोगी इस ऋतु में शीतल जल से स्नान न करें, अन्यथा श्वास के वेगों के आने की प्रबल सम्भावना होती है।

आहार और हमारा स्वास्थ्य

वैद्य पी. सी. जैन, लखनऊ

मानव जीवन के लिए आवश्यक तीन उपस्तंभों में आहार को सर्वोपरि महत्व प्राप्त है। मानव शरीर इन्द्रिय, मन, आत्मा एवं देह का संयोग है जिसके रहते जीवन कहा जाता है तथा इनका संयोग विघटित होने पर शरीर मृत हो जाता है। इन्द्रिय, मन एवं आत्मा के स्वस्थ रहने से मानसिक स्वास्थ्य तथा देह के उपयुक्त रहने से शारीरिक स्वास्थ्य ठीक रहता है।

उक्त दोंनो प्रकार का स्वास्थ्य आहार पर निर्भर है इसी से आहार को उत्तम उपस्तंभ कहा है। चरक के अनुसार वर्ण, प्रसन्नता, जीवन, प्रतिभा, सुख व संतोष, पुष्टि, बल, मेधा आदि सभी कार्य आहार पर आश्रित हैं। सामान्यतः आहार के तीन कार्य हैं

- शरीर के विभिन्न अवयवों की वृद्धि करना। जन्म से लेकर शिशु के अंग प्रत्यंगों तथा मस्तिष्क आदि का विकास आहार द्वारा ही होता है।
- मरम्मत– शरीर के अंग प्रत्यंग गतिशील होते हैं जिससे उन ऊतकों के जीर्ण होने और पश्चात नष्ट होने की क्रिया निरन्तर चलती रहती है इससे शरीर एवं मन क्षीण होने से कार्य करना बंद कर देते हैं अतः जीर्ण शीर्ण ऊतकों एवं कोषों के स्थान पर नवीन कोषों की उत्पत्ति से उनकी मरम्मत की जाती है और शरीर एवं मन की स्वस्थ क्रियाओं का अनुरक्षण रहता है। आहार के इस कार्य को चयापचय या मेटाबालिज्म कहते हैं।
- ऊष्मा का उत्पादन। शरीर एवं मन के प्रत्येक कार्य को संपादित करने के लिए शक्ति की आवश्यकता होती है जो हमें आहार के द्वारा प्राप्त होती है। इसी शक्ति से शरीर का तापमान स्थिर रहता है और विभिन्न कार्यों के लिए ऊर्जा के रुप में इसका उपयोग होता है।

मानसिक गुण– प्रकृति से उत्पन्न होने के कारण मन भी तीन प्रकार के गुणों का आधार होता है। सात्विक, राजसिक एवं तामसिक। सात्विक गुण के कारण मनुष्य में मन की निर्मलता, इन्द्रियों की प्रसन्नता, स्फूर्ति, उत्साह, प्रीति, क्षमा, संतोष, अनुकंम्पा, सरलता, मृदुता, लज्जा, विवेक आदि विशिष्टताओं का विकास होता है।

राजसिक गुण– राजसिक गुण के कारण अंग प्रत्यंगों की गतिशीलता, प्रवृत्तिशीलता एवं क्रियाशीलता तथा ईर्ष्या, दम्भ, मान, हर्ष, काम, क्रोध, क्रूरता, असत्यभाषण, अधीरता, अहंकार आदि विशिष्टताओं का विकास होता है।

तामसिक गुण– तामसिक गुण के कारण शरीर में विषाद, मोह, ममत्व, प्रमाद, कुटिलता, धूर्तता, कृपणता, निष्क्रियता, भीरु, नास्तिक, अज्ञान, बुद्धिनिरोध, मूढ़ता, निद्रालुता आदि विशिष्टताओं का विकास होता है। सत्व, रज, तम की विशिष्टताओं का मानव में विकास भी आहार के द्वारा होता है।

संतुलित आहार

संतुलित आहार द्वारा ही मस्तिष्क का समुचित पोषण संभव होता है। संतुलित आहार उसे कहा जाता है जो शरीर के अंगप्रत्यंगों की वृद्धि, क्षतिपूर्ति करने के साथ शरीर क्रियाओं को आवश्यक ऊर्जा की पूर्ति कर सके। इसमें आहार के सभी घटक उचित मात्रा में रहना चाहिए। इसमें प्रोटीन, वसा,, कार्बोज शरीर को वृद्धि कारक एवं ऊर्जा उत्पादक तथा जल खनिज लवण एवं विटामिन्स रक्षात्मक आहार आवश्यक अनुपात में विद्यमान रहते हैं जिनसे शरीर की वृद्धि एवं रक्षा के साथ २५०० केलोरी ऊर्जा की भी उत्पत्ति होती है। आयुर्वेद के शब्दों में इस प्रकार का आहार पांचभौतिक एवं षडरस प्रधान कहा जाता है। आहार द्रव्यों में प्रोटीन ७० ग्राम, वसा ५० ग्राम, कार्बोज ४४० ग्राम, जल १५०० मि. लीटर सोडियम, पोटेशियम कैल्सियम, फासफोरस, लौह आदि खनिज लवण तथा विटामिन ए,डी,बी,सी,ई आवश्यक मात्रा में लेना चाहिए

आहार द्रव्य

प्रोटीन, दूध, दही, पनीर, गेहूं, मक्का, बाजरा, विभिन्न दालें, मूंगफली, सोयाबीन, अंडा , मांस तथा वानस्पतिज तैलों के रुप में, कार्बोज चावल, गेहूं, चना, मक्का, बाजरा, आलू, शकरकंद, शक्कर, आदि के रुप में तथा खनिज लवण एवं विटामिन्स अनार, केला, सेव, नासपाती, पपीता आदि फल एवं हरी शाक–सब्जी के रुप में लिए जाते हैं। उक्त आहार द्रव्यों द्वारा संतुलित आहार से मस्तिष्क व शरीर का सम्यक विकास एवं उसकी क्रियाओं का अनुरक्षण किया जाता है।

आहार द्रव्यों के कार्य

संतुलित आहार में प्रोटीन द्रव्य शरीर ऊतकों की वृद्धि के साथ कोष एवं कोष द्रव्यों का निर्माण, रक्त प्रोटीन का निर्माण, हार्मोन्स एवं इन्जाइम्स का निर्माण करते हैं और आवश्यकता पड़ने पर शरीर को ऊर्जा भी प्रदान करते हैं। वसा द्रव्य शरीर की रचनात्मक इकाई कोष भित्ति के निर्माण के साथ विटामिन्स को विलेय रुप में रखने वाले, कुछ हार्मोन्स के निर्माणक एवं उच्च ऊर्जा द्रव्यों को उत्पन्न करने वाले हैं। मस्तिष्क की रचना में बहुतायत से उपलब्ध कोलेस्ट्राल एवं फास्पोलिपिड वसा से ही निर्मित होते हैं। कार्बोज द्रव्य शरीर के कुछ रचनात्मक द्रव्यों के निर्माण के साथ ऊर्जा की प्रमुख रुप से उत्पत्ति करते हैं। ये द्रव्य प्रोटीन एवं वसा के धातुपाक में सहायक होने के साथ आवश्यकता के लिए कार्बोज एवं वसा को शरीर में संचित भी करते हैं।

जल, शरीरस्थ जल की मात्रा को नियमित करता है और विभिन्न द्रव्यों को विलेय रुप में प्रस्तुत करता है। खनिज लवण एवं विटामिन्स

शेष पृ २६ पर

स्वास्थ्य रक्षा का जनविज्ञान

ए० वी० बालसुब्रमनियन, मद्रास

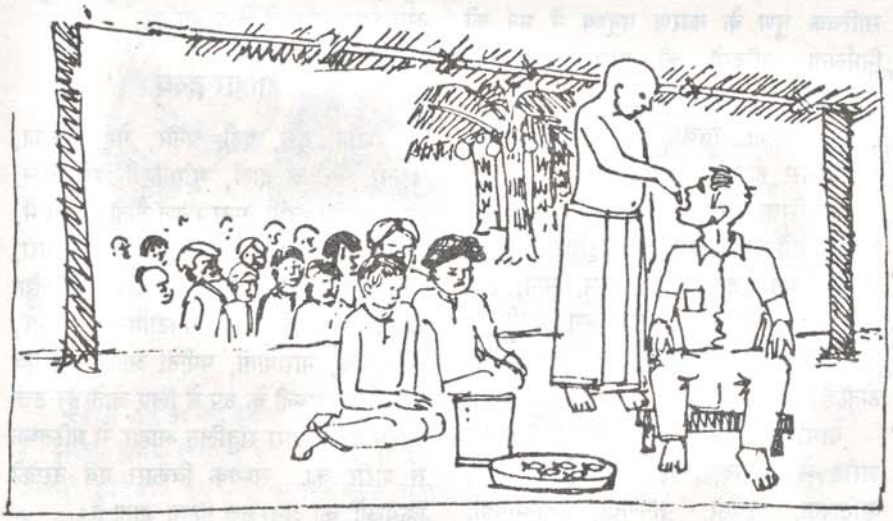

भारतवर्ष और दूसरे बहुत से गैर पश्चिमी समाजों में औषधि विज्ञान की दो विभिन्न धारायें रही हैं– पहली प्राचीन परम्परागत सिद्धान्तों और दूसरी औपनिवेशिक शासन के अन्तर्गत आरोपित आधुनिक पश्चिमी चिकित्सा सिद्धान्तों पर आधारित।

भारत में औषधि विज्ञान की परम्परागत व्यवस्था न केवल संगठित ज्ञान जैसे आयुर्वेद, यूनानी और सिद्ध औषधि प्रणालियों से प्रशिक्षित वैद्यों, हकीमो पर वरन व्यापक 'लोक स्वास्थ्य परम्पराओं' अर्थात् स्वास्थ्य की स्थानीय परम्पराओं में भी पाई जाती है। इनमें चिकित्सकों का एक बहुत बड़ा वर्ग जिनमें घरेलू औषधियों में पारंगत गृहिणी या दादी मां, परम्परागत प्रसव कराने वाली दाई, ग्रामीण या स्थानीय चिकित्सक (जो भारत के अलग–अलग भागों में विभिन्न नामों से जाने जाते हैं जैसे महाराष्ट्र में वैदू, तमिलनाडु में वैद्यन, सिक्किम में धामी आदि) सम्मिलित हैं।

कुछ परिवार एक बीमारी की चिकित्सा करते हैं और कुछ उच्च विशेषज्ञता वाले क्षेत्रों जैसे अस्थि चिकित्सा, विष चिकित्सा आदि क्षेत्रों में कार्य करते हैं। चिकित्सा के अतिरिक्त हमारे दैनन्दिन जीवन में ऐसे क्रियाकलापों की परम्परा रही है जिनसे अच्छा स्वास्थ्य बनाये रखने में मदद मिलती है। इस प्रकार के क्रियाकलापों में भोजन के गुणों की जानकारी जैसे किसी मौसम अथवा किसी रोग में क्या खाया जाय और क्या नहीं, सांस्कृतिक गतिविधियां जैसे– समय–समय पर उपवास, खेल–कूद, व्यायाम, योग और स्वास्थ्य सामान्य रखने के लिये ऋतुचर्चा का पालन आदि आती हैं।

विशेषज्ञता के क्षेत्र

साधारण बीमारियों, घरेलू औषधियों, भोजन का ज्ञान, ऋतुचर्चा और रोगों से बचाव आदि के क्षेत्र में परम्परागत ज्ञान बहुत व्यापक है। कुछ विशेष परम्पराओं के क्षेत्र में ज्ञान किसी विशेषज्ञ चिकित्सक, अथवा कभी–कभी किसी क्षेत्र विशेष में किसी परिवार के कुछ सदस्यों तक सीमित होता है।

कभी–कभी कोई परिवार किसी एक रोग की औषधि की विशेषता प्राप्त कर लेता है जैसे दमा। हर वर्ष मार्गशिरा कार्तिक के दिन हजारों लोग हैदराबाद में एक परिवार के पास उमड़ पड़ते हैं जो कई पीढ़ियों से सभी रोगियों को दमा की औषधि मुफ्त देते हैं। दवा को दो से तीन इंच लम्बी एक मछली (मुरेल) में भरकर रोगी को खिला दी जाती है। जो व्यक्ति मछली नहीं निगलना चाहते उन्हें यह दवा गुड़ से खिला दी जाती है (कहा जाता है कि इस प्रकार इसका असर कुछ कम होता है)।

कहा जाता है कि तीन मार्गशिरा कार्तिकी दिनों में औषधि लेने पर तीन वर्ष के भीतर दमा ठीक हो जाता है। प्रति वर्ष रोगी को औषधि लेने के ४५ दिनों तक नियन्त्रित भोजन ही करना होता है।

इस ज्ञान की उत्पत्ति के विषय में परिवार यह बताता है कि चार पीढ़ी पहले उनके प्रपितामह को किसी पवित्र पुरुष ने वनस्पति की जड़ें दी थीं और उन्हें औषधि निर्माण की विधि बताई थी। तब लगभग १२० वर्षों से यह परिवार प्रतिवर्ष मार्गशिरा कार्तिक के दिन इस औषधि का निःशुल्क वितरण करता है। इस प्रकार के कुछ और विशेषज्ञता क्षेत्र मर्म चिकित्सा और हडडी बैठाना आदि हैं।

मर्म चिकित्सा

तमिलनाडु की देशी चिकित्सा पद्धति में 'वर्म कलई' अथवा मर्म चिकित्सा का महत्वपूर्ण स्थान है। इस पद्धति के विशेषज्ञ को 'आसान' कहते हैं और राज्य में राज चिकित्सक के तौर पर इस विद्या का होना आवश्यक माना जाता था। वर्म उस स्थान को कहते हैं जहां जीवनी शक्ति पायी जाती है। मानव शरीर में वर्म उस स्थान को कहते हैं जहां दबाने, मालिश करने, चोट लगने अथवा उत्तेजित होने पर कोई विशेष रोग ठीक हो अथवा किसी विशेष अंग का कार्य पूरी तरह बन्द हो जाय। इसी विशेष कारण से यह केवल उन्हीं व्यक्तियों को सिखाया जाता था जो अपने

→

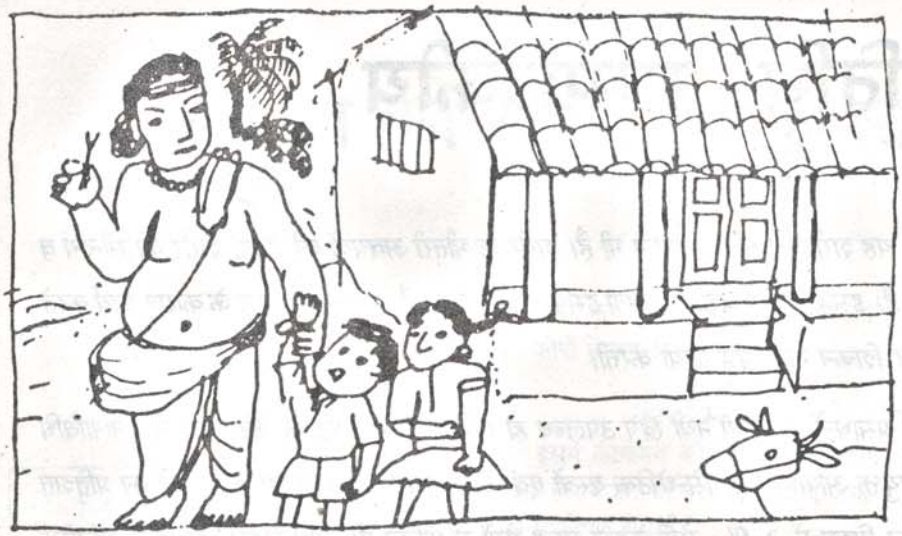

क्रोध पर विजय प्राप्त कर चुके हों, सौम्य और स्वनियंत्रित हों।

नेत्र चिकित्सा

आयुर्वेदिक नेत्र चिकित्सा में केरल के पाटनमिट्टा जिले के वैद्य कुट्टी कृष्णन नायर विशेष पारंगत हैं। इस विद्या से जन स्वास्थ्य के लिये महत्वपूर्ण मोतियाबिन्द की वृद्धि रोकने और रेटिनाइटिस पिगमेन्टोसा रोग में दृष्टि की कमी को रोकने की संभावनायें हैं जो आधुनिक चिकित्सा द्वारा भी फिलहाल संभव नहीं है।

हड्डी बैठाना–

हडडी बैठाने की परम्परागत विद्या में बहुत संभावनायें हैं। भारत में सर्वत्र इस विद्या के लोक विशेषज्ञ पाये जाते हैं। आजकल भी इस क्षेत्र में हमारी आवश्यकता का लगभग ८०% इन्हीं विशेषज्ञों से पूरा होता है। इसके अतिरिक्त कुछ केन्द्र काफी पेचीदा और विशेषज्ञता पूर्ण कार्य करते हैं। दक्षिण भारत में ऐसे कुछ प्रसिद्ध केन्द्र आन्ध्र प्रदेश में पुत्तूर और तमिलनाडु में कोयम्बूर के पास तेलुगुपलयम तथा तिरुनलवेली के पास मामसापुरम में है। यह हर्ष की बात है कि इस क्षेत्र के कुछ परम्परागत व्यवहार जैसे खपच्चियों द्वारा हडिडयों को स्थिर करना आदि पश्चिम में भी पुनः प्रचलित हो रहे हैं क्योंकि वे प्लास्टर आफ पेरिस के ढाचों के उपयोग से बेहतर पाये गये हैं।

स्थानीय ज्ञान

इन परम्पराओं का विस्तार, समृद्धि और गहनता विस्मयकारक है। उदाहरण के तौर पर हम एक क्षेत्र में पायी जाने वाली स्वास्थ्य की स्थानीय परंपराओं को देखें जिनके बारे में विस्तृत जानकारी उपलब्ध है। करजत आदिवासी विकास खंड महाराष्ट्र के रायगढ़ जिले में स्थित हैं, जिसमें ४४ बड़े गांव व ९५ छोटे गांव हैं। इनकी कुल जनसंख्या ३०,००० है, इनमें ३०० पारम्परिक चिकित्सक हैं। इनमें साधारण रोगों की चिकित्सा करने वाले वैदू, पारम्परिक प्रसव कराने वाले और उनके सहायक, मुख्य वैदू जो हडडी बैठाने वाले हैं, दाग वैदू जो गर्म धातु को विभिन्न स्थानों पर लगाकर रोगों की चिकित्सा करते हैं, विष चिकित्सक– जो जहरीले दंश का उपचार करते हैं, भक्त और भक्तिन जो मानसिक रोगों की चिकित्सा करते हैं और पशुओं की चिकित्सा करने वाले पशु चिकित्सक भी हैं। इस विकास खण्ड में रहने वाले वैद्य ५०९ प्रकार के पेड़ों, शाक, झाड़ियों, लताओं, घासों, परजीवी आदि का प्रयोग करते हैं। इसके अतिरिक्त वे विभिन्न जान्तव द्रव्यों व धातुओं का भी प्रयोग करते हैं।

(नई दिल्ली में ७–८ नवम्बर १९९४ को आयोजित "जैव विविधता, जनविज्ञान और बौद्धिक सम्पदा अधिकार" नामक सेमिनार में प्रस्तुत आलेख के आधार पर)

बंगाल में चेचक का पारंपरिक टीका

"बंगाल के अनेक जिलों के गांवों के ब्राहाणों का एक विशिष्ट और धर्मार्पित वर्ग प्रति वर्ष टीका लगाने के लिए निकलता है। वे तीन या चार की टोली में निकलते हैं और हर साल महामारी के फैलने के निश्चित समय से पहले टीके लगाते हैं। बंगाल में ये प्रायः गर्मी की शुरुआत होने से पहले, फरवरी से मार्च के बीच पहुंचते हैं। हर क्षेत्र के निवासियों को उनके आने के समय का पता रहता है और वे एक महीने पहले से ही पथ्यापथ्य नियमों का दृढ़ता से पालन करते हैं। तदनुसार वे मछली, दूध और घी से परहेज करते हैं।

"टीका लगानेवाले घर–घर पहुंचते हैं और केवल उन्हीं लोगों को टीके लगाते हैं, जिन्होंने पथ्यापथ्य नियमों का पालन किया होता है। प्रायः पुरुषों को कलाई और कोहनी के बीच बांह के बाहरी भाग में और स्त्रियों को कोहनी और कंधे के बीच टीका लगाते हैं। टीका लगानेवाला व्यक्ति पहले एक कपड़े से आठ–दस मिनट तक उस स्थान को रगड़ लेता है और फिर एक छोटे–से यंत्र से चुभोने की क्रिया तब तक करता है जबतक कि खून की एक बूंद उभर न आये। तदनंतर वह एक दुहरे कपड़े से चेचकीय पदार्थ से आविष्ट एक छोटा वस्त्रखंड निकाल कर उस पर दो बूंद गंगाजल डाल कर रक्त की उभरी बूंद पर रखकर पट्टी बांध देता है। यह पट्टी छह घंटे तक बंधी रहती है। मछली, दूध और घी का परहेज टीका लगाने के दिन से एक महीने तक आगे करना पड़ता है।"

आगे डा. हालवेल कहते हैं, "जब उपर्युक्त उपचार का दृढ़ता से पालन कर लिया जाता है तो यह सुनाई पड़ना एक अचंभे जैसा ही है कि लाखों में कोई एक संक्रमण का शिकार हो गया या टीका लगाना बेकार गया।"

अतिथि सम्पादकीय

प्रो. जेड. अन्सारी, लखनऊ.

त्वचा शरीर के स्वास्थ्य का दर्पण है। यह शरीर का बाह्य आवरण भी है। शरीर के भीतरी अवयवों की रक्षा, शरीर का सौन्दर्य व स्वरूप बनाये रखने का श्रेय भी इसी को है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता इसका लचीलापन है। इसके इसी गुण के कारण कार्य करते समय किसी अंग के मोड़ने पर त्वचा पर शिकन नहीं पड़ जाया करती।

इस भौतिकवादी युग में जहां सौन्दर्य प्रसाधनों की नित्य नयी खेप उपलब्ध हो रही है, निम्न कोटि के प्रसाधनों से, नानाविधि प्रदूषणों से, आंतरिक व बाह्य रूप में प्रयुक्त औषधियों से, सिन्थेटिक वस्त्रों एवं दैवी आपदाओं के कारण त्वकरोगों का प्रतिशत दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है। आज विश्व में ३०% रोगी केवल त्वचा रोगों से पीड़ित हैं। अधिकांशतः शरीर में आंतरिक व्याधि होने पर त्वचा भी प्रभावित होती है, जैसे कामला रोग में त्वचा पीली पड़ जाती है।

राष्ट्रीय समस्याओं में कुष्ठ एवं श्वेतकुष्ठ भयंकर व्याधियां बनकर समाज के सामने खड़ी हैं। कुष्ठ पर तो प्रदेश एवं केन्द्रीय सरकार का ध्यान गया है परन्तु श्वेतकुष्ठ पर अभी तक समुचित ध्यान शासन का नहीं है।

भारतीय चिकित्सा पद्धति में त्वचा की सुरक्षा एवं सौन्दर्यवर्धक बहुत से उपायों का वर्णन उपलब्ध है, जिसे आयुर्वेद के चिकित्सक सफलता पूर्वक उपयोग में ला रहे हैं। प्रस्तुत अंक में उन उपायों एवं विधियों का तथा आधुनिक उपलब्ध विभिन्न विधियों का विवेचन सामान्यजन हितार्थ प्रस्तुत करने का प्रयास किया जा रहा है। यदि इस अंक से किसी एक पीड़ित मानव की भी सेवा हो सकी तो हमारा प्रयास सार्थक सिद्ध होगा।

अगले अंक के प्रमुख आकर्षण

शिशु स्वास्थ्य विशेषांक

खसरा
बच्चों में सूखा रोग
शिशुओं में दस्त
मानसिक विकलांग बच्चे
दांत निकलते समय की सावधानियां
स्तनपान की आवश्यकता
बच्चे में रक्त की कमी
बच्चों के अधिकार

त्वचा की रचना एवं इसका महत्व

वैद्य पूर्णचंद्र जैन एवं डा० प्रमोद मालवीय, लखनऊ

शरीर की वह बाह्य रचना जो उसे सम्पूर्ण रूप से ढके रहती है त्वचा कहलाती है। यह वाह्य आघातों से शरीर की रक्षा करती है। इसमें विकृति आने से विभिन्न रोग उत्पन्न होते हैं जिन्हें चर्म रोग कहते हैं। संपूर्ण शरीर का बाह्य स्तर एक जैसा नहीं होता। हथेली और पैर के तलुओं की त्वचा मोटी होती है जबकि कान, होंठ और गुप्तांगों की त्वचा पतली होती है।

सामान्यतः त्वचा के दो स्तर होते हैं १) बाह्यस्तर जिसे इपीडरमिस एवं २) आन्तरिक स्तर जिसे डरमिस कहते हैं। सूक्ष्म दर्शक यन्त्र से देखने पर बाह्यस्तर पांच स्तर के पाये जाते हैं।

अवभासिनी

यह केराटिन युक्त कोषों के कारण कठोर होती है। इसी से मनुष्य के रंग की प्रतीति होती है। इसकी कठोरता और मोटाई तलुओं, हथेलियों तथा अंगुलियों की जड़ों के पास सहज दिखाई देती है।

लोहिता

यह स्वच्छ कोषों से निर्मित होती है। इसके एवं आगे के स्तर के छिलने से लसिका का स्राव होता है।

श्वेता

इसमें कणयुक्त कोषों की २–३ तहें होती हैं। कोषों में कण विद्यमान रहते हैं।

कंटक स्तर

इसमें कंटकमय कोष जिन्हें प्रिकलकोष कहते हैं पाये जाते हैं। इनके द्वारा डी० एन० ए० का संश्लेषण होता है।

ताम्र :

इस स्तर में रंग को उत्पन्न करने वाले द्रव्य होते हैं। इसके कोषों में मेलेनिन नामक रंजक द्रव्य होता है। इन्हें मेलेनोसाइट कहते हैं। ये पांचों स्तर मिलकर बाह्य त्वचा बनाते हैं। मनुष्यों में रंग पैदा करने वाले रंजक द्रव्य इसी स्तर में सबसे अधिक होते हैं और ऊपर की ओर उत्तरोत्तर कम होते जाते हैं। सबसे बाहर के अवभासिनी स्तर से रंजक द्रव्य की न्यूनाधिकता के कारण मनुष्य गोरे, सांवले अथवा काले रंग के दिखाई पड़ते हैं। ताम्रास्तर में रंजक द्रव्य अधिक होने से त्वचा का रंग गहरा और कम होने पर हलका होता है। बाह्य स्तर में रक्तवाहिनियां नहीं होती और इसका पोषण लसिका द्वारा होता है। तंत्रिका के प्रान्त बाह्य त्वक् के कोषों के मध्य फैले हुए रहते हैं।

अन्तस्त्वाक

इसमें दो स्तर पाये जाते हैं।

१. वेदिनी

इसमें छोटे–छोटे अंकुर रहते हैं जो कंटक स्तर तक फैले रहते हैं। ये अंकुर संयोजक ऊतक, रक्तवाहिनी एवं स्पर्शपिण्ड तथा तंत्रिका के अग्रो से बनते हैं। ये अंकुर अधिक संख्या में और समानान्तर होने से बाह्यत्वक् में रेखाएं बन जाती हैं। अंगुलियों में शंखक्रादि भी इन्हीं के कारण निर्मित होते हैं। इन्हीं के कारण एक मनुष्य की अंगुलियों की छाप दूसरे से नहीं मिलती।

२. रोहिणी

इसमें जाल के समान कोष पाये जाते हैं। इसमें फाइब्रोब्लास्ट कोषों से तान्तवधातु एवं जालक कोषों से त्वचा की आपूर्ति केशिका जाल से होती है जो स्पर्शपिण्ड से कलाग्र के रूप में सम्बन्धित रहती है। इन रक्त वाहिनियों से अत्यधिक रक्त आपूर्ति होने से स्पर्शपिण्ड के तंत्रिका प्रान्तों द्वारा स्पर्श ज्ञान शीघ्र होता है। यह शरीर के ताप को नियंत्रित भी करती है।

त्वचा की ग्रन्थियां

त्वचा में स्थित इरेक्टर मांसपेशी के संकुचन से बाल रोमांचित होते हैं तथा गुह्यांग में स्थित अनैच्छिक पेशियों से यह स्थित रहती है। अन्तस्त्वक् में रोमकूप, स्वेदग्रन्थियां, तैलग्रन्थियां तथा मांसतन्तु पाये जाते हैं। रोमकूप के प्रान्त स्पर्श पिण्ड एवं तंत्रिकाप्रान्त से सम्बन्धित हैं जिससे बालों की गति से भी स्पर्श का ज्ञान होता है। महर्षि चरक का कहना है कि त्वचा शरीर को बाहर से ढकने वाली रचना है अतः आंख, कान, नासिका, जिह्वा को ढकने वाली कला भी एक प्रकार से त्वचा ही है। त्वचा शरीर के अंग प्रत्यंगों की बाह्य आघात तथा बाह्य जींवाणुओं के आक्रमण से शरीर की रक्षा करती है।

शरीर ताप का नियमन– त्वचा की केशिकाएं सर्दी में संकुचित हो जाती हैं जिससे पसीना नहीं निकल पाता। गर्मी में केशिकाएं फैलकर, पसीना निकालकर बढ़े हुए ताप को कम कर देती हैं। स्वेद के वाष्पीकरण से त्वचा भी ठंडी हो जाती है।

स्पर्शज्ञान– त्वचा की तंत्रिकाओं एवं स्पर्शपिण्डों द्वारा स्पर्श, पीड़ा, ताप आदि का ज्ञान होता है। त्वचा के रोमकूप तंत्रिका प्रान्तों से सम्बन्धित होने से बालों की अल्पगति से भी स्पर्शज्ञान होता है।

उत्सर्जन– स्वेद के माध्यम से शरीर का जल एवं लवण, यूरिया, क्रियेटिनीन, यूरिक

अम्ल, अमोनिया आदि द्रव्य उत्सर्जित होते हैं।

संश्लेषण– त्वचा में स्थित वसा में अगोंस्टीराल द्रव्य होता है जिस पर सूर्य की किरणों की अलट्रावायलेट किरणों से विटामिन डी उत्पन्न होता है।

स्रवण– त्वचा में स्थित तैल ग्रन्थियों से कोलेस्टेराल युक्त वसा द्रव्य उत्पन्न होते हैं इसे सीबम कहते हैं। इससे त्वचा कोमल एवं नम रहती है। यह स्राव रोमकूप के माध्यम से त्वचा की सतह पर आ जाता है। हथेली एवं तलुओं में ये बहुत कम रहती है। इनके स्राव युवावस्था में विशेष रूप से स्रवित होते हैं। इस अवस्था में इनमें विशिष्ट गंध होती है। जिससे विरुद्ध लिंग में आकर्षण उत्पन्न होता है। इस स्राव से विटामिन डी की उत्पत्ति में भी मदद मिलती है।

शोषण में त्वचा द्वारा जल का अल्प मात्रा शोषण होता है, वसा एवं वसा में विलेय द्रव्यों तथा विटामिन का त्वचा द्वारा शीघ्र शोषण होता है।

संचय– त्वचा के नीचे स्थित ऊतक में वसा, जल, लवण, ग्लुकोज आदि संचित रहते हैं। जिनका उपयोग शरीर आवश्यकता होने पर करता है।

त्वचा के द्वारा बुढ़ापा, शरीर का पोषण न होना, निर्जलीकरण विटामिन की कमी आदि का ज्ञान होता है।

त्वचा की विकृति

त्वचा का सम्यक् अनुरक्षण न होने से, विभिन्न जीवाणुओं के उपसर्ग से, फंगस के उपसर्ग से एवं अन्य द्रव्यों की कमी से इसमें अनेक विकार उत्पन्न होते हैं।

चर्म रोगों के प्रतिषेध के उपाय

स्वस्थ त्वचा स्वस्थ जीवन का आधार है अतः समुचित आहार विहार से त्वचा को स्वस्थ रखना जीवन की कुंजी है।

प्रातः उठकर हाथ मुंह धोकर शौच शुद्धि के उपरांत प्रातःकाल का भ्रमण त्वचा रोगों की मुक्ति के लिये आवश्यक है। इससे शुद्ध आक्सीजन प्राप्त होती है तथा त्वचागत केशिकाओं में रक्त परिसंचरण में वृद्धि होकर पोषक द्रव्य प्राप्त होते हैं। प्रातः भ्रमण के उपरांत हलका–फुल्का व्यायाम इस प्रक्रिया में वृद्धिकर त्वचा को स्वस्थ रखता है। त्वचा को स्वस्थ रखने को नियमित सरसों अथवा तिल तैल की मालिश अत्यधिक उपयोगी है। मालिश से त्वचा के रोमकूपों द्वारा पोषक तत्व ग्रहण किये जाते हैं। त्वचा, कोमल, नम एवं एक रुप हो जाती है और त्वचा में स्थित भ्राजक पित्त के उत्तेजित होने से शरीर की कान्ति बढ़ती है, अन्न सेवन में रुचि होती है, शरीर का ताप नियमित रहता है।

मालिश के उपरान्त थोड़ी देर धूप स्नान करना चाहिये इससे त्वचा की वसा से विटामिन डी की उत्पत्ति होती है और शरीर के अनेक त्याज्य द्रव्य त्वचा के रोमकूपों द्वारा उत्सर्जित होते हैं। प्रतिदिन ठंडे जल से स्नान विभिन्न त्वग्विकारों को उत्पन्न नहीं होने देता। यह दाह, श्रम, स्वेद, कंडू एवं तृष्णा का नाश करता है, त्वचा में प्रसन्नता एवं शरीर में कार्य करने की क्षमता उत्पन्न होती है, नींद ठीक आती है और त्वचा में नव स्फूर्ति का संचार होता है। त्वचा को स्वस्थ रखने के लिए संतुलित एवं हिताहार का सेवन करे जिसमें शाक, सब्जियों, फलों एवं रेशेदार द्रव्यों की अधिकता हो और जल की समुचित मात्रा का उपयोग हो।

कास्मेटिक सर्जरी (प्रसाधन शल्य क्रिया)

कुरूपता को मानव जाति एक अभिशाप के रूप में देखती है। अनादि काल से मानव में सुन्दर दिखने की अभिलाषा रही है। मानव के केवल कुरूपता से निजात पाने बल्कि सौंदर्य को स्थाई बनाने के लिए सदैव प्रयत्नशील रहा है। विज्ञान की जिस शाखा ने मानव की इस समस्या को सुलझाने का कार्य किया है वह कास्मेटिक सर्जरी अथवा सौंदर्य शल्य क्रिया के नाम से जानी जाती है। किसी समय भारत इस क्षेत्र में विश्व में अग्रणी था अगर यह कहा जाय कि कास्मेटिक सर्जरी का जन्म भारत में ही हुआ तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। ईसा से ९०० वर्ष पूर्व आयुर्वेदाचार्य सुश्रुत को इस विद्या का आदि आचार्य कहा जा सकता है। उन्होंने नाक की सर्जरी की जो तकनीक विकसित की उसे पाश्चात्य जगत में भरपूर सम्मान मिला तथा आज भी उसे भारतीय तकनीक के नाम से जाना जाता है।

अनादि काल से किसी भी पुरुष या स्त्री को व्याभिचार का दोषी पाये जाने पर उसकी नाक काट दी जाती थी। साहित्य में इस प्रकार का सबसे पुराना किस्सा शूर्पनखा का है जिसकी नाक लक्ष्मण जी ने काटी थी। इस दृष्टान्त का वर्णन पश्चिमी चिकित्सा शास्त्र में भी किया है। अगर आपकी नाक मोटी या चपटी है या कान मुड़ा हुआ या बेडौल है तो हम मामूली सा परिवर्तन करके नाक और कान को इच्छित रूप दे सकते हैं।

हमारे देश में लाखों लोग चेचक के दाग, मुहांसों के दाग अथवा सफेद दाग से पीड़ित हैं। इनके दाग फेस पीलिंग द्वारा दूर किये जा सकते हैं। इसमें त्वचा की ऊपरी पर्त को छीलकर निकाल दिया जाता है जिसमें असमतल त्वचा समतल हो जाती है तथा त्वचा प्रत्यारोपण द्वारा सफेद दाग दूर किये जाते हैं। फेस लिफ्ट तकनीक का प्रयोग करके चेहरे की झुर्रियों तथा सिलवटों को मिटाते हैं। इसमें कान के पास त्वचा में चीरा लगाकर ढीली त्वचा को खींचकर ताना जाता है तथा अतिरिक्त त्वचा को काटकर निकाल देते हैं। इसी प्रकार माथे की त्वचा को सिर में चीरा लगाकर ऊपर खींचा जाता है।

स्त्रियों के स्तन अगर छोटे हैं तो उनमें सिलिकान बैग डालकर उनका आकार बड़ा किया जाता है। अगर स्तन लटक गये हो तो उन्हें तान कर सुदृढ़ किया जाता है।अतिरिक्त चर्बी को वसा चूषण द्वारा ठीक किया जाता है इस विधि में चीरा लगाकर उसमें खोखली नली को डाला जाता है। इसका दूसरा सिरा अतिउच्च दाब के पम्प से जुड़ा होता है जिससे अतिरिक्त चर्बी को सोख लिया जाता है। इस विधि से ढाई से तीन लीटर चर्बी एक बार में निकाली जा सकती है।

कई बार पुरुषों के वक्ष विभिन्न कारणों से बढ़ जाते हैं। इस अवस्था को गौयनैकोमेस्टिया कहते हैं। इस बढ़े हुए वक्ष को वसा चूषण द्वारा कम किया जाता है।

कास्मेटिक सर्जरी की सुविधा भारत के सभी महानगरों में उपलब्ध है। भारत में विशेषरूप से प्रशिक्षित कास्मेटिक सर्जनों की संख्या बहुत कम होने के कारण अभी यह उच्चवर्ग की महिलाओं तक ही सीमित है।

स्वस्थ त्वचा के लिये संतुलित आहार

डा० प्रमोद मालवीय, लखनऊ

स्वस्थ त्वचा की देखभाल के लिये संतुलित आहार परम आवश्यक है। संतुलित आहार से अभिप्राय यह है कि जो भोजन हम प्रतिदिन करते हैं उसमें भोजन के वे सब मूल तत्व लगभग उसी अनुपात में रहें, जिनकी और जितने की हमारे शरीर को आवश्यकता है। भोजन में प्रोटीन, वसा, कार्बोज, विटामिन्स, खनिज तत्व तथा जल की निश्चित मात्रा हमारे शरीर के लिये अत्यन्त आवश्यक है।

प्रोटीन, वसा एवं कार्बोज अति आवश्यक पोषक एवं ऊर्जा उत्पादक तत्व है। प्रोटीन मुख्य रूप से पुरानी मृत कोशिकाओं की जगह नवीन कोशिकाओं का निर्माण करता है अतः त्वचा की नवीन कोशिकाओं एवं अन्तः कोषीय द्रव्य के निर्माण में सहायक होता है। वसा, त्वचा के नीचे संग्रहीत रहती है अतः त्वचा के आकार एवं त्वचा की सुन्दरता के लिये विशेष उपयोगी है। कार्बोज के द्वारा शरीर में ऊर्जा उत्पन्न होती है जिसके द्वारा त्वचा के ऊतकों को शक्ति प्राप्त होती है।

त्वचा को निरोग या स्वस्थ रखने के लिये विटामिन्स एवं खनिज द्रव्य मुख्य रूप से विटामिन ए, बी, सी, डी, तथा ई का विशेष महत्व है। इनकी कमी से त्वचा में विभिन्न प्रकार के रोग हो जाते हैं। विटामिन ए त्वचा को संक्रामक रोगों से बचाने की शक्ति प्रदान करता है तथा त्वचा की कोशिकाओं एवं नेत्र के स्वरूप के सामान्य विकास में परम उपयोगी है। यह ऊतकों एवं ग्रन्थियों की क्रियाओं का अनुरक्षण करता है। इसकी कमी से तैल एवं स्वेद ग्रन्थियों की क्रियाओं में विकृति आ जाती है। यह विटामिन त्वचा के नीचे स्थित कला की भी रक्षा करता है जिससे इसकी कमी से त्वचा मोटी हो जाती है, उसमें कैरीटीन संचित होने लगता है। इस प्रकार की त्वचा को टोड त्वचा कहते हैं। स्वेद एवं तैल ग्रन्थियां भी प्रभावित होने लगती है। इसकी कमी से आँखें कमजोर हो कर रतौंधी आदि हो जाती है। विटामिन ए की पूर्ति के लिये हमें अपने आहार में दूध, मक्खन, अंडे, मछली से निर्मित काड लिवर आयल तथा हेलीबट लिवर आयल, हरे शाक भाजी, पालक, गाजर, आम, टमाटर तथा फलों का विशेष रूप से सेवन करना चाहिये।

विटामिन बी में अनेक द्रव्य पाये जाते हैं अतः उन्हें विटामिन बी काम्पलेक्स कहते हैं। इसमें बी–१, बी–२, निकोटिनिक अम्ल, पेन्टोथिनिक अम्ल, बी–६, फोलिक अम्ल, तथा बी–१२ प्रमुख है। इसमें विटामिन बी–१ की कमी से मुख के दोनों किनारे फट जाते हैं, ओठों पर घाव हो जाते हैं तथा जिव्हा फूल जाती है। मुख से लेकर अन्त्र नाड़ी तक में शोथ हो जाता है। मुख और नाक के आस–पास की त्वचा लाल हो सकती है तथा इन कारण आपके ओठ भी फट सकते हैं। त्वचा के बाल झड़ने लगते हैं। त्वचा शुष्क पपड़ीदार हो जाती है। निकोटिनिक अम्ल की कमी से त्वचा पर छोटे–छोटे दाने एवं लाल चकत्ते पड़ जाते हैं। त्वचा सूर्य द्वारा जली हुई प्रतीत होती है उसमें कैरीटीन संचित होता है और त्वचा पपड़ीदार हो जाती है। पेन्टोथीनिक अम्ल की कमी से विभिन्न प्रकार के त्वचा के विकार उत्पन्न होते हैं। सिर की त्वचा में बाल झड़ने से गंजापन आ जाता है विटामिन बी–६ की कमी से सारी त्वचा में शोथ हो जाता है। जिसे ऐक्रोडायनिया कहते हैं। आहार में बिना पालिश किया हुआ चावल, गेहूं, ज्वार, बाजरा आदि धान्यों का बिना चोकर निकला आंटा, छिलके युक्त दालें, हरी सब्जी एवं तरकारियां, मटर, सेम, टमाटर, दूध, मांस, मछली, वृक्क, यकृत आदि को आहार में नियमित सेवन करने से इनके विकारों से सहज ही बचा जा सकता है।

विटामिन सी और जिंक ये दोनों तत्व मिलकर कोलेजिन के निर्माण में सहयोग करते हैं जो त्वचा, अस्थि एवं उपास्थि को आधार देने वाला प्रोटीन होता है। इस विटामिन के द्वारा कोषों की क्रियाशीलता बढ़ जाती है। यह कोषों की उत्पत्ति में भी सहायक होता है तथा कोषों के मध्य अन्तर्कोशीय द्रव्यों का निर्माण करता है। इस विटामिन की सहायता से त्वचा के कटने–फटने पर त्वचा के घाव शीघ्र भर जाते हैं और इनके द्वारा लाल रक्त कणों की परिपक्वता में सहायता प्राप्त होती है। विटामिन सी की कमी से मसूढ़े फूल जाते हैं, उनसे खून निकलने लगता है तथा वे ढीले पड़ जाते हैं। त्वचा पर चकत्ते पड़ जाते हैं। त्वचा पर जीवाणुओं का संक्रमण होकर फोड़ा, फुंसी तथा अन्य त्वचागत विकार उत्पन्न होते हैं। यह विटामिन शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है। विटामिन सी ताजे आंवले, नारंगी, माल्टा, सन्तरा, नींबू, रसभरी, टमाटर, अनन्नास, पपीता, अमरूद तथा हरी शाक भाजी जैसे पत्तागोभी, फूलगोभी, पालक तथा अंकुरित अनाज आदि में प्रचुर मात्रा में पाया जाता है संतुलित आहार में इनके सेवन करने से इन सब परेशानियों से बचा जा सकता है। विटामिन डी की कमी से बच्चों में सूखा रोग तथा स्त्रियों में मृदुलास्थि हो जाता है।

मनुष्य की त्वचा के नीचे स्थित वस्तु में अर्गोस्टिराल नामक तत्व पाया जाता है जिस पर सूर्य रश्मियों में उपस्थित अल्ट्रावायलेट किरणों की क्रिया होने पर विटामिन डी का स्वतः निर्माण होता है। इसीलिये जाड़े के दिनों में बच्चों को तेल लगाने के बाद धूप में बिठाने की हमारे देश में प्रथा है इसके अतिरिक्त बच्चों को काड लिवर आयल भी इस रोग में लाभप्रद रहता है।

विटामिन ई त्वचा के लाल रक्त कोशिकाओं की जिन्दगी को बढ़ाती है। ये लाल रक्त कोशिकाऐं ही त्वचा को सूर्य की अल्ट्रावायलेट किरणों से बचाती हैं।

यह मुख्य रूप से गेहूं, सूरजमुखी के बीजों, समुद्री झीगे तथा हर प्रकार के गिरिदार फलों में पाया जाता है। इनका भली प्रकार सेवन करने से उक्त होने वाली परेशानियों से बचा जा सकता है।

शेष पृ 26 पर

चर्म रोगों में आहार

वैद्य रमेश नानल, मुम्बई

समुचित आहार विहार का सेवन न करने से विभिन्न प्रकार के रोग होते हैं खासकर चर्मरोग पर आहार विहार का प्रभाव सीधा पड़ता है। जैसे मछली, दही और तली हुई वस्तुओं के अधिक सेवन से विसर्प, खुजली, कुष्ठ आदि रोगों में और अधिक विकार हो जाता है। अतः त्वक् विकारों में पथ्य आहार का सेवन अत्यावश्यक है।

पथ्य

अनाजों में गेहूं, ज्वार, बाजरा, जौ, पुराना चावल, हरी सब्जियों में बथुआ, चिचीढ़ा, बाँस के प्ररोह, परवल, करेला, तुरई।

दालों में– मूंग, मसूर, अरहर, ज्वार।

मांस आहार में– बकरी, मुर्गा, तीतर।

फलों में– अंगूर, आम, अनार, खरबूजा।

दूध से बने पदार्थ– दूध, मक्खन, घी।

सलाद– ककड़ी, प्याज, गाजर, कच्ची हल्दी, अदरक।

अन्य– चिरौंजी, काला जीरा, जायफल, केसर।

अपथ्य

अनाजों में– नए धान्य, साबूदाना।

सब्जियों में– हरी पत्तीवाली सब्जियाँ, बैगन।

दालों में– उड़द।

मांस आहार में– मछली, सूखा या पुराना मांस, सुअर, बतख।

फलों में– केला, अनन्नास एवं अन्य अधिक खट्टे फल।

दूध से बने पदार्थ– दही, बासी या खट्टा मक्खन।

सलाद– लहसुन, मूली।

अन्य– तिल, गुड़, नमक।

आहार द्वारा चर्मरोगों का सरल उपचार

आयुर्वेद के अनुसार त्वकविकारों को वात, पित्त एवं काफ तीनों दोषों के लक्षणानुसार परखकर उचित आहार का सेवन करना चाहिए।

वात प्रधान चर्मविकार

लक्षण– त्वचा के विकार ग्रस्त स्थान पर कालापन तथा शुष्कता अधिक होती है। सुई के चुभाने जैसा दर्द होता है। स्नेहन करने से आराम रहता है तथा रुक्षण से विकार में वृद्धि होती है।

पथ्य आहार

- ताजा गर्म एवं स्निग्ध (चिकनाई वाले पदार्थ) भोजन।
- मट्ठे के साथ बकरी के मांस का सूप लेना चाहिए।
- त्वग्विकारों के लिए वर्णित पथ्य फलों का सेवन करें।
- गर्म दूध में शक्कर मिलाकर रात को सोते समय लें।

पित्त प्रधान चर्म विकार

लक्षण– विकार ग्रस्त स्थान गरम रहता है, जलन होती है एवं पीला या लालवर्ण का हो जाता है। शीतल एवं स्निग्ध पदार्थों से इसमें आराम मिलता है तथा गरम एवं शुष्क पदार्थों से विकार में वृद्धि होती है।

आहार

- हल्के गर्म एवं स्निग्ध पदार्थों का सेवन करना चाहिए।
- भोजन के साथ प्रचुर मात्रा में घी का भी सेवन करना चाहिए।
- मूंग के दाल के सूप के साथ घी या मक्खन मिलाकर सेवन करें।

कफ प्रधान चर्म रोग

लक्षण– विकारग्रस्त स्थान में काफी नरमी रहती है, पानी जैसा स्राव निकलता रहता है एवं वह स्थान काफी ठण्डा रहता है। खुजली होती रहती है। गर्म एवं शुष्क पदार्थों के सेवन से आराम मिलता है तथा शीतल एवं स्निग्ध पदार्थों से विकार में वृद्धि होती है।

आहार

- भोजन में घी के स्थान पर तेल का प्रयोग करना चाहिए।
- जौ, ज्वार अधिक मात्रा में बार–बार सेवन करते रहना चाहिए।
- करैला, अदरक, प्याज का भोजन में नियमित रूप से सेवन करते रहना चाहिए।
- मुर्गे के सूप में काली मिर्च, अदरक और जीरा मिलाकर भोजन के साथ लेना चाहिए।
- भोजन के साथ पानी कम मात्रा में लेना चाहिए। जहाँ तक हो सके गरम पानी ही पीना चाहिए।

कुछ लक्षणों के सरल उपचार

सुई के चुभने जैसी पीड़ा में

- दूध की मलाई का लेप लगाना चाहिए।
- नींबू के रस के साथ घी मिलाकर लगाना चाहिए।

गरम चावल या बकरे के गरम कबाब से सेंकना चाहिए।

- नारियल का तेल गुनगुना गर्म करके लगाना चाहिए।
- गरम जल से सेंकना चाहिए।

जलन में

- दूध, मक्खन या घी बिना गरम किए लगाएं।
- ककड़ी को पीसकर दिन में ३–४ बार उसका लेप लगाएं।
- चिरौंजी को पीसकर उसमें थोड़ा घी मिलाकर लगाएं।

खुजली में

- अदरक के रस में काली मिर्च का चूर्ण मिलाकर लगाएं।
- काला जीरा एवं कच्ची हल्दी का चूर्ण खुजली वाले स्थान पर मलना चाहिए।
- करेले को पीसकर लेप बनाकर गरमा लें एवं उससे सेंकाई करें।
- सहिजन के पत्तों को मलना चाहिए।
- नहाने एवं पीने के लिए गरम जल का प्रयोग करना चाहिए।

स्राव में

- करैले को पीसकर लेप बना लें एवं उसे गरमाकर सेंक करें।
- चने एवं काले जीरे का चूर्ण साबुन की जगह लगाकर नहाना चाहिए।

शीत ऋतु में त्वचा की देखभाल

कु. शालिनी मेहरोत्रा, लखनऊ

शीत ऋतु के आते ही जहां एक ओर मन प्रसन्न हो उठता है वहीं दूसरी ओर शीतलहर के परिणामस्वरूप अनेकों कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। शीतलहर का सर्वाधिक प्रभाव हमारी त्वचा पर पड़ता है। आमतौर पर त्वचा का रूखापन, होंठ या हाथ फटना, एड़ियों में दरारें पड़ना, त्वचा का कालापन आदि शीतऋतु के दुष्परिणाम होते हैं। अतः इस मौसम में अपने सौन्दर्य को बनाये रखने के लिये अपनी त्वचा के बारे में ज्ञान और थोड़ी सी देखभाल की आवश्यकता होती है।

हमारी त्वचा की ऊपरी सतह 'एपीडर्मिस' में जल अणु होते हैं जो वसा से घिरे रहते हैं। त्वचा की वसा और प्रोटीन इसकी नमी को भाप बनकर उड़ने से रोकती है। त्वचा की आंतरिक परत 'डर्मिस' में तैल ग्रंथियां होती हैं। इनसे निकलने वाला तेल त्वचा की ऊपरी सतह पर पतली परत जमा देता है और त्वचा की नमी को उड़ने से रोकता है।

त्वचा की समस्याओं का उपचार

शीत ऋतु में हाथ–पैरों, के अतिरिक्त चेहरे की त्वचा पर जो दुष्प्रभाव पड़ता है उसके समाधान के लिये हमें पहले से ही तैयार हो जाना चाहिये। सर्वप्रथम हमें इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि हमारी त्वचा कैसी है और इस मौसम में उसका रुझान कैसा होता है। सामान्य रूप से त्वचा तीन प्रकार की होती है–तैलीय त्वचा, सामान्य त्वचा और रूखी त्वचा। इनमें सामान्य त्वचा सर्वश्रेष्ठ है। त्वचा का तैलीय या रूखा होना सामान्यतया आनुवंशिक कारणों से निर्धारित होता है, इसके साथ ही कुछ बाह्य कारण भी इसमें सहायक होते हैं जैसे–धूप, नमी और हारमोन संबंधी गडबड़ियाँ। त्वचा संबंधी विभिन्न समस्याएँ और उनके उपचार निम्न हैं:

त्वचा का रूखापनः सर्दियों में वातावरण में नमी की मात्रा कम हो जाने से त्वचा की नमी सूखने की दर में वृद्धि होती है, परिणामस्वरुप त्वचा रूखी हो जाती है। अतः त्वचा पर पेट्रोलियम, लेनासिन, सिलिकोन आदि, जो नमी को नष्ट होने से रोंके तथा ग्लिसरीन व ग्लाइकोल्स जैसे तत्व जो नमी को बनाये रख सकें, लगाना चाहिए।

स्नान के बाद चेहरे को हवा में सुखायें तौलिये से न रगडें। गुलाबजल में खीरे व बंदगोभी के दोगुने रस को मिलाकर बोतल में भरकर फ्रिज में रख लें। प्रतिदिन इसे चेहरे तथा गर्दन पर लगाने से त्वचा सर्द हवाओं के दुष्प्रभाव से बची रहेगी। रात में सोने से पहले नींबू के रस में, ग्लिसरीन और गुलाबजल मिलाकर शरीर के खुले अंगों पर लगा लें और सुबह गुनगुने पानी से धो डालें। इससे त्वचा में निखार आता है। संतरे के छिलके गर्म पानी में मसलकर रात भर पड़े रहने दें और सुबह उससे चेहरा धोयें, त्वचा में चमक और स्निग्धता आती है। आटे के चोकर को दही में भिगोकर रख दें। जब यह अच्छी तरह मुलायम हो जाये तो इसे त्वचा पर लगायें। इस उबटन में विटामिन 'सी' व 'ई' होते हैं जो त्वचा के लिये अति आवश्यक व लाभकारी तत्व हैं।

होंठ फटना : सर्दी में होठों का फटना भी एक आम समस्या है। इसके लिये दूध की मलाई का प्रयोग एक पुराना और उपयोगी नुस्खा है। इसके अतिरिक्त होंठों को फटने से रोकने के लिये रात में सोते समय नाभि में एक बूंद देसी घी या सरसों का तेल नियमित रुप से लगाने पर होंठों की लाली बरकरार रहती हैं व होंठ भी नहीं फटते हैं।

एड़ियों में दरारें पड़ना : शुष्क हवा के कारण पैंरों की त्वचा कड़ी व दरारयुक्त हो जाती है। इन्हें सुन्दर व कोमल बनाये रखने के लिए एक टब में ४० से ५० डिग्री सेण्टीग्रेड गर्म पानी लेकर उसमें पाँव डालकर आराम से बैठ जायें। लगभग १५–२० मिनट पश्चात नरम पड़ी त्वचा को थोड़ा मलकर कड़े स्पंज से साफ कर लें। अधिक परेशानी में थोड़े से दूध में सेब उबालिये और प्रतिदिन ३० मिनट के लिये इसका लेप एड़ियो पर लगाकर पट्टी बांध लीजिये। इस क्रिया से दरारें शीघ्र ही भर जायेंगी। इसके अतिरिक्त ५० ग्राम मोम और २५ ग्राम सरसों के तेल को गरम कर इस मिश्रण को एड़ियों पर लगाने से भी लाभ होता है।

हाथ फटना : शीत ऋतु में हाथों को फटने से बचाने के लिये हाथों में मलाई या नींबू व ग्लिसरीन अथवा गुलाबजल और नींबू का मिश्रण लगाने से हाथों में कोमलता आती है। एक चम्मच बादाम का तेल, शहद और अण्डे की जर्दी के मिश्रण को हाथों पर मलें और एक घण्टे बाद सिरका मिले पानी से हाथ धो लें। इससे भी हाथ मुलायम और कांतियुक्त हो जाते हैं। सरसों या जैतून के तेल की मालिश भी एक कारगर उपाय है।

त्वचा का कालापन : इस समस्या के लिये बहुत हद तक सूर्य की किरणें जिम्मेदार हैं अतः जहाँ तक संभव हो धूप में बैठने की लालच से बचें। मुल्तानी मिट्टी, चन्दन का बुरादा, गुलाबजल, नींबू, शहद, ग्लिसरीन मिलाकर लेप तैयार कर लें। इसे लगाने से पूर्व किसी अच्छी क्रीम या जैतून के तेल से मालिश करें। तत्पश्चात इस लेप का इस्तेमाल करें और सूखने पर गुनगुने पानी से मुंह साफ कर लें। बादाम व जौ का आटा, मलाई और नारियल के तेल के लेप को चेहरे व गर्दन पर मलने से त्वचा में निखार आता है। बादाम, गुलाब के फूल, जायफल व चिरौंजी को रात में दूध में भिगो दें और सुबह पीसकर उबटन बनायें। इससे त्वचा स्वस्थ, सुन्दर व लावण्ययुक्त हो जाती है। शुष्क हवाओं से काले पड़े कुहनी व घुटनों पर नींबू का छिलका रगड़ने से उनमें चमक आती है।

मौसम के प्रभाव को ध्यान में रखते हुये आहार में भी परिवर्तन अति आवश्यक है। विटामिन 'सी' त्वचा को सुन्दर और स्वस्थ रखता है। अतः आँवला, संतरा, मुसंबी, नींबू, टमाटर आदि का अधिकाधिक प्रयोग करना चाहिये। हरी सब्जियाँ और मेवे का सेवन अति उत्तम होता है। सुन्दर, कोमल और निखरी त्वचा के लिये सबसे महत्वपूर्ण है कि अधिक से अधिक मात्रा में पानी पिया जाये।

मुख सौन्दर्य का दुखड़ा : मुहांसे

किशोरावस्था के अंत और युवावस्था के आरंभ में शरीर में हारमोनल परिवर्तन तीव्र गति से होते हैं। एक आम धारणा है कि मुहांसे भी इसी अवस्था में निकलते हैं जो खान-पान की अनियमितता से होते हैं परन्तु हाल ही में हुए शोधकार्यों से ज्ञात हुआ है कि यह सभी आयुवर्गों की समस्या है

मुहांसे प्रायः हर युवक-युवती को परेशान करते हैं, जिनसे चेहरा खराब लगने लगता है। यह समस्या वास्तव में इतनी गंभीर नहीं है जितनी कि समझी जाती है। मुहांसों से छुटकारा मिल सकता है यदि कुछ सावधानियां बरती जायें और इनके कारणों को जानकर इनका सही इलाज किया जाये।

रोग के कारण

त्वचा का साफ न रहना मुहांसों का एक कारण है। साधारणतया महिलाएं जब मेकअप करके बाहर जाती हैं तब वापस आकर उसे साफ नहीं करतीं, इससे सौंदर्य प्रसाधन त्वचा को हानि पहुंचाते हैं और परिणामस्वरुप मुहांसे निकल आते हैं। किशोरावस्था में तैलीय स्राव अधिक होने लगता है जो त्वचा के पोरों को बन्द कर देता है जिन्हे साफ न करने से मुहांसे हो आते हैं। सिर में यदि रुसी हो तो खुजाने पर वह त्वचा पर गिर जाती है और रोमछिद्रों में चली जाती है जिससे मुहांसे निकल आते हैं। पेट खराब रहने पर भी मुहांसे जल्दी होते हैं। सही ढंग से भोजन न करने, गंदे हाथों से भोजन करने, खाद्य पदार्थों को भली-भांति साफ करके न पकाने से पेट खराब रहता है। प्रायः कब्ज रहने से भी मुहांसे हो जाते हैं। मुहांसों का सही कारण ढूंढकर उस कारण को दूर करने से वे स्वतः ही खत्म हो जाते हैं।

रोग से बचाव

दिन में पांच छह बार ठंडे पानी से मुंह धोना चाहिये। हफ्ते में एक बार भाप लेनी चाहिये। इसके लिए गरम पानी करके बाल्टी में डाल लें तत्पश्चात् सिर पर तौलिया रखें। चेहरा बाल्टी से एक डेढ़ फुट ऊपर होना चाहिये। बीच-बीच में तौलिया हटाकर चेहरा बाहर निकालना चाहिये। ऐसा १५-२० मिनट तक करें। पेट साफ रखना चाहिये और कब्ज नहीं होने देना चाहिये। इसके लिये तैलीय, मिर्च-मसालेदार एवं खट्टी चाजों का सेवन कम करें, पानी खूब पियें (दिनभर में कम से कम तीन लीटर) ताजे फल और सब्जियों का रस अधिक पियें। कच्ची सलाद, मूली, गाजर, चुक्रंदर, टमाटर अधिक

मुहांसों से छुटकारा पाने के लिए जीवनीय उपचार करो

मात्रा में खायें। रायता, लस्सी, जलजीरा, नींबू आदि का सेवन अधिक करें। खाना समय पर लें और पौष्टिक खायें। किसी भी प्रकार की उत्तेजना एवं कामुक चिन्तन से बचना चाहिये। घटिया किस्म के सौन्दर्य प्रसाधनों का प्रयोग न करें।

रोग का उपचार

मुहांसों के इलाज के लिये मरीज को बहुत धैर्य की आवश्यकता होती है। इसके उपचार के लिये ऐसी चीजों का प्रयोग करना चाहिये जो आसानी से उपलब्ध हो सकें।

- नीम की जड़ को पीसकर लगाने से मुहांसे जल्दी ठीक हो जाते हैं।
- जामुन की गुठली के भीतरी भाग को पानी में घिसकर मुहांसों पर लगाने से काफी लाभ होता है।
- अजवाइन का चूर्ण तथा दही बराबर मात्रा में लेकर रात को मुंह पर लगायें, सुबह गुनगुने पानी से साफ कर लें।
- पके हुये पपीते का टुकड़ा चेहरे पर रगड़ने से मुहांसे दूर हो जाते हैं।
- चावल के आटे में दही मिलाकर रुई से मुहांसों पर मलें।
- काली मिट्टी का लेप लगायें जो त्वचा की अतिरिक्त चिकनाई को दूर करती है।
- सुबह के समय ओस की बूंदे ड्रापर में भरकर मुहांसों पर लगाये।
- करेले के छिलके को एक कप पानी में उबालें, इसके पानी में दो चम्मच सरसों का तेल और थोड़ा बेसन मिलाकर चेहरे पर लगायें। आधे घंटे पश्चात् गुलाबजल, ग्लिसरीन और नींबू के मिश्रण को रुई की सहायता से चेहरे पर लगायें। इससे चेहरा स्निग्ध हो जाता है। करेले के छिलके एंटीसेप्टिक का काम करते हैं।
- छुहारे की गुठली को सिरके के साथ पीसकर लेप बना लीजिये। इसे चेहरे पर लगाकर कुछ देर छोड़ दें फिर चेहरा धो दीजिये।
- आधा चम्मच चंदन, चुटकी भर हल्दी, एक चम्मच जौ का आटा लेकर नींबू के रस में घोल बनायें। इसे लगाने से कुछ ही दिन में काफी फर्कपड़ जाता है। जौ के आटे में विटामिन बी होता है जो त्वचा को रोगमुक्त करता है।
- यदि मुहांसे बड़े-बड़े व अधिक संख्या में हो तो सिरके और पिसी कलौंजी के मिश्रण को चेहरे पर लगाकर सो जायें और सुबह धो डालें।
- मुहांसे के दाग धब्बे जो चेहरे के सौन्दर्य पर कुप्रभाव डालते हैं उन्हें दूर करने के लिये खीरे का रस लगाना चाहिये।
- अनार के छिलकों को पीसकर लगाने से भी काफी फायदा होता है।
- भुना हुआ सुहागा, सफेद चंदन के साथ पानी में घिसकर प्रतिदिन लगाना भी उपयोगी सिद्ध होता है।

इस प्रकार इन उपायों द्वारा मुहांसों से छुटकारा पा सकते हैं किन्तु जब अधिक मुहांसे निकल आएं और चेहरा खुरदुरा हो जाये तो ऐसे में डॉक्टर की सलाह अवश्य लेनी चाहिये।

श्वेतकुष्ठ या सफेद दाग

वैद्य ब्रजबिहारी मिश्र, लखनऊ

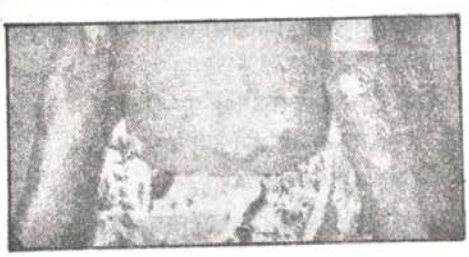
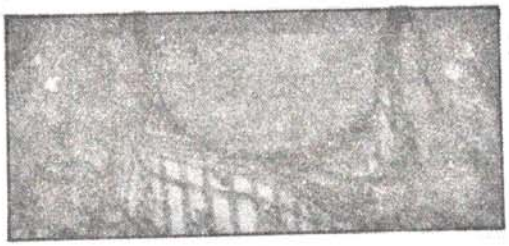

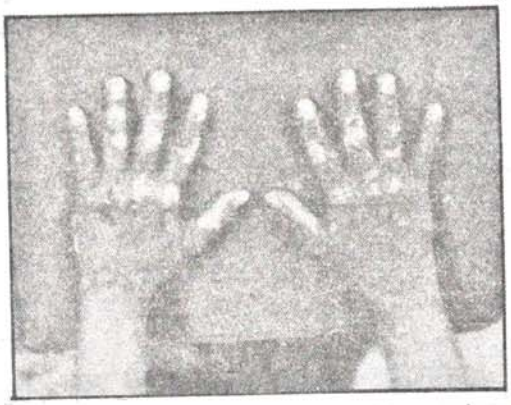

देह को कुत्सित करने वाले रोग को आयुर्वेद में कुष्ठ कहा गया है (कुष्णाति वपुः इति कुष्ठम)। श्वेतकुष्ठ में देह की कांति, लावण्य, सौन्दर्य सब नष्ट हो जाता है और रोगी विद्रूप दिखलाई पड़ता है। यद्यपि यच्छ्वितत्कुण्ठम् जिससे कुछ बहे, रक्त पूय आदि के रुप में निकले, उसे कुष्ठ कहते हैं। इस परिभाषा के अन्तर्गत वर्णित आयुर्वेद के १८ प्रकार के कुष्ठों में श्वेत कुष्ठ नहीं आता क्योंकि इस रोग में दागों से कोई चीज बहती या निकलंती नहीं है फिर भी उत्पादक कारण कुष्ठ के समान होने के कारण आयुर्वेद में इसे भी कुष्ठ संज्ञा से सम्बोधित किया गया है।

उत्पादक कारण

जो लोग विरोधी अन्नपान जैसे दूध के साथ मछली का सेवन, मांस और दूध का एक साथ सेवन, चाय, काफी उष्णपेय के साथ शीत पेय या आइस्क्रीम का सेवन, बड़हल को उड़द के साथ मिलाकर खाना, कबूतर को सरसों के तेल में भून कर खाना, राख और धूल मिला भोजन, गरम शहद खाना, मूली, लहसुन, प्याज, राई, तुलसी दूध के साथ सेवन करते हैं, वमन तथा मल मूत्र के वेगों को रोकते हैं, भोजन मात्रा से अधिक करके सन्ताप या व्यायाम का सेवन करते हैं, शीत, उष्ण, लंघन (उपवास) भोजन के क्रम को त्यागकर सेवन करते हैं अर्थात् अविधि रुप से इनका सेवन करते हैं, धूप, श्रम और भय से पीड़ित होकर शीघ्र ही शीतल जल का सेवन करते हैं, भोजन के न पचने पर भी भोजन कर लेते हैं, पंचकर्मों का मिथ्या आचरण करते हैं, नवीन अन्न, दही, मछली, लवण तथा अम्लपदार्थों का अधिक सेवन करते हैं, उड़द, मूली, मिष्ठान्न, गुड़, दूध, तिल का तेल अधिक सेवन करते हैं, भोजन के पचने के पूर्व मैथुन करते हैं व दिन में सोते हैं, उनके वातादिक तीनों दोष कुपित होकर त्वचा, रक्त, मांस तथा लसिका को दूषित कर कुष्ठ एवं श्वेत कुष्ठ रोग उत्पन्न करते हैं।

महर्षि चरक के उनुसार असत्य भाषण, किये हुये उपकार को न मानना (कृतघ्नता) देवताओं की निन्दा करना, गुरुजनों का अपमान करना, पापकर्मों में रत रहना, पूर्वजन्म में किया गया दुष्कृत तथा परस्पर विरुद्ध, संयोग विरुद्ध, संस्कार विरुद्ध, देशकाल मात्रा विरुद्ध भोजन का सेवन किलास (श्वेत कुष्ठ) होने का कारण है। प्रायः सभी कुष्ठ त्रिदोषज (वात, पित्त, कफ से उत्पन्न) होते हैं किन्तु श्वेत कुष्ठ कभी–कभी एक या दो दोषों से भी हो जाता है। संक्रामक न होने से १८ प्रकार के कुष्ठों के अन्तर्गत यह नहीं आता। यह वातादि तीनों दोषों से रक्त, मांस और मेद धातु में आश्रित रह कर उत्पन्न होता है। वातिक, पैत्तिक एवं कफज भेद से यह तीन प्रकार का होता है। वातिक किलास रुक्ष एवं लाल रंग का, पैत्तिक कमलदल के समान या ताम्रवर्ण का लोमों (रोयों) को नष्ट करने वाला होता है। कफज किलास श्वेत वर्ण का भारी और कण्डू युक्त होता है।

श्वित्र में शरीरगत धातुओं का नाश नहीं होता केवल त्वचा में ही विकार पाया जाता है इसीलिये आचार्य सुश्रुत "त्वग्गतमेव किलासम्" कहकर इसे त्वचा को विकृत करने वाला ही रोग मानते हैं।

क्या भ्राजक पित्त मेलेनिन है?

नव्य मतानुसार त्वचा के बाह्य स्तर में मेलेनिन नामक एक रंग द्रव्य रहता है। यही त्वचा को रंग प्रदान करता है। उष्ण प्रदेश के निवासियों की त्वचा में कालिमा अधिक होने का कारण मेलेनिन की प्रचुरता ही है। इसी की कमी जब शरीर में हो जाती है तब त्वचा का रंग सफेद हो जाता है। आयुर्वेद के अनुसार शरीर की ऊष्मा का नियन्त्रण करना तथा त्वचा को कान्ति प्रदान करना भ्राजक पित्त का कार्य है। श्वेत कुष्ठ में विशेष रुप से कान्ति का ह्रास होता है। कान्ति नष्ट होने से शरीर की मृदुता नष्ट हो जाती है, शरीर में सफेद धब्बे पड़ने लगते हैं। अतः मेलेनिन और भ्राजकपित्त कार्यदृष्टि से एक ही तत्व प्रतीत होते हैं।

श्वेत कुष्ठ की चिकित्सा

आयुर्वेद के अनुसार सभी रोगों का सर्वप्रथम उपचार 'निदान परिवर्जन' अर्थात रोगोत्पादक

हेतुओं का त्याग होता है। किलास के उत्पादक हेतुओं में क्रिद्ध आहार–विहारादि के अतिरिक्त इस जन्म के तथा जन्मान्तरीय पापकर्मों को रोगोत्पादक बतलाया गया है। अतः हिताहार–विहार के साथ–साथ पुण्य कर्मों के द्वारा पापकर्मों के निवारण का उपाय करना चाहिए। सत्यभाषण एवं सत्याचरण तथा आयुर्वेदीय सद्वृत्त के पालन से, इस रोग में बड़ा लाभ होता है।

जिस पुरुष के पापों का नाश हो जाता है उसे विरेचन तथा संशोधन द्रव्यों से शुद्ध करके यह रोग अच्छा किया जा सकता है। अथर्ववेद में हरिद्रा (हल्दी) श्यामा तथा रामा तुलसी से प्रार्थना की गई है कि वह श्वेतकुष्ठ (किलास) तथा श्वेत केशों को रंग दे। आयुर्वेद में पारद को विशेषरुप से कुष्ठघ्न बताया गया है (विशेषात्कुष्ठहा प्रोक्तः) श्वेतकुष्ठ को तो यह चुटकी बजाते अच्छा करता है "किलसन्मात्राच्चहरति पापरुजम" वे पारदीय योग, जिन्हें श्वित्र निवारण में मैं पिछले ३५ वर्षों से अपनी चिकित्सा में प्रयोग कर रहा हूं उनमें शशांक रस, किलासजेता रस, उदयादित्य रस, सर्वसिद्धिप्रद रस, विजयानन्द रस, कासीसबद्ध रस आदि प्रमुख हैं। साधारण प्रयास से सर्वसिद्धिप्रद रस को छोड़कर सभी निर्मित हो जाते हैं। शास्त्रीय विधि से इनका प्रयोग करने पर लाभ होता है। पारद जितना विशुद्ध होगा रस उतना ही प्रभावशाली होगा।

श्वेत कुष्ठ पर आरोग्यवर्धिनी ४ गोली प्रातः ४ गोली रात्रि को जल से देने पर अच्छा लाभ होता है। रसमाणिक्य १०० मि० ग्रा०, गंधक रसायन २०० मि० ग्रा०, आरोग्यवर्धिनी ४०० मि० ग्रा० सम्मिलित एक मात्रा प्रातः सायं मधु से सेवन करें। भोजन के पश्चात् २५ मि० ली० खदिरारिष्ट, २५ मि० ली० सारिवाद्यासव तथा ५० मि० ली० जलं मिलाकर पिये तथा दागों में गोमूत्र से पीसकर बाकुची का लेप करा कर १० मिनट धूप में बैठावें इससे कुछ ही दिनों में श्वेतकुष्ठ के रंग में परिवर्तन प्रारम्भ हो जाता है तथा निरन्तर सेवन से पूर्णलाभ होते देखा गया है।

बाकुची एक ग्राम, काला तिल ३ ग्राम कूटकर एक मात्रा बना जल से प्रातः सायं लेने से श्वित्ररोग अच्छे होते हैं।

श्वित्र की धूम्रपान चिकित्सा – चरक संहिता के सूत्र स्थान में वर्णित वैरेचनिक धूम्रपान के सेवन से कृमिरोग, कुष्ठरोग, तथा उत्तमांग (कण्ठ से ऊपरी भाग के सफेद दाग) का किलास अवश्य अच्छा होता है। मेरे स्व० पिता कविराज पं. अवधविहारी मिश्र ने अपराजिता बीज के धूम्रपान से श्वित्र रोगियों को अच्छा किया था। धूम्रपान के बाद रोगी को गोघृत पीना आवश्यक है। इससे धूम्रपान का दुष्प्रभाव नष्ट हो जाता है।

अनुभूत तैल

महामरिचादि तैल, चालमोंगरा तैल तथा बाकुची तैल समान भाग लेकर मिला कर रख लें। इस तेल को दागों में अच्छी प्रकार लगाने से शीघ्र लाभ होता है।

लेप – श्वित्र में बाह्य प्रयोगार्थ अंजीर की जड़ की छाल, कठगूलर की छाल, चीत की जड़ की छाल, हरा कौशीश, गंधक, मैनसिल सब समान भाग कूट पीस कर रख लें। आवश्यकतानुसार उपर्युक्त चूर्ण को गोमूत्र या जल से पीस कर दागों में लेप करें। इसके प्रयोग से सफेददाग में शीघ्र लाभ होता है।

जनता की गलत धारणा

श्वेत कुष्ठ के विषय में जनता की गलत धारणा बन गयी है कि यह अच्छा नहीं होता। कुछ लोग तो यहां तक कहते हैं कि यह रोग चिकित्सा कराने से और बढ़ता है अतः इसकी चिकित्सा ही नहीं करानी चाहिए। आयुर्वेद में इसे दुःसाध्य अवश्य कहा गया है, असाध्य नहीं। आयुर्वेदीय रस चिकित्सा इसे अच्छा करने में पूर्ण सक्षम है।

साध्य श्वेत कुष्ठ – जिसके बाल सफेद न हुए हों, जो थोड़े हों, दाग एक दूसरे से मिले हुए न हों, नवीन हो, आग से जलने से उत्पन्न न हुआ हो वह श्वेतकुष्ठ (किलास) साध्य अर्थात् अच्छा होने योग्य है।

असाध्य श्वेत कुष्ठ – गुप्त स्थान, हाथ, पैर के तलुवे और ओष्ठ में होने वाले नवीन किलास को भी असाध्य कहा गया है।

श्वेत कुष्ठ में पथ्य – लघु अन्न, तिक्त रस वाले शाक, चना, जौ, सत्तू, मूंग, अरहर की दाल, गेहूं, पुराना धान्य, जंगल पशु पक्षियों का मांस, परवर का शाक श्वेतकुष्ठ में हितकारी है।

श्वेत कुष्ठ में अपथ्य – भारी अन्न, अम्ल रस, दूध, दही, मांस, मछली, गुड़, तिल, नमक, लहसुन, प्याज, गरम मसालों का सेवन श्वेत कुष्ठ में हानिकारक है।

श्वेतकुष्ठ को अच्छा करने के लिये गोमूत्र सर्वश्रेष्ठ औषधि है (गोमूत्रं परमौषधम)

श्वेत कुष्ठ नाशक तैल

घटक द्रव्य – हरिद्रा एक भाग, बाकुची दो भाग, काला तिल चार भाग।

निर्माण विधि

हल्दी के छोटे–छोटे टुकड़े कर लें। बाकुची तथा काले तिल तीनोंको मिला कर थोड़ा कूट लें फिर इन्हें काँच की लम्बी गरदन वाली शीशी में ऊपर से दो इन्च छोड़कर भर दें और बोतल के मुंख को झाड़ू की मजबूत नवीन सीकों से भरकर बन्द कर दें। सींके बोतल के मुख से दो इन्च बाहर तक निकली रहें। बोतल को सातबार कपड़मिट्टी लगा कर सुखा लें पश्चात् पाताल यन्त्र के द्वारा ऊपर से अग्नि देकर तैल निकाल लें।

मात्रा एंव उपयोग

इस तैल का हम बाह्य एवं आभ्यन्तर दोनों रुपों में प्रयोग करते हैं। आभ्यन्तर सेवन हेतु ६ बूंद से लेकर १२ बूंद तक खाली कैपसूल में भरकर या बताशे में रखकर जल से प्रातः सायं रोगी को सेवन कराते हैं। बाह्य प्रयोग में इसे दागों में लगाकर १० से १५ मिनट तक धूप में रोगी को बैठाते हैं। दागों में अच्छी प्रकार मलने से भी बड़ा लाभ होता है। हाथ की गादी, पैर के तलवे, होंठ आदि असाध्य स्थानों के दाग भी इसके लगाने से अच्छे होते देखे गए हैं।

सामान्य चर्म रोग और उनसे बचाव

डा. संगीता सिंह, डा. धर्मराज सिंह, लखनऊ

वातावरण में अधिक गर्मी और नमी होने पर त्वचा संबंधी अनेक रोग जैसे दाद, खाज, खुजली, फोड़ा फुन्सी आदि होने लगते हैं। वातावरण में उमस व नमी होने के कारण शरीर का पसीना ठीक से नहीं सूख पाता और त्वचा प्रायः गीली रहती है। इसी लिए इस समय विभिन्न प्रकार के चर्म रोग बहुतायत से होने लगते हैं।

बरसात के मौसम में प्रायः चारों ओर गन्दगी फैल जाती है तथा नदियों का पानी अत्यधिक प्रदूषित हो जाता है अनेक प्रकार के कीड़े, मकोड़े, जीव, जन्तु, मच्छर, मक्खियां, भी अत्यधिक मात्रा में उत्पन्न हो जाते हैं। जिनके काटने से भी अनेक प्रकार के त्वचा संबंधी रोग उत्पन्न हो जाते हैं। साथ ही मटमैले तालाब या नदी में स्नान करने से भी चर्म रोग हो सकते हैं। वर्षा ऋतु के प्रारम्भ में होने वाली वर्षा का पानी कुछ अम्लीय होता है जिससे इस पानी में भीगने या नहाने स प्रायः त्वचा के ऊपर लाल चकत्ते पड़ जाते हैं। जिसे हम आम बोल चाल की भाषा में पित्ती उछलना कहते हैं। गीले जांघिया बनियान भली भांति सूख नहीं पाते इस कारण त्वचा के ऊपर विभिन्न प्रकार के संक्रमण हो जाते हैं।

विभिन्न प्रकार के त्वचा संबंधी रोगों से बचाव के लिए निम्न उपाय अपनाने चाहिए–

स्नान करने के बाद शरीर को अच्छी तरह सूखे तौलिये से पोंछ कर सुखा लेना चाहिए और शरीर के पूरी तरह से सूख जाने पर ही कपड़े पहनने चाहिए।

प्रायः यह देखा जाता है कि महिलायें स्नानघर में ही शरीर को अच्छी तरह से सुखाये बिना कपड़े पहन लेती हैं और इसी कारण महिलाओं को चर्मरोग अधिक होते हैं।

बालों को सप्ताह में कम से कम दो बार बेसन या रीठा, शिकाकाई तथा आँवले के घोल से अथवा अन्य किसी शैंपू से भली प्रकार से धोना चाहिए। बालों को धोने के बाद उन्हें धूप में या पंखे के नीचे या ड्रायर से भलीभांति सुखाने के बाद ही उनमें तेल लगायें अथवा बांधे।

अच्छी तरह से सूखे एवं इस्त्री किए हुए कपड़ों को ही पहनना चाहिए।

जिन्हें पहले से ही खुजली इत्यादि चर्म रोग हों वे अपने कपड़ों को सप्ताह में कम से कम दो बार खौलते हुए पानी में आधे घंटे तक भिगों कर धोयें और उन्हें अच्छी तरह सुखा कर ही पहनें। उसके बाद जननांगों एवं शरीर के अंदरूनी बाल वाले भागों पर बोरिक ऐसिड, सैलिसिलिक ऐसिड तथा जिंक आक्साइडयुक्त पाउडर का छिड़काव भली भांति करना चाहिए।

परिवार में यदि किसी को त्वचा संबंधी रोग हो तो उसके कपड़े, तौलिया, कंघी व साबुन का प्रयोग दूसरों को नहीं करना चाहिए। परिवार में यदि एक से अधिक सदस्य खुजली से पीड़ित हों तो सभी का इलाज एक साथ करना चाहिए।

इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि छोटे बच्चे देर तक पानी में न भीगें अथवा गीले कपड़ों में देर तक न रहें

यथासम्भव हल्के सफेद एवं सूती कपड़े ही पहनने चाहिए। बरसात के मौसम में यथासम्भव चप्पल अथवा खुले मुंह वाली सैंडिल या बरसाती जूतों का प्रयोग करना चाहिए। यदि जूता एवं मोजा पहनना आवश्यक हो तो भली भांति सूखे हुए सूती मोजों का इस्तेमाल करें तथा मोजों के अन्दर बोरिक पाउडर का छिड़काव करलें।

इसके बावजूद यदि चर्म रोग हों तो उनका निम्नलिखित घरेलू उपचार करना चाहिए। यदि एक सप्ताह के अन्दर लाभ न हों तो किसी चर्म रोग विशेषज्ञ की सलाह लें।

- साधारण चर्म रोगों ऐलर्जी अथवा झांई इत्यादि में एक चम्मच हल्दी के चूर्ण में एक चम्मच मक्खन या मलाई तथा आधे नीबू का रस मिला कर लगाने से लाभ होता है।
- आंवले का चूर्ण एक चम्मच, एक चम्मच हल्दी का चूर्ण मधु (शहद) में मिलाकर दिन में दो बार, दो से चार सप्ताह तक खाने से साधारण चर्म रोग नष्ट हो जाते हैं तथा त्वचा सुन्दर हो जाती है।
- लहसुन को पीसकर लेप करने से दाद एवं विभिन्न प्रकार के चर्म रोगों में विशेषकर फफूंद संक्रमण में लाभ होता है। किन्तु यह लेप सामान्यतः दस से पन्द्रह मिनट तक ही लगाना चाहिए अथवा जैसे ही अधिक जलन महसूस होने लगे लेप को साधारण साफ पानी से धो दें। इस प्रकार पन्द्रह बीस दिन में रोग ठीक हो जाता है।
- दाद जो विशेषकर जननांगों के ऊपर या निकट पाया जाता है इसमें लाल रंग के गोल चकत्ते पड़ जाते हैं। इसमें दाद के स्थान को नीम की पत्ती के रस से साफ करके चकवड़ (दादमार) के बीजों को पानी में पीसकर लेप करना चाहिए। यह प्रयोग पन्द्रह से बीस दिन तक करने से लाभ होता है।
- फुन्सियां होने पर नीम की पत्तियों को पानी में उबाल कर नहाना चाहिए। एक चम्मच हल्दी चूर्ण, एक चम्मच नीम की छाल के चूर्ण को एक चम्मच सरसों या नारियल के तेल में मिलाकर लगाना तथा नीम के बीज का तेल आधा चम्मच बताशे में रखकर प्रातः सांय खिलाने से फुन्सियां ठीक हो जाती हैं।
- खाज में पीले कनेर की पत्तियों को ताजा पीसकर उसमें एक चुटकी सेंधा नमक मिलाकर आधा घंटा लेप करें फिर साफ पानी से धो दें। दिन में दो बार यह लेप लगाने से लगभग एक माह के भीतर यह रोग ठीक हो जाता है।
- प्रायः युवाओं के चेहरे पर मुंहासे निकल आते हैं। इसके उपचार के लिए सर्वप्रथम चेहरे को हल्के गुनगुने जल से धोकर भलीभांति सुखा लें फिर धुली मसूर की दाल को नीम की पत्तियों के साथ पीसकर आधा घंटा तक लेप करें। धीरे–धीरे एक माह के भीतर मुहांसे नष्ट हो जाएगें।

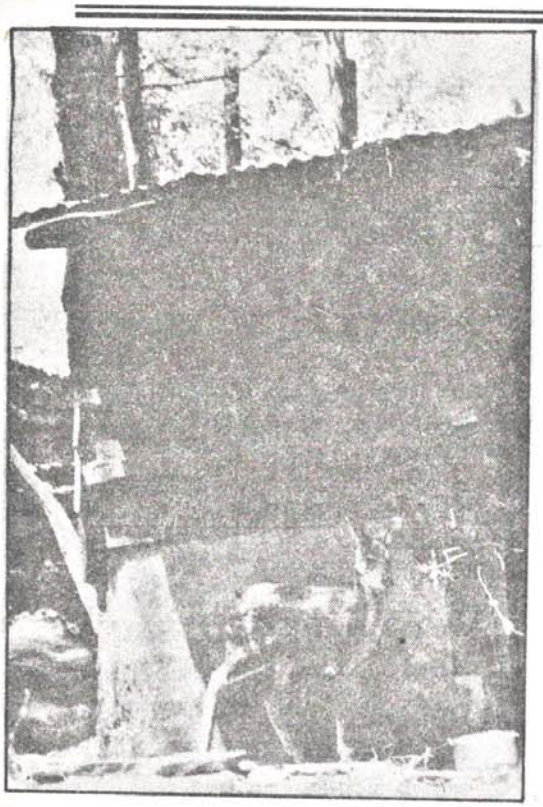

सौन्दर्य प्रसाधन कस्तूरी

वैद्य मायाराम उनियाल, रानीखेत

कस्तूरी कुण्डल बसै, मृग ढूढ़े वन मांहि।
ऐसे घट-घट राम हैं, दुनिया देखत नाहिं।।
कबीरदास

संस्कृत साहित्य में कस्तूरी का उपयोग दौर्गन्ध्यहर, वर्ण्य, सुगन्धित व सौन्दर्य प्रसाधन के रूप में वर्णित है। आयुर्वेद संहिता ग्रन्थों में भी कस्तूरी का उपयोग बाजीकरण (सेक्सटॉनिक) वात-कफशामक, मस्तिष्क नाड़ी बल्य, हृद्य, बल्य, शीतांगसन्निपात, कम्पवात एवं उन्माद, अपस्मार में किया जाता है। यह कस्तूरी नर कस्तूरा मृग के मुष्कप्रदेश में स्थित नाभि (नाफा) से प्राप्त की जाती है। नर कस्तूरा मृग से कस्तूरी प्राप्त करने के लिये उसका अवैध रूप से शिकार किया जाता है, जिसके कारण दिन-प्रति-दिन हिमालय में इन मृगों की संख्या घटती जा रही है। इन दुर्लभ मृगों के अनैतिक आखेट के कारण प्राकृतिक स्त्रोतों के दोहन के साथ-साथ पर्यावरण पर भी असर पड़ता जा रहा है। अब भारत सरकार के केन्द्रीय आयुर्वेद एवं सिद्ध अनुसन्धान परिषद नई दिल्ली ने कस्तूरा मृगों के प्रजनन एवं कस्तूरा मृग को बिना मारे कस्तूरी प्राप्त करने के तरीकों का पता लगाने हेतु एक योजना तैयार की है। इस योजना के तहत वर्ष १९७७ से रानीखेत संयुक्त अनुसंधानीय केन्द्र के अधीनस्थ जिला - अल्मोड़ा महरूड़ी (धरमघर) में २२०० मीटर की ऊँचाई पर कस्तूरा मृग प्रजनन फार्म कार्यरत है। इस समय फार्म में लगभग नर एवं मादा मृगों की संख्या ३० के आस-पास है। केन्द्र में इन मृगों को पालतू पशुओं की तरह रखने के उपायों के साथ-साथ उनके रहन-सहन, स्वभाव, प्रजनन, चारा आदि विषयों का भी गहन अध्ययन होता है। मृगों को मारे बिना कस्तूरी प्राप्त करने के नवीन तकनीकी उपायों का भी पता लगाया जा रहा है। आशा है कि निकट भविष्य में कारगर परिणाम मिल सकेंगे। भारत के अलावा चीन भी कस्तूरा प्रजनन केन्द्रों की स्थापना के साथ-साथ कस्तूरी प्राप्त करने की नवीन खोजों में अग्रसर है। भारत में इस समय मुख्य रूप से तीन कस्तूरा प्रजनन केन्द्र कार्यरत हैं।

- हिमाचल प्रदेश में कूफरी में कस्तूरा फार्म
- चमोली गढ़वाल में कांचलाखर्क में कस्तूरा फार्म
- अल्मोड़ा जिले में महरूड़ी (धरमघर) केन्द्र में सी.सी.आर.ए. एस. का कस्तूरा प्रजनन फार्म।

महरूड़ी कस्तूरा फार्म उत्तर प्रदेश के पर्यटक विभाग के मानचित्र में अंकित है। देहली से महरूड़ी कस्तूरा फार्म की दूरी लगभग ५१० किलोमीटर है। मृगों की सुरक्षा दृष्टि से यह स्थान सुरक्षित घोषित है। फार्म को देखने के लिये निदेशक केन्द्रीय आयुर्वेद एवं सिद्ध अनुसन्धान परिषद, नई दिल्ली से अनुमति लेनी पड़ती है।

कस्तूरा मृग :- यह हिरण अत्यन्त सशंकित जाति का वन्य प्राणी है जो कि मध्य हिमालय में उत्तराखण्ड हिमालय, काश्मीर, आसाम, नैपाल, भूटान, तिब्बत, चीन, तथा रूस आदि देशों के एलपाइन क्षेत्र में दस हजार फीट की ऊँचाई से लेकर चौदह हजार फीट की ऊँचाई तक पाया जाता है। मृग सुन्दर, मनोहर होता है। यह लगभग २० इंच ऊँचा, बाल घने, लम्बे, धूसर वर्ण के व धब्बेदार होते हैं। पूंछ बहुत छोटी, बालों से ढकी रहती है। पिछले पैर आगे के पैरों की अपेक्षा अधिक लम्बे एवं खुर नुकीले होते हैं। सींग रहित एवं कान खड़े होते हैं। मुख के निचले जबड़े से २ से ३ इंच लम्बे नुकीले दाँत बाहर को निकले रहते हैं। मादा मृग के दाँत बाहर को नहीं होते हैं। लिंगेन्द्रिय मणि को आवृत करने वाली त्वचा के प्रवर्धन से एक थैलीनुमा जिसे नाफा कहते हैं, होती है, उसमें विशेष प्रकार की सुगन्ध लिये हुए तरल व रवेदार पदार्थ मृगमद का नाम ही कस्तूरी है। यह नाफा शिश्नावरण एवं नाभि के मध्य में स्थित होता है, जो कि छिद्रयुक्त एवं सघन धूसरवर्ण के बालों से ढका रहता है। हिरण की युवावस्था के मदकाल में यह सुगन्धित मदस्राव बनना प्रारम्भ हो जाता है। स्वस्थ एवं कामातुर मृग से २० से ३० ग्राम तक कस्तूरी प्राप्त की जा सकती है। बाल, वृद्ध, क्षीण एवं अस्वस्थ मृग से कम मात्रा में अल्पगन्धवाली कस्तूरी प्राप्त होती है। यथा -

मृगनाभी मृगमदो वेध्यमुख्यं मृगाण्डजम्।
कामातुरे च तरुणी कस्तूरी बहुलपरिमला
भवति।। *अ.हृ.कोष।।*

कस्तूरी की पहचान :- नैपाली कस्तूरी नीलवर्ण की, कामरूपी (आसाम) कस्तूरी कृष्णाभ वर्ण की सर्वश्रेष्ठ होती है। काश्मीर से मिलने वाली कस्तूरी कम गुणों वाली मानी जाती है। असली कस्तूरी रक्ताभ, श्याम वर्ण की पिंगलाभ, केवड़े के समान तीक्ष्ण, सुगन्धयुक्त रवेदार होती है। इसमें उग्रसुगन्धित तेल मशकोन पाया जाता है। वर्तमान में रासायनिक विधि से नकली कस्तूरी तैयार की जाती है। जिसकी सुगन्ध प्राकृतिक कस्तूरी से भिन्न एवं गुणहीन होती है। यथा

या गन्धं केतकीनां वहति भृशतरं वर्णतः
पिंगलाभा
स्वादे तिक्ता कटूष्णा, लघु परितुलिता
मर्दिता चिक्कणा स्यात्।
दग्धा नो यादि भस्मं, चिमि चिमि कुरुते
चर्मगन्धा हुताशे
सा शुद्धा शोभनीया राजयोग्या प्रदिष्टा।।
कै.नि.

शेष पृष्ठ ५३ पर

ऐलर्जी या प्रत्यूर्जता

डॉ. दिनेश सिंह, लखनऊ

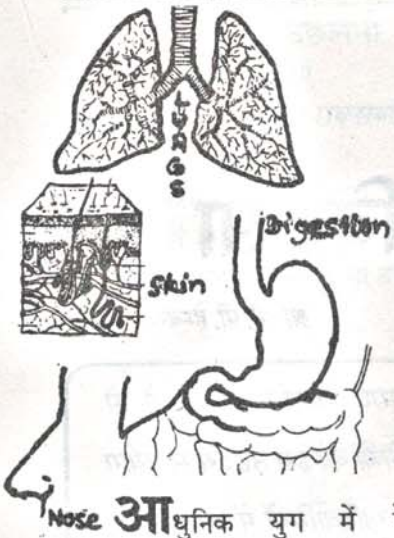

आधुनिक युग में ऐलर्जी एक सुपरिचित बीमारी का नाम है। किसी को धुएँ से ऐलर्जी होती है किसी को इत्र से, किसी को सिन्थेटिक कपड़ों से और किसी को खान–पान से। प्रयोगों द्वारा यह प्रमाणित हो चुका है कि ऐलर्जी जठराग्नि के मन्द होने से उत्पन्न होती है। आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के अनुसार यदि ऐसे द्रव्य का सेवन किया जाए जो शरीर के लिए असात्म्य या प्रतिकूल हो तो शरीर के अनुकूल न होने के कारण रक्त में पहुंचने के पश्चात् वह अपनी प्रतिक्रिया उत्पन्न करता है। जिसके परिणामस्वरूप शरीर में कुछ वैकारिक लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। इसे ही हम ऐलर्जी या प्रत्यूर्जता कहते हैं। यह विकृति रोग प्रतिकारक्षमता के घट जाने पर होती है।

सामान्यतया जब त्वचा पर अचानक किसी प्रकार का आघात लगता है या त्वचा किसी रसायन के सम्पर्कमें आ जाती है अथवा कीट–पतंगे आदि काट लेते हैं तो वह तुरन्त रक्त–वर्ण की हो जाती है तथा चकत्ते निकल आते हैं। परन्तु यदि बार–बार ऐसा होता रहे तो कालान्तर में इसका प्रभाव त्वचा पर नहीं पड़ता और वह रक्त वर्ण की नहीं होती। उसी प्रकार किसी असात्म्य द्रव्य को बार–बार सेवन करने से उस द्रव्य का शरीर पर उक्त वैकारिक लक्षण दिखाई नहीं पड़ता है। आधुनिक चिकित्सा विज्ञान भी ऐलर्जी के विषय में यही विचार रखता है और आयुर्वेद के विख्यात विज्ञान महर्षि चरक ने भी इसी बात की पुष्टि की है।

"असात्म्यमपि क्रमेणोपयुज्यमानमदोषं भवति"।

अर्थात् असात्म्य द्रव्यों का क्रमपूर्वक सेवन करने से वे क्रमशः दोष रहित हो जाते हैं।

"रोगाः सर्वे पिमन्देग्नौ"।

अर्थात् सभी रोग अग्नि मन्द होने पर उत्पन्न होते हैं। यह आयुर्वेद का एक सामान्य सिद्धान्त प्रतिपादित है। महर्षि चरक ने कहा है–

"अग्निदोषान्मनुष्याणां रोगसंघाःपृथग्विधाः"

अर्थात् मनुष्य में अग्नि दोष उत्पन्न होने के फलस्वरूप अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

वाग्भट्ट ने भी इसका प्रतिपादन किया है।

प्रतिज्ञा वाग्भट्टस्ये न मन्दाग्नि विना रुजः"

अर्थात् मन्दाग्नि के बिना कोई रोग उत्पन्न नहीं होता है।

आधुनिक मतानुसार जब प्रोटीन द्रव्यों का पाचन पूर्ण रूप से नहीं हो पाता है तो वह पूर्ण रूप से अमीनो ऐसिड्स के रूप में परिवर्तित न होकर अर्धपक्व या आम अवस्था में अर्थात् पेप्टाइड के रूप में ही जब रक्त में प्रवेश कर जाती है तो उससे ऐलर्जी की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इसका अर्थ यह हुआ कि जठराग्नि की मन्दता के कारण आहार का परिपाक उचित रूप से न होने के कारण जो अपक्व या अर्धपक्व रस निर्मित होता है, जिसे आयुर्वेद में आम विष कहा गया है। जब कफ दोष के साथ मिलकर रस धातु के द्वारा सम्पूर्ण शरीर में भ्रमण करता है, तो त्वचा के नीचे पहुंच कर वह रसायनों में अवरोध उत्पन्न कर देता है जिसके परिणाम स्वरूप रस त्वचा के नीचे संचित हो जाता है जिससे त्वचा पर उभार उत्पन्न होकर वहाँ पर चकत्ते या ददोरे से बन जाते हैं।

यकृत के कार्यों में विषमता होने से भी ऐलर्जी के होने की प्रबल सम्भावना होती है। आधुनिक मतानुसार यकृत ही अग्नि का प्रधान स्थान है और वह भी आहार के परिपाक एवं चयापचयी क्रिया में भाग लेता है। इसके अतिरिक्त यह रक्त में स्थित विष का निर्हरण करता है अर्थात् पित्त द्वारा उन्हें शरीर से बाहर निकाल देता है। अतः रक्त में जब हिस्टामिन आदि विष द्रव्य उत्पन्न होते हैं तो यदि यकृत उन्हें अपने प्राकृतिक कर्म द्वारा शीघ्रतापूर्वक शरीर के बाहर निष्कासित नहीं कर देता तो ऐलर्जी उत्पन्न हो जाती है।

ऐलर्जी में उपयोगी आयुर्वेदिक औषधि :– इस रोग में जठराग्नि को प्रदीप्त करने वाली अर्थात् दीपन–पाचन औषधियाँ दी जाएँ तो रोगी को अवश्य लाभ होता है–इसी प्रकार जो द्रव्य यकृत विकार को दूर करे तथा उसका शोधन करे उसके प्रयोग से भी ऐलर्जी का शमन होता है।

त्रिफला, कुटकी, गुडूची, दारुहरिद्रा आदि द्रव्य यकृत का शोधन करके उसकी विकृति को दूर करते हैं। इसके समुचित प्रयोग से ऐलर्जी का प्रकोप शांत होता है।

आयुर्वेदीय विकृति विज्ञान के अनुसार ऐलर्जी रस रक्त दोषज विकार है जिसका स्थान संश्रय एवं अभिव्यक्ति स्थान त्वचा है। इसलिए इसमें रक्त शोधन एवं कफ शामक चिकित्सा दी जाती है जिससे तत्काल लाभ होता है।

मंजिष्ठा, खदिर, गन्धक आदि द्रव्यों और उनसे निर्मित योगों का इस व्याधि पर अच्छा प्रभाव देखा गया है।

चिकित्सा – निम्न प्रकार के योग गुणकारी हैं–

(१) आरोग्यवर्धिनी – २ रत्ती संजीवनी – २ रत्ती गंधक रसायन – २ रत्ती की एक–एक मात्रा ४–४ घण्टे पर शहद या गुनगुने जल के साथ दी जानी चाहिए।

(२) सारिवाद्यासव – २ तोला समान जल के साथ भोजनोपरांत दो बार लें।

(३) त्रिफला चूर्ण – ३ माशा रात में सोते समय गरम दूध के साथ लें।

यदि ऐलर्जी जनित श्वास रोग हो तो उक्त चिकित्सा के साथ श्वास की भी चिकित्सा की जानी चाहिए। इसी प्रकार अन्य विकृतियाँ होने पर उनके शामक योगों के साथ उपर्युक्त योग दिये जाने चाहिएँ।

ऐलर्जी में अपथ्य :– उड़द, आलू, चावल, केला, कद्दू, दही आदि रोगी को नहीं देना चाहिए। जठराग्नि को मन्द करने वाले श्लेष्मवर्धक, गुरु, विष्टम्भी, मधुररस प्रधान द्रव्य भी ऐलर्जी के रोगी को वर्जित हैं।

पथ्य आहार :– लघु, सुपाच्य, अग्निदीपक, पाचक एवं श्लेष्माशामक आहारद्रव्य ऐलर्जी के रोगी के लिए लाभप्रद हैं।

त्वचा रोगों की आदिवासी चिकित्सा

श्री पी. पी. हेम्बरम, बिहार

हमारे देश के विभिन्न भागों में स्वास्थ्य रक्षा, खानपान तथा सामान्य रोगों की चिकित्सा की परम्पराएं अनगिनत पीढ़ियों से चली आ रही हैं। हमारे आदिवासी और वनवासी अपने आस-पास पाई जानी वाली वनस्पतियों और खनिजों का इस उद्देश्य से प्रयोग करने में प्रवीण हैं। श्री पी पी हेम्बरम अवकाश प्राप्त वरिष्ठ अधिकारी हैं। उन्होंने छोटा नागपुर क्षेत्र के आदिवासियों में व्यापक रूप से प्रचलित स्वास्थ्य परम्पराओं का विस्तृत सर्वेक्षण किया है। हम उनके द्वारा बताई गई कुछ औषधीय उपचार नीचे दे रहे हैं।

मुहांसे

- अर्जुन की छाल को पीसकर लेप करें
- सेमल पेड़ के कांटों को पीसकर लेप करें
- करंज के तेल में थोड़ा गन्धक मिलाकर लेप करें
- कागजी नींबू के ताजा छिलके चेहरे पर लगाएं

खुजली

- नारियल के तेल में थोड़ा गन्धक मिलाकर लगाएं
- नीम के तेल में लगभग एक चौथाई पपीते का दूध मिलाकर लगाएं
- करंज तेल या नारियल के तेल में वन तुलसी की जड़ या बड़ी चकोड़ के बीज या पत्ते पकाकर तेल को छान लें व लगाएं
- नीम के पत्ते का रस हल्दी का कंद और नीम का तेल मिलाकर पकाकर मलहम बना लें और उसका प्रयोग करें
- एक कागजी नींबू का रस लेकर २५० ग्राम नारियल के तेल में मिलाकर लगाएं

एग्जिमा

एग्जिमा के कई कारण हो सकते हैं जैसे संक्रमण, दवाओं से एलर्जी, रासायनिक अथवा अन्य कारणों से सूजन आदि। एग्जिमा साधारणतः टखने, कमर, पैर या कलाई पर होता है। यह छोटी सी फुंसी से शुरू होता है। दूसरी फुन्सियां निकलती हैं इनसे पानी निकलता है व खुजली होती है। खुजलाने पर फुन्सियां फूट जाती हैं और धीरे धीरे एक चकत्ते सा बन जाता है। यह अपने आप ठीक हो जाता है और अगले साल बड़े क्षेत्र में निकलता है। धीरे धीरे पानी सूख जाता है और खालपर एक पपड़ी सी जम जाती है और उसमें खुजली होती है। इस प्रकार सूखा एग्जिमा बन जाता है जो आसानी से ठीक नहीं होता है।

- २५० ग्राम सरसों का तेल लेकर लोहे की कड़ाही में गरम करें जब तेल खूब उबलने लगे तो ५० ग्राम नीम की कोमल कोंपले डाल दें। कोंपलों के काला पड़ते ही कड़ाही को उतार लें। ठण्डा होने पर तेल को छानकर बोतल में भर लें और एग्जिमा पर दिन में तीन चार बार इसका प्रयोग करें।
- मुठठी भर अमरबेल लेकर उसका रस निकालकर १५-२० दिन लगाएं।
- काजू की छाल लेकर करंज के तेल के साथ पीसकर मलहम बना लें इसे रोज दो बार दो तीन सप्ताह तक प्रयोग करें।
- तारकोल गरम कर लें और उसे तीन गुना सरसों के तेल में मिलाकर मलहम बना लें इसे तीन सप्ताह तक दो बार लगाएं।
- पके केले के गूदे को नींबू के रस में पीसकर मलहम के समान लेप करें। यह एग्जिमा के अतिरिक्त दाद, खाज, खुजली और सिर की गंज में भी लाभदायक है।
- कटहल के नरम पत्तों को पीसकर लगाने से भी एग्जिमा में लाभ होता है।
- इन उपरोक्त औषधियों को लगाने से पहले प्रभावित क्षेत्र को पहले नीम की छाल के काढ़े से धो लें।

दाद

- दाद पर लहसुन पीसकर लगाएं
- दाद पर अंगूलिया थूहड़ का दूध या दुध्धी का दूध लगाएं।
- नीला थोथा एक ग्राम, माजू फल बीस ग्राम, मोम पचास ग्राम और शहद पचास ग्राम सबको पीसकर मलहम बना लें इसे दाद पर धीरे धीरे मलें।
- राल, गन्धक, भुना हुआ सफेद सुहागा और भुनी हुई सफेद फिटकरी चारों वस्तुओं को बराबर मात्रा में लेकर पीस लें और घी में मिलाकर दाद पर लगाएं।
- दाद को कपड़े से रगड़कर मदार का दूध रुई की फुरहरी से लगाएं। इससे जलन होती है पर पुराने से पुराने दाद में लाभ पहुंचता है।

पित्ती उछलना

- हल्दी पीस कर लगाएं
- पितौजी (*पुत्रनजीवा राक्सबरगाई*) के बीज रगड़कर लगाएं।
- सोंठ एवं अजवाइन थोड़ा पानी मिलाकर पीस लें फिर लगाएं।
- भेड़ के ऊन के कम्बल या उसके टुकड़े से रगड़े।

बाल पोषक टानिक

- खरहा घास (ट्राइडेक्स प्रोकम्बेन्स) का तेल लगाएं।
- अमर बेल के टुकड़े टुकड़े करके छः गुना पानी में उबालें। जब पानी उबलते उबलते एक चौथाई रह जाय तो उसे छानकर उससे सिर धोऐं।
- शिक्काकाई का फल, आंवला का फल और रीठा के फल का छिलका कूटकर रातभर पानी में भिगो दें फिर उसे अच्छी तरह कुचल कर रस निचोड़ लें यह रस बोतल में भरकर रखें और इससे बाल धोऐं।
- इससे बाल चमकदार हो जाते हैं
- नीम के ताजे पत्ते और बेर के ताजे पत्ते लेकर कूट लें इसे रात भर पानी में भिगोकर रखें फिर खूब कुचल कर मिला लें छानकर इस पानी से सर धोऐं।

बाल उगाने के लिए (गंजापन)

- हरसिंगार के फल लेकर उसे कूटकर बारह घंटे पानी में भिगोऐं। कुचलकर पानी छान लें इस पानी को तिल या नारियल के तेल में पकाकर लगाएं।
- बिच्छूबूटी (ट्रेजिया इनवाज्यूक्रेटा) की जड़ का रस निकालें फिर उसे चार गुना नारियल या तिल के तेल में पका लें और यह तेल लगाएं।

फोड़ा

- यह रोम छिद्रों में संक्रमण के कारण होता है इसे बाल तोड़ भी कहा जाता है। शुरू में एक छोटी फुंसी जैसा निकलता है फिर वह बढ़ कर बड़ा हो जाता है इसमें मवाद भी भर जाता है। यह दर्द करता है और कभी कभी इसमें खुजली भी हो सकती है।
- प्रारम्भिक अवस्था में बला (*सीडा कार्डीफोलिया*) की पत्तियों को पीसकर लगाएं इससे फोड़ा बैठ जाता है। यदि फोड़ा बड़ा हो गया हो तो बीच का हिस्सा छोड़कर किनारे किनारे इसे लेप कर दें। जब तक मवाद नहीं निकलेगा तब तक लेप लगा रहने दें।
- वन तुलसी के बीज जिसे तुक्मलंगा भी कहते हैं थोड़े पानी में भिगो दें। फूल जाने पर फोड़े पर किनारे किनारे लगादें।
- शरीफे के बीज के ऊपर का छिलका हटाकर पीस लें और लेप करें।
- चक्रमंडा (कैसिया टोरा) की पत्तियों को पीसकर लगाएं।
- सतावर के कंद को घिसकर लगाएं।
- पलास के बीजों को कूटकर करंज के तेल में पका लें और इसको लगाएं।
- हल्दी के कंद को चूने के साथ पीसकर लेप करें।
- चंदन की लकड़ी घिसकर लगाएं।

चेहरे के दाग

- तुलसी की पत्तियों को गाय के दूध में पीसकर लगाने से चेहरे के काले मिट जाते हैं।
- केले के पेड़ के भीतर के भाग से रस निकलता है इस रस को लगाने से चेहरे के काले दाग मिट जाते हैं।
- बादाम की गरी को दूध में घिसकर लगाएं।

सफेद दाग

यद्यपि आज तक सफेद दाग की कोई पूरी तरह ठीक करने वाली आदिवासी औषधि नहीं पाई गयी है तथापि निम्न औषधियों से काफी लाभ होता है।

- **खाने के लिए-** ब्राह्मी के पंचांग (जड़, तना, पत्तियां, फूल और फल) और सिन्दुवार (*वीटेक्स निगोन्डो*) की पत्तियों तथा बाकुची के बीज बराबर बराबर मात्रा में मिलाकर और कुछ सेंधा नमक मिलाकर चूर्ण बना लें। इस चूर्ण में थोड़ी सी फिटकरी मिलालें। इस चूर्ण की एक एक चुटकी तीन में तीन बार थोड़े पानी से लें।
- **लगाने की दवा-** काजू की छाल में बाकुची बीज मिलाकर पीस लें। करंज का तेल मिलाकर मलहम बना लें और प्रातः और सांय लगायें।
- ब्राहमी का पूरा पौधा, सिन्दुवार के पत्ते और ईश्वर मूल की जड़, बाकुची के बीज तथा सफेद रत्ती के ताजे पत्ते पीसकर करंज के तेल में मिलाकर मलहम बना लें और रोज दो बार लगायें।

जीवनीय
स्वास्थ्य पत्रिका
के नियमित
पाठक बनें

शीतपित्त या अर्टीकेरिया

डा. सीमा जोशी, लखनऊ

शीतपित्त मनुष्य के शरीर में होने वाली ऐसी व्याधि है जिसमें शरीर पर लाल रंग के चकत्ते से बन जाते हैं, जिनमें सूजन व खुजली होती है। ये चकत्ते एक ही समय में एक साथ या अलग–अलग समय में हो सकते हैं। शरीर पर जो चकत्ते पड़ते हैं, वे इस तरह लगते हैं, जैसे भंवरों ने काट लिया हो।

शीतपित्त के पूर्व लक्षण

किसी व्यक्ति को यदि शीतपित्त या लाल चकत्ते पड रहे हों तो निम्न लक्षण व्याधि के उत्पन्न होने से पहले होते हैं–

- पित्त के बढ़ने से प्यास अधिक लगती है
- खाना खाने का मन नहीं करता
- उल्टी की प्रवृत्ति
- थकावट।

शीतपित्त के लक्षण

शीतपित्त के हो जाने पर निम्न लक्षण उत्पन्न होते हैं:

- शरीर पर लाल रंग के चकत्ते पड़ जाते हैं, जो कि बीच में फूले हुए लगते हैं
- चकत्ता ऐसा मालूम होता है, मानो भंवरे ने काट लिया हो
- लालिमा वाले स्थान पर सूजन व खुजली होती है
- सूजन के साथ जलन व दर्द भी होता है
- कभी–कभी उल्टी व बुखार की भी शिकायत रहती है।

उपचार

शीतपित्त में निम्न देशी उपचार अचूक सिद्ध होते हैं:

त्रिफला (हर्र + बहेड़ा + आँवला) चूर्ण + गुग्गुलु (एक तरह का गोंद जो पंसारी की दुकान में मिलता है) + पिप्पली, इन सब द्रव्यों को पीस कर रात को सोते वक्त दो चम्मच गुनगुने पानी से लेना चाहिये। इससे कब्ज दूर होती है।

- जहाँ पर चकत्ते पड़े हो, सरसों के तेल की मालिश कर गुनगुने पानी से नहाना चाहिये।
- त्रिफला चूर्ण (२ चम्मच) शहद के साथ मिलाकर खाने को देना चाहिये।
- हल्दी पाउडर १/२ चम्मच दिन में तीन बार पानी से देना चाहिये।
- लाल गेरु को एक कढ़ाई में घी के साथ लाल भूरा होने तक भूनें फिर ठंडा कर उसका चूर्ण बना कर शीतपित्त में निम्न प्रकार प्रयोग करें–
  - गेरु को शहद के साथ खिलाना चाहिये। गेरु की मात्रा २ से ४ डेसीग्राम होनी चाहिये।
  - गेरु को हल्दी चूर्ण के साथ मिलाकर चकत्तों पर लेप करना चाहिये।

अपथ्य:

- भारी, खट्टे फल इत्यादि पित्त को बढ़ाने वाली चीजों का प्रयोग नहीं करना चाहिये।
- ठंडे पानी का ज्यादा प्रयोग नहीं करना चाहिये।
- तेज धूप से बचना चाहिये।

पथ्य

- शालि चावल, गुनगुना पानी, कुलथी की दाल इत्यादि।

पृ १५ का शेष

हमारे संतुलित भोजन में लवणों का अत्यधिक महत्व है। लवणों में सोडियम त्वचा की कोशिका में जल का अनुरक्षण करता है। इससे त्वचा के नीचे जल का अधिक संचय हो कर शोथ नहीं होने पाता है। पोटेशियम लवण कोषीय द्रवों को स्थिर रखता है तथा सोडियम के साथ मिलकर कोशिका के भीतर एवं कोशिका के बाहर द्रवों की स्थिरता को अनुरक्षित करता है। लौह एवं मैगनीज लवण प्रोटीन के साथ मिलकर हीमोग्लोबिन का निर्माण करता है जो लाल रक्तकणों को रंग देता है तथा त्वचा आदि ऊतकों को रक्त के माध्यम से आक्सीजन पहुंचाता है। त्वचा के रक्त के सम्यक परिसंचरण से त्वचा का स्वाभाविक रंग बना रहता है। त्वचा चमकीली, कोमल, तथा नम रहती है।

आहार द्रव्यों में अन्तिम अति आवश्यक द्रव्य जल है जिसके बिना मनुष्य का जीवन ही नहीं रहता है। साधारणतः ७० किलो वजन वाले मनुष्य में ४७ लीटर जल पाया जाता है। इसमें से २० प्रतिशत त्वचा में ही विद्यमान रहता है। त्वचा के द्वारा ही ग्रीष्म ऋतु में स्वेद के वाष्पीकरण से जल कम हो जाता है गरमी में अधिक पानी पीना पड़ता है।

पृ ९ का शेष

शरीर का अनुरक्षण करते हैं और विभिन्न हीनताजन्य उपद्रवों से शरीर की रक्षा करते हैं। विटामिन्स में विटामिन ए,डी,ई,बी, एवं सी का मस्तिष्क व शरीर के विकास, कोशिकाओं की उपन्तःभित्ति के विकास एवं रक्षा तथा उसकी तंत्रिकाओं के अपचय की क्रिया रोकने में प्रमुख कार्य होता है।

शरीर के विकास एवं अनुरक्षण में शाकाहार– शाकाहार शरीरिक व मस्तिष्क क्रियाओं के अनुरक्षण में विशेष उपयोगी है। मांसाहार की प्रोटीन एवं वसा पचन एवं धातुपाक में विभिन्न विषैले द्रव्यों को भी उत्पन्न करते हैं जो हृदय एवं मस्तिष्क को हानिकारक सिद्ध होते हैं। इसी कारण हृदय एवं मस्तिष्क की व्याधियों एवं पक्षाघात के मरीजों में चिकित्सक वानस्पितज द्रव्यों के प्रयोग की सलाह देते हैं। प्रयोगों से यह सिद्ध हुआ है कि अण्डा तथा अन्य पशुजन्य आहारों से कोलेस्ट्राल अधिक उत्पन्न होता है जो रक्तवाहिनियों की दीवार में जम जाने से एथेरोस्कलोरोसिस को उत्पन्न करता है। इससे हृदय एवं मस्तिष्क में रक्तसंचार में बाधा उत्पन्न होकर तामसिक गुणों को विकसित करता है जबकि शाकाहार द्वारा शरीर के सात्विक एवं राजसिक गुणों का विकास होकर मानसिक व शारीरिक साम्यता बनती है जो स्वस्थ रहने के लिए आवश्यक है।

खुजली या खाज

डा. पुष्पा आसवाल, लखनऊ

खुजली की चिकित्सा वानस्पतिक सामग्री से करो

खुजली या खाज एक चर्मरोग है जिसमें रोगी अपने बदन को खूब खरोंचता है। प्रायः यह "स्केबीज" या मधुमेह जैसे रोगों के लक्षण के रुप में ही होता है। पर चिकित्सकों के पास ऐसे रोगी भी आते हैं जिन्हें ऐसी कोई दूसरी व्याधि तो नहीं होती, फिर भी शरीर में जहां-तहां स्थानिक रुप से बड़ी तीव्र खुजली होती है।

खुजली से पीड़ित त्वचा सूखी, खुरदरी या जाहिरा तौर पर सामान्य भी हो सकती है। रोगी कह सकता है कि गरमी से, ऊनी कपड़ों के पहनने से या आटे या शक्कर जैसी चीजों को लगाने से, जिनसे सामान्य त्वचा प्रभावित नहीं होती, खुजली का प्रकोप बढ़ जाता है। खुजलियों के चार प्रकार विषेश महत्व के हैं :

गुदा वंक्षू- इसमें गुदा में खुजली होती है। यह शिकायत प्रायः बच्चें को सूत्रकृमि के कारण होती है। वयस्क व्यक्तियों में यह शिकायत स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों को अधिक होती है। यह गुदा के आसपास की चमड़ी में सूजन, बवासीर के प्रभाव से, गुदा के कैंसर से, गुदा के आसपास की नमी से या अन्य कारणों, जैसे कब्ज के लिए दवा के रुप में अत्यधिक लिये गये द्रव पैराफीन के रिसाव से भी हो सकता है। रोग के पुराना हो जाने पर गुदा में शिकनें हो जाती हैं कटी फटी चमड़ी की अंडाकार, मोटी, पीला-सफेद और खांचेदार रहती है। प्रायः खुजली रात में अधिक रहती है।

योनि वंक्षू- भारत की स्त्रियां प्रायः इस रोग से त्रस्त रहती हैं जो उन्हें सफाई की कमी, संक्रमण आदि अनेक कारणों से हो जाया करती है।

कारण :- स्त्री रोग संबंधी - योनि से श्वेत प्रदर का स्राव।

स्थानिक क्षोभक - अस्वास्थ्य कर अस्ववच्छता, तेज साबुन, डेटाल का प्रयोग, कसे हुए कपड़े, किसी विशेष गर्भ निरोधक आदि का प्रयोग।

आहार संबंधी - सूत्रकृमि, अमीबियासिस।

चर्म संबंधी - स्थानिक या सर्वांगव्यापी कोई चर्मविकार, औषध सेवन से होने वाली फुन्सियां।

उपायचयी - मधुमेह, पीलिया आदि।

प्रत्यूर्जा (एलेर्जिक) - किसी विशेष आहार, औषध या वस्त्र से

मनः कायिक - यैन तृप्ति न होने से उत्पन्न उत्कंठा के फलस्वरुप योनि को खरोंचने से अस्थिर भग उपकला के क्षुब्ध होने से खुजली और भी बढ़ सकती है।

बुढ़ापे की खुजली :- यह चमड़े की क्षीणता और पोषणहीनता से होती है। प्रायः तीव्र खुजली होती है। इसमें शरीर का बहुत बड़ा भाग, विशेष रूप से पीठ प्रभावित होती है। यह प्रायः ६५ वर्ष से अधिक उम्र के लोगों में पायी जाती है। जबकि चमड़ी शुष्क, बेलोच और झुर्रीदार होती है।

स्नान वंक्षू :- यह बार-बार नहाने से उत्पन्न होती है। इसमें चमड़ी में सूखापन और खाल का खिंचा होना नजर आता है। प्रायः ये लक्षणपांवों में और धड़ के कुछ हिस्सों में पाये जाते हैं। इसे दूर करने के लिए नहाने में कमी करना काफी होता है।

रोकथाम

सभी प्रकार की खुजली की चिकित्सा के पूर्ण उसके कारणों को ध्यानपूर्वक पता करना चाहिए ताकि उचित चिकित्सा हो सके। महत्वपूर्ण यह है कि इसकी रोकथाम के लिए ढीली व सूती चडडी, बनियान ही पहनना चाहिए। जिनकी चमड़ी सूखी हो वे नहाने से पहले मालिश या उबटन प्रयोग करें। गुदा वंक्षू के कुछ रोगियों को पानी की बजाय टिशू पेपर से गुदा साफ करने से आराम मिलती है पर इसका मुख्य उपचार सूत्र-कृमि की चिकित्सा से ही होता है।

सूत्र-कृमि का उपचार - कच्ची सुपाड़ी के महीन चूर्ण में नींबू का रस मिलाकर ३-५ ग्राम तक लें।

नारियल पानी को शहद के साथ लें।

खाली पेट प्रातः ३-६ ग्राम अजवायन चूर्ण सेंधा नमक के साथ लें।

दिन में दो बार ३-६ ग्राम कमीला (मैलोटस क्लिप्पिएनसिस) चूर्ण शहद के साथ लें।

अमीबियासिस का उपचार

सोंठ, नागरमोथा, अतिविषा और गुडूची का काढ़ा दिन में दो बार ४० मिली. लें।

शालपर्णी, बला की जड़, धनिया बेल और सोंठ का काढ़ा ४०-५० मिली. दिन में दो बार लें।

दिन में दो बार ३ डेसीग्राम बेलगिरी, १ डेसीग्राम सोंठ चूर्ण और १२ ग्राम गुड़ लें।

योनि वंक्षू का उपचार

हरड़, आँवला गुडूची, विभीतकी और दंती की जड़ के काढ़े से योनि का प्रक्षालन करें।

योनि में बरगद, पीपल, गूलर आदि कषाय रस के औषध द्रव्यों का चूर्ण भर दें।

योनि में हल्दी, दारुहल्दी और बृहती की लेई भर कर इन्हीं द्रव्यों का धूप दें।

साखि, कृष्ण साखि, त्रिवृत और चाब द्रव्य (पाइपर चबा) के काढ़े का सेवन करें।

ढीली सूती चडडी पहनें।

चर्म रोगों के घरेलू इलाज

चर्म रोग जैसा कि नाम से स्पष्ट होता है कि यह त्वचा की ऊपरी पर्त में होने वाली बीमारी है। इनमें प्रमुख रूप से दाद, खाज, खुजली, अपरस, एक्जीमा, पाद दरी, अकौता, अपरस आदि के नाम प्रमुखता से आते हैं। लेकिन आयुर्वेद ग्रन्थों में इन सभी चर्म रोगों को कुष्ठ रोग के अन्तर्गत माना गया है। शास्त्रों में जो ग्यारह प्रकार के क्षुद्र कुष्ठ बताये गये हैं उनमें उपरोक्त सभी बीमारियां आ जाती हैं कुछ भी हो कुष्ठ भी एक प्रकार का चर्म रोग है तथा उपरोक्त बीमारियां भी चर्म रोग ही हैं।

चर्म रोगों की उत्पत्ति

कोई भी बीमारी बिना किसी स्पष्ट कारण के नहीं होती इस लिए उसके निराकरण से पूर्व यह जान लेना आवश्यक हो जाता है कि आखिर क्यों हुई। जब हम चर्म रोगों की उत्पत्ति के बारे में अध्ययन प्रारम्भ करते हैं तो ज्ञात होता है कि जिस प्रकार वात के बिना श्वास रोग, कफ के बिना खांसी नहीं होती उसी तरह जब तक दूषित पित्त और कफ से संयोग नहीं करते तब तक चर्म रोग नहीं हो सकते। इसके अलावा हमारे ब्यक्रिम, गन्दगी तथा अशुद्ध जल के निरन्तर सम्पर्क में रहने से भी विभिन्न प्रकार के चर्म रोग हो सकते हैं।

कुछ चर्म रोग एवं उनके लक्षण तथा चिकित्सा वैसे तो त्वचागत बीमारियां कई तरह की होती हैं, उनमें से कुछ सरलता पूर्वक ठीक हो जाती हैं कुछ ठीक तो हो जाती हैं, परन्तु बहुत परिश्रम एवं परहेज करना पड़ता है तथा कुछ ऐसी भी होती हैं जो कि असाध्य होती हैं जो कभी भी ठीक नहीं होतीं केवल उनके लक्षण कम हो जाते हैं। इस लिए कोई भी बीमारी हो उसके प्रारम्भ में ही उसका इलाज प्रारम्भ कर देना चाहिए। कुछ प्रमुख त्वचागत बीमारियां तथा उनके लक्षण और चिकित्सा तथा प्रमुख सावधानियां इस प्रकार हैं।

खुजली की घरेलू चिकित्सा

खुजली रोग की चिकित्सा में औषधि से ज्यादा सफाई और स्वच्छता का महत्व होता है। इसकी चिकित्सा के लिए निम्न लिखित औषधियों का प्रयोग निरापद रुप से किया जा सकता है।

आक के पत्ते १०० ग्राम, नीम के पत्ते १०० ग्राम, हल्दी १०० ग्राम, छोटी कटेरी पंचांग १०० ग्राम को ५०० ग्राम पानी के साथ उबालें। जब पानी १०० ग्राम शेष रह जाय तब उसे छानकर छने हुए पानी में १०० ग्राम तिल का तेल मिला कर पुनः गरम करें, जब समस्त पानी जल जाय तब तेल को छान कर रख लेवें, आपकी औषधि तैयार है।

प्रयोग विधि– इस तेल को सूखी खुजली होने पर दिन में कम से कम दो बार लगावें अगर खुजली पकने वाली है तो तेल को जब छानते हैं उसी समय उसे छानकर उसमें २० ग्राम मोम मिला देवें तथा थोड़ी देर के लिए रख देवें। इससे वह जम कर मल्हम जैसा बन जाएगा। अब इस मल्हम को दिन में दो बार प्रभावित स्थान को अच्छी तरह धो कर प्रयोग करें।

स्वर्ण क्षीरी के बीज अथवा पंचांग में उपरोक्त विधि द्वारा तेल सिद्ध कर तथा उसका मल्हम निर्माण कर प्रयोग करें।

कोंदों के ऊपर के छिलके को जलाकर उसकी भस्म तैयार करें। पुनः इस भरम में तिल का तेल मिलकार लगाने से हर तरह की खुजली ठीक हो जाती है।

दाद की घरेलू चिकित्सा

गाय का दूध १० ग्राम, हल्दी १० ग्राम, सेंधा नमक २ ग्राम, कंजी के बीज २ ग्राम, पवांर के बीज २ ग्राम, बाकुची ५ ग्राम, नीम की पत्ती ५ ग्राम को बारीक पीसकर प्रभावित स्थान पर लगावें।

चाक, वायबिडंग, सिंगरफ, गन्धक, पवांर के बीज सभी को ३–३ ग्राम लेकर बारीक पीसकर रख लेवें। पुनः नींबू, आक धूतूरा तथा नीम के पत्ते का रस १०–१० ग्राम लेकर उसमें उपयुक्त चूर्ण को मिलाकर लगावें तथा खदिरारिष्ट ५–५ मि.ली. दिन में तीन बार पिलावें। इस योग में नींबू फल का रस प्रयोग करना चाहिए। कागजी नींबू का रस प्रभावित स्थान पर लगाने से भी दाद ठीक हो जाती है।

एक्जीमा की घरेलू चिकित्सा

नीम के पत्ते १०० ग्राम, अकौवा, धतूरा तथा करन्ज के पत्ते ५०–५० ग्राम को लेकर ८०० ग्राम पानी में उबालें जब पानी २०० ग्राम शेष रह जाय तब उसमें १०० ग्राम सरसों का तेल डालकर पुनः धीमी आंच में गर्म करें। सम्पूर्ण पानी जल जाने पर तेल को छानकर उसमें १५ ग्राम मोम मिलाकर रख देवें। ठन्डा होने पर प्रयोग करें।

अपरस– यह भी एक प्रकार का चर्मरोग है जिसमें त्वचा की बाह्य पर्त छिलके के रुप में निकलती है। आमतौर पर यह हाथ या पैर के तलुवों में अधिक होता है।

चिकित्सा– आक, नीम, धतूरा के पत्ते तथा करन्ज के पत्ते १००–१०० ग्राम लेकर एक लीटर पानी में उबालें। जब पानी ४०० ग्राम शेष रह जाय तब उसे छानकर, छने हुए पानी में गन्धक १० ग्राम, तिल का तेल १०० ग्राम मिलाकर गरम करें। जब सम्पूर्ण पानी जल जाय तब उसमें ३० ग्राम मोम मिलाकर रख देवें तथा ठन्डा होने पर प्रयोग करें। इसके साथ ही यदि पंचनिम्बावलेह ५–५ ग्राम सुबह शाम प्रयोग करें तो अति शीघ्र लाभ होता है।

मस्सा– यह शरीर के किसी भी स्थान में हो सकते हैं। इनको समाप्त करने के लिए निम्न प्रयोग करें।

पान के डन्ठल में बुझा चूना लगाकर मस्से के चारों ओर रगड़ने से मस्सा टूट कर गिर जाता है लेकिन मस्से के गिर जाने के बार सावधानी पूर्वक व्रणोपचार करना चाहिए।

पान के डन्ठल २५ ग्राम तथा बुझा चूना १० ग्राम को मिलाकर पीसकर रख लेवें तथा प्रतिदिन तीन बार मस्से के चारों ओर लगावें। इसमें भी मस्से के निकल जाने बाद सावधानी पूर्वक व्रणोपचार करना चाहिए।

व्रण (घाव एवं फोड़ा) – आयुर्वेद के अनुसार व्रण दो प्रकार के होते हैं एक तो तुरन्त के लगे हुए जो किसी शस्त्र या अन्य किसी भारी वस्तु के कारण हो सकते हैं। दूसरे दूषितव्रण हो कि शारीरिरक दोषों के कारण पूराने व्रणों के उचित उपचार के कारण होतें हैं।

सघोव्रणोपचार – सघोव्रण चिकित्सा में प्रथम तो रक्त का बहना बन्द करना आवश्यक

होता है। इसके लिए प्रभावित स्थान से दो या तीन अंगुल की दूरी पर कस कर कपड़े से बांध देने से रक्त का बहना बन्द हो जाता है। इसके पश्चात शरपुखां की जड़ को पानी के साथ पीसकर या मुंह में चबा कर प्रभावित स्थान पर रखकर कपड़े से बांध देने से शीघ्र ही व्रण ठीक हो जाता है। अगर ताजा शरपुंखा जड़ न मिले तो सूखी हुई जड़ को पानी में उबालकर पीसकर लगावें।

दूषी व्रणोपचार – जब शरीर के मल पदार्थ त्वचा के द्वारा बाहर नहीं निकल जाते उस स्थिति में वे एक स्थान पर एकत्र होकर गांठ का रुप धारण कर लेते हैं। यही गांठ धीरे धीरे बढ़ती है, पकती फूटती है दोषों के संचित होने के कारण उनकी प्रकृति अलग अलग होती है। पित्त के कारण होने वाला व्रण गरम, तेज जलन वाला तथा लाल रंग का होता है, कफ के प्रभाव से कम दर्द वाला तथा भारी होता है।

चिकित्सा – अपक्वावस्था :– धतूरे के पत्ते अथवा पान के पत्ते में सरसों का तेल लगाकर हल्का गरम कर बांध देने से व्रण शीघ्र पक कर फूट जाता है।

आटा २५ ग्राम हल्दी ५ ग्राम, नमक ३ ग्राम तथा सरसों का तेल २५ ग्राम को मिलाकर हल्का गरम कर बांधने से व्रण पक जाता है।

पक्वावस्था – जब व्रण अच्छी तरह से पक जाय तब स्वच्छ शुद्ध तेज धार वाले ब्लेड, चाकू से चीरा लगाकर अच्छी तरह से दबा कर अन्दर का पूरा मवाद निकाल देवें। पुनः स्वच्छ रुई तथा गरम पानी से व्रण को धोयें। पुनः जात्यादि तेल में स्वच्छ कपड़े की पट्टी को अच्छी तरह भिगोकर व्रण में रख कर ऊपर से कपड़ा रख कर बांध देवे। दूसरे दिन से नित्य व्रण को साफकर उसमें जात्यादि तेल की पट्टी लगाने से घाव शीघ्र भर जाता है।

जो घाव अत्यन्त पुराने हो गयें हो जिनके ऊपर सफेद/काली पपड़ी जम गयी हो या जिनसे निरन्तर मवाद का स्राव हो रहा हो ऐसे व्रणों में प्रथम कुछ दिन शोधित सुहागा डालकर पट्टी बनायें बनाने के पश्चात जात्यादि तेल अथवा सर्ज रस मल्हम की पट्टी बांधने से पुराने से पुराना घाव भी ठीक हो जाता है।

जिन घावों में कीड़े पड़ गये हो उनमें प्रथम दो दिन तक लहसुन कुचल कर रख कर कस कर पट्टी बांधने के पश्चात पुनः जात्यादि तेल की पट्टी लगावें

चर्म रोगों में प्रायोज्य प्रमुख सावधानियां – चर्म रोगों की चिकित्सा तथा ये उत्पन्न ही न हों इसके लिए सबसे आवश्यक शरीरिक सफाई के साथ ही हमारा भोजन तथा पानी भी शुद्ध होना आवश्यक है। इसके साथ ही ऐसी वस्तुएं जिनसे इन रोगों का प्रकोप होता है

पुराने अंक बिना डाक खर्च के

जीवनीय के पाठक पुराने अंकों के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिए हमें बहुत से पत्र भेजते हैं। ऐसे सभी जिज्ञासु पाठकों के लिये, जो पुराने उपलब्ध अंक प्राप्त करना चाहते हैं, इस समय हमारे पास उपलब्ध अंकों की सूची हम यहां प्रस्तुत कर रहे हैं –

१९८९	१९९०	१९९१	१९९२	१९९३	१९९४
शरद रु. ५	मातृ एवं शिशु रु.८	वसंत रु.६	योग विशेषांक रु.८	किशोरावस्था रु.१०	महिला स्वास्थय
हेमंत रु.५	स्वास्थ्य	ग्रीष्म रु.६	नेत्र सुरक्षा रु.१०	विशेषांक	विशेषांक रु.१२
	वर्षा रु.५	यकृत रोग रु.६	विशेषांक	अस्थिरोग रु.१०	मानसिकस्वास्थ्य रु.१२
	शरद रु.५	विशेषांक	उदर रोग रु.१०	विशेषांक	विशेषांक
	हृदय रोग रु.८	दंत सुरक्षा रु.६	विशेषांक		
	विशेषांक	वृद्धावस्था रु.६			
		विशेषांक			

ये सभी अंक ऊपर लिखी हुई पुरानी दरों पर बिना डाक–शुल्क के उपलब्ध हो सकते हैं यदि आप कम से कम रु. २५ मूल्य की पत्रिकाओं का ऑर्डर एक साथ भेजकर उसका अग्रिम भुगतान मनीऑर्डर या बैंक ड्राफ्ट द्वारा करें। पत्रिकाएं रजिस्टर्ड डाक से मंगाने के लिए रु.७ जोड़ कर भेजें।

एग्जिमा की प्राकृतिक चिकित्सा

शरीर में कहीं भी एग्जिमा होने पर यह समझा लेना चाहिए कि त्वचा में पैदा हुआ रोग रक्त की अशुद्धता के कारण है। इसका कारण शरीर में विशषतः पाचन तन्त्र में पैदा विकार हैं और इसी द्रष्टिकोण से इसकी चिकित्सा की जानी चाहिए। त्वचा के ऊपर लगाये जाने वाले मलहम, लेप आदि से एग्जिमा पूरी तरह ठीक नहीं हो सकता। जबतक इसे पैदा करने वाले कारणों का दूर न किया जाय।

इसकी चिकित्सा के लिए उपवास सबसे उत्तम साधन है। उपवास की अवधि रोगी की तीव्रता और रोगी की शरीरिक शक्ति पर निर्भर करती है। उपवास के बाद फलों के रस और दूध के आहार पर रहना चाहिए। केवल दुग्ध आहार इस रोग में बहुत लाभदायक है। बहुत से रोगियों में जहां अन्य सभी प्रकार की चिकित्सा असफल हो गई रसाहार और दुग्धाहार से यह रोग ठीक हो गया। यदि केवल दुग्धाहार संभवं न हो अथवा दुग्धाहार के पश्चात भोजन में सलाद, उबली हरी पत्तेदार सब्जियां, फल और दूध का किसी न किसी रुप में प्रयोग करना चाहिए। नमक का प्रयोग यथासंभव नहीं करना चाहिए।

यदि त्वचा बहुत शुष्क हो तो जैतून के तेल से मालिश करनी चाहिए। स्वच्छ हवा में घूमना तथा धूप स्नान बहुत उत्तम हैं। धूप स्नान से त्वचा का रंग काला पड़ जाता है। यह भी प्रकार समझ लेना चाहिए कि जितना धूप स्नान किया जायगा उतना ही लाभ पहुंचेगा। अतः नित्य धूप स्नान करना चाहिए तथा त्वचा के काले होने की चिन्ता नहीं करनी चाहिए।

कब्ज को दूर करने के लिए एनीमा का प्रयोग करना चाहिए। कुछ दिन तक एनीमा का प्रयोग करने के बाद नियमित रुप से शौच होने लगता है। और शरी को एनीमा की आवश्यकता नहीं रह जाती है।

भाप स्नान और शरीर के तापमान वाले जल से आधे घंटे से एक घंटे तक प्रतिदिन किया जाना चाहिए। यह स्नान केवल दुग्धाहार पर रहने की स्थिति में अधिक प्रभावशाली होते हैं। यदि कोई समस्या उत्पन्न हो तो स्नान के पश्चात जैतून अथवा नारियल के तेल का प्रयोग करना चाहिए।

नित्य भ्रमण जितना भी हो सके लाभदायक है। यह भ्रमण प्रातःकाल में करना चाहिए तथा उसके पश्चात दुग्धाहार किया जा सकता है। उपरोक्त किसी प्रकार की चिकित्सा में त्वचा की रोग वाले स्थान को नुकसान न पहुंचे इसका ध्यान रखना चाहिए।

एग्जिमा में खनिज जल के श्रोतों विशेषतः गंधक श्रोत वाले जल में स्नान बहुत लाभदायक है। नीम की पत्तियों को पानी में उबालकर नहाना भी उत्तम है।

जीवनीय में विज्ञापन देकर अपना संदेश हजारों पाठकों तक पहुंचायें

पत्रिका के पाठकों में स्वास्थ्य कार्यकर्ता, डाक्टर, वैज्ञानिक, वकील, शिक्षक और गृहणियां आदि हैं। पत्रिका स्वैच्छिक संगठनों, सरकारी कार्यालयों और प्रौढ़ शिक्षा विभाग के जन शिक्षण निलयमों तथा ग्राम विकास संस्थान के पुस्तकालयों में भी मंगाई जाती है।

स्थान	प्रतिअंक	छमाही (३ अंक)	वार्षिक (६ अंक)
पिछला आवरण (रंगीन)	८,०००	२०,०००	३५,०००
अंदरूनी आवरण (रंगीन)	६,०००	१५,०००	२५,०००
अंदरूनी आवरण (श्याम–श्वेत)	५,०००	१२,०००	२०,०००
अंदर के पृष्ठ (रंगीन)	५,०००	१२,०००	२०,०००
अंदर के पृष्ठ (श्याम–श्वेत)	३,०००	८,०००	१४,०००
अंदर का आधा पृष्ठ	२,०००	५,०००	९,०००
अंदर का चौथाई पृष्ठ	१,०००	२,५००,	५,०००

अंग्रेजी व हिन्दी दोनों भाषाओं के संस्करणों में विज्ञापन एक साथ देने पर २०% छूट दी जाएगी।

विज्ञापन सामग्री : रंगीन–पाजटिव स्कैनिंग (डिजाईन सहित) श्याम–श्वेत– आर्ट पूल/ब्रोमाइड/निगेटिव

विज्ञापन कार्यालय : **ई–III/२४९, सेक्टर एच, अलीगंज, लखनऊ–२२६०२० फोन–०५२२–७७५६८**

आयुर्वेद में गौ द्वारा चिकित्सा

श्री अखिलानन्द पाण्डे, आयुर्वेदाचार्य,

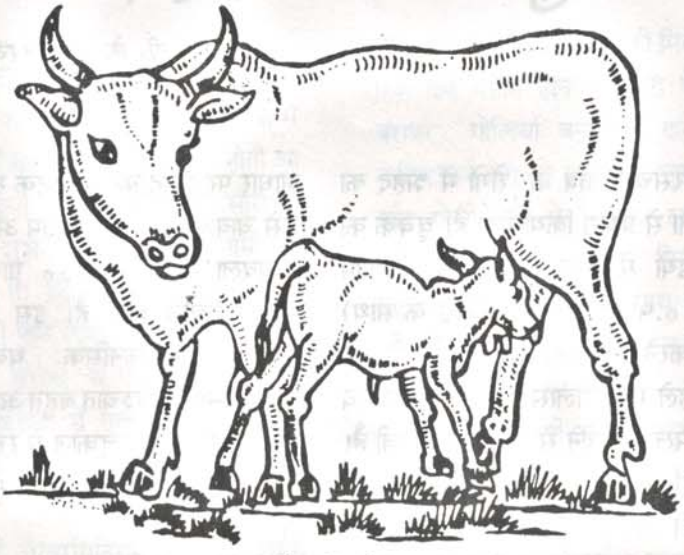

आयुर्वेद अत्यन्त प्राचीन शास्त्र है। विशेषकर यह अथर्ववेद में विस्तार से वर्णित है। अथर्ववेद में गौ में देवताओं का निवास माना गया है। वेद ने गाय के रूप को सम्पूर्ण विश्व ब्रह्माण्ड का रूप माना है--

एतद् वै विश्वरूपं सर्वरूपं ग्रोरूपम्।

पुराकाल में ऋषिकुल और गुरुकुल के आश्रम में गायें होती थीं। ब्रहमचारियों को गोमाता की सेवा में कठोर परिश्रम करना पड़ता था। गौ माता की सेवा में उन्हें व्यायाम से अधिक परिश्रम पड़ता था। जिससे स्वास्थ्य बहुत ही उत्तम होता था। किसी प्रकार की व्याधि नहीं होने पाती थी। शरीर पूर्णरुप से निरोग रहता था।

गोदुग्ध- विश्व में गोदुग्ध के सदृश पौष्टिक आहार अन्य कोई है ही नहीं, इसे अमृत कहा गया है। बाल्यावस्था में दुग्ध तीन साल तक बाल्यजीवन का मुख्य आधार है। मातृविहीन बालक दुग्धपान से जीवित रहता है। जन्म से मृत्युपर्यन्त किसी भी अवस्था में दुग्ध निषिद्ध नहीं है। स्वास्थ्य की दृष्टि से दुग्ध को पूर्णाहार माना गया है।

शरीर-संवर्धन-हेतु इसमें प्रत्येक तत्व विद्यमान हैं। मानव की शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक शक्ति बढ्ढाने वाला गोदुग्ध ही है। प्राचीन काल में ऋषि मुनि गोदुग्ध पीकर तृप्त होते, तपस्या करते तथा गोसेवा में रत रहते थे। सुश्रुतसंहिता में दुग्ध को सभी प्राणियों का आहार बताया गया है। चरक-संहिता में गोदुग्ध को जीवनी-शक्तियों में सर्वश्रेष्ठ रसायन कहा गया है-

प्रवरं जीवनीयानां क्षीरमुक्तंरसायनम्।

सुश्रुत ने भी गोदुग्ध को जीवनीय कहा है।

गोदुग्ध जीवन के लिये उपयोगी, जराव्याधिनाशक रसायन, रोग और वृद्धावस्था को नष्ट करने वाला, क्षतक्षीण-रोगियों को लिए लाभकर, बुद्धिवर्धक, बलवर्धक, दुग्धवर्धक तथा किंचित् दस्तावर है और क्लम (थकावट), चक्करआना, मद, अलक्ष्मी, श्वास, कास (खांसी), अधिक प्यास लगना, भूख, पुराना ज्वर, मूत्रकृच्छ् रक्तपित इन रोगों को नष्ट करता है। दुग्ध आयु स्थिर रखता है, आयु को बढ्ढाता है।

गोदधि- यह उत्तम, बलकारक, पाक में स्वादिष्ट, रुचिकारक, पवित्र, दीपन, स्निग्ध, पौष्टिक और वातनाशक है। सब प्रकार के दहियों में गोदधि अधिक गुणदायक है-

उक्तं दध्नामशेषाणां मध्ये गव्यं गुणाधिकम्।

गोतक्र-गाय का मट्ठा- यह त्रिदोषनाशक, पथ्यों में उत्तम, दीपन, रुचिकारक, बुद्धिजनक, बवासीर और उदर विकार नाशक है।

गाय का मक्खन- यह हितकारी, वृष्य, वर्णकारक, बलकारक, अग्निदीपक, ग्राही, वात-पित्त-रक्तविकार, क्षय, बवासीर, अर्दित और कास को नष्ट करता है। बालकों के लिये अमृततुल्य लाभकारी है।

गोघृत- यह कान्ति और स्मृतिदायक, बलकारक, मेध्य, पुष्टिकारक, वात-कफ नाशक, श्रमनिवारक, पित्तनाशक, हृद्य, अग्निदीपक, पाक में मधुर, वृष्य, शरीर को स्थिर रखनेवाला, हव्यतम, बहुत गुणोवाला है।

गोमूत्र एवं गोमय- यह कटु, तीक्ष्ण और उष्ण होता है तथा क्षारयुक्त होने से वातवर्धक नहीं होता। यह लघु अग्निदीपक, मेध्य, पित्तजनक तथा कफ-वात नाशक होता है। शूल, गुल्म, उदररोग, आनाह, विरेचन-कर्म, आस्थापन, वस्ति आदि व्याधियों में गोमूत्र का प्रयोग करना चाहिए।

आयुर्वेदशास्त्रानुसार सम्यक्- रुप से गोमूत्र सेवन से कुष्ठादि अन्य चर्मरोग नष्ट हो जाते हैं। गोमय को स्वच्छता प्रदान करने वाला पवित्र माना गया है। अधिकांश भारतीय जन अपने घरों को गोबर से लीपकर शुद्ध करते हैं। गोबर कीटाणुनाशक होता है। शरीर शुद्धिकरण हेतु पन्चगव्य का प्रयोग होता है।

प्रकृति की अनुपम भेंट–शहद

डा० टी० के० अब्दुल रज्जाक, केरल

शहद का औषधि के रूप में प्रयोग बहुत प्राचीन काल से किया जाता रहा है। प्राचीन यूनानी कवि होरेस ने ई० पू० ३००० में अपनी रचनाओं में शहद के लाभ बताये हैं। हिप्पोक्रेट्स ने अन्य कोई औषधि उपलब्ध न होने पर विभिन्न रोगों में शहद के लाभ बताये हैं। पवित्र कुरान की कुछ आयतों में शहद की उत्पत्ति, प्रयोग और चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में उससे आये क्रान्तिकारी परिवर्तनों का उल्लेख है।

स्वस्थ व्यक्ति, विशेषतः बच्चे सब्जी और दाल के स्थान पर शहद से रोटी और चावल खाना पसन्द कर सकते हैं। शहद न केवल स्वादिष्ट है बल्कि पेट के बहुत से रोगों का इलाज भी है। कहा जाता है कि शहद आदमी के पेट का सबसे अच्छा दोस्त है। आधुनिक चिकित्सा विज्ञान मानता है कि भोजन में शहद का नित्य प्रयोग पाचन शक्ति को बढ़ाता है और पाचक रसों की अम्लता को नियंत्रित करता है। इसी कारण इसका उपयोग आमाशय भित्ति शोथ (गैस्ट्राइटिस) तथा आमाशय और ग्रहणी के फोड़ों में किया जाता है। शहद बीमारियों से लड़ने के लिये शरीर की प्रतिरक्षा क्षमता को बढ़ाता है। मधुमेह और हृदय के रोगी भी शहद का सेवन कर सकते हैं।

रोग निवारण क्षमता

जठरांत्र तंत्र, यकृत, पित्त वाहिकाओं और अन्य आन्तरिक अंगों तथा हृदय और रक्त परिसंचरण तंत्र के रोगों में शहद का सफलता से प्रयोग किया गया है। वृक्क की गड़बड़ियों में डाक्टर शहद (१५ ग्राम शहद ०.५ लीटर बेरी के काढ़े के साथ) प्रयोग करने की सलाह देते हैं। सोने से एक घंटा पहले एक गिलास पानी में दो चम्मच शहद मिला कर पीने से अच्छी नींद आती है। इससे एसिडिटी भी कम होती है परन्तु भोजन के पहले लेने से एसिडिटी बढ़ती है। यह चिकित्सा दो महीने तक की जानी चाहिये।

लोक परम्परा से ज्ञात होता है कि एक कप गरम दूध में एक चम्मच शहद डाल कर सोते समय पीने से जुकाम ठीक हो जाता है।

मिस्र में प्राचीन काल में त्वचा की सूजन और घाव शहद के छत्ते रखकर ठीक किये जाते थे। लगभग १००० वर्ष पहले प्रसिद्ध वैज्ञानिक इब्नसिना ने शहद को खांसी और क्षय का इलाज बताया था। उन्होंने एक हृदय रोगी को भी शहद से ठीक किया था। सोवियत वैज्ञानिकों ने शहद को कुछ प्रकार के कैंसर और अन्य कई असाध्य रोगों की एकमात्र चिकित्सा माना है।

पोषक आहार

शहद में सूर्य की गरमी और फूलों की सुगन्ध व पराग समाहित है। शहद में विटामिनों और खनिजों समेत ७० महत्वपूर्ण तत्व पाये जाते हैं। इसीलिये शहद को सम्पूर्ण भोजन के साथ–साथ सर्व रोगनाशक माना जाता है। कैलोरी मान के आधार पर शहद बहुत पौष्टिक खाद्य पदार्थों जैसे चाकलेट, कोको, बादाम और चीनी से मुकाबला करता है। १०० ग्राम शहद में ३३५ कैलोरी होती है। इस कारण यह शारीरिक और मानसिक थकावट तथा लम्बी बीमारी के पश्चात बहुत आवश्यक है। शहद में उपिस्थत ग्लूकोज से रक्त नलिकाएं फैलती हैं और रक्त संचरण में सुविधा होती है।

शारीरिक स्थिति सुधारने और लाल रक्त कणों की मात्रा बढ़ाने के लिये छः सप्ताह तक प्रतिदिन १०० ग्राम शहद प्रयोग करना काफी है। शहद में सेब और अंगूर जैसे कीमती फलों से पांच गुना अधिक विटामिन होते हैं। विटामिनों के अतिरिक्त शहद में सोडियम, पोटेशियम, लोहा, क्लोरीन, फास्फोरस, आयोडीन, अल्म्यूनियम, निकिल और चांदी आदि खनिज तथा आक्सैलिक, आदि अम्ल भी पाये जाते हैं।

दुर्बल व्यक्ति को शहद प्रयोग करने से शक्ति प्राप्त होती है। इसके अतिरिक्त इससे जलन भी दूर हो जाती है। शहद को आंवले के रस के साथ समान मात्रा में प्रयोग करने से वयःस्थापन होता है। शहद का फेफड़ों, नेत्रों, कानों, त्वचा आदि के रोगों में तथा मधुमेह, रक्ताल्पता और बवासीर में उपयोग किया जाता है।

शुद्ध फिटकिरी के अनेक गुण

फिटकिरी दाढ़ी बनाने व रक्त स्राव रोकने तथा काजल आदि बनाने के कार्यों में हमारे देश में काफी समय से प्रयोग होती आ रही है। संस्कृत ग्रंथों में इसे तुवरी, सौराष्ट्र, स्फटिका, शुभ्रा, श्वेता आदि नामों से बताया गया है। रस रत्न समुच्चय ग्रन्थ में इसको तुवरी नाम दिया गया है। इसे बंगला में फट्करी, मराठी में फटकी, गुजराती में फटकड़ी, अंग्रेजी में एलम और लैटिन में एल्यूमैन भी कहते हैं। हिन्दी में भी इसको फिटकिड़ी, फिटकड़ी आदि नाम से कहे गये हैं अल्यूमिनियम तथा पोटेशियम सल्फेट का योग फिटकिरी कहलाता है।

पहले पंजाब प्रान्त में ज्यादा निकलती थी परन्तु अब बिहार, महाराष्ट्र, राजस्थान में भी व्यापारिक तौर से उत्पादित की जाती है। आग में फुला लेने से फिटकिरी शुद्ध हो जाती है। खाने में दवा के रुप में शुद्ध फिटकिरी ही प्रयोग करनी चाहिए।

औषधीय गुण

रसतरंगिणी में इसे कफ, पित्त नाशक, ज्वरनाशक, नेत्ररोग हितकारी, रक्त स्तम्भ, मुख रोग, गला एवं कर्णा रोग शामक कहा गया है। फिटकिरी बाह्य एवं अन्तः सभी प्रकार प्रयोग की जाती है। सस्ती होने के कारण सर्वसाधारण के लिए सुलभ भी है। अतः इसके बहुत लाभकारी प्रयोग भी हैं।

सामान्य प्रयोग

- फिटकिरी आंवला सार–गन्धक, कत्था, कच्चा सुहागा, मिश्री सभी १०–१० ग्राम लें। सब का चूर्ण लेकर उसको एक कप नींबू के रस में काफी मिला लें। एक दम महीन होने पर बड़े चने के बराबर गोलियां बना लें। दाद जैसे कठिन चर्म रोग को साफ कर सूखा करें और गोली पानी में घिसकर लगा दें। बहते हुए कान के लिए फिटकिरी, हल्दी, समुद्र फेन को एक साथ पीस लें और उसमें नींबू रस की कुछ बूंदे डाल कर कान में डाल दें।
- खूनी दस्त या खूनी आंव में भुनी घी में सौंफ के २५ ग्राम चूर्ण में एक चम्मच पिसी फिटकिरी और इन्द्रायण चूर्ण मिलाकर रख लें। चौथाई से आधा चम्मच तक दिन में दो बार देने से लाभ होता है।
- चेहरे पर मुहांसे बहुत कष्ट दे रहे हों तो भुनी फिटकिरी और काली मिर्च बराबर मात्रा में पीस कर पानी के साथ रात में गर्म पानी से चेहरे को धो कर लेपकरें। प्रातः धोकर तिल का तेल लगा लें। एक सप्ताह में चेहरे पर चमक आएगी।
- बवासीर के मस्सों पर फिटकिरी एवं मक्खन का लेप लगाने से मस्से सूख जाते हैं।
- प्रदर में एक पके केले को चीरकर उसमे चने बराबर पिसी फिटकिरी बुरक कर रात में सोते समय लगातार कुछ दिन तक सेवन करें। यह प्रयोग दोनों ही प्रदर पर लाभदायक है।
- टांसिल की तकलीफ में फिटकिरी और नमक के गर्म पानी से गरारा करने पर बहुत आराम मिलता है।
- ५० ग्राम गुलाब जल से चौथाई चम्मच पिसी फिटकिरी मिलाकर ड्रापर द्वारा आंखों में डालने से आंखों की जलन, दर्द तथा लाली में आराम आता है।
- शरीर के किसी भी भाग से रक्त बह रहा हो तो वहां पर तुरंत फिटकिरी चिपका दें। रक्त बहना रुक जाएगा।
- पेड़ या वाहन आदि से गिर जाने पर यदि अन्दरूनी चोट हो तो एक गिलास गर्म दूध में आधा चम्मच पिसी फिटकिरी मिलाकर तुरंत पिला दें। अन्दर का खून थक्का नहीं बनने पाएगा तथा दर्द में भी आराम होगा।
- नकसीर फूट गई हो तो फिटकिरी का लेप माथे पर करें। गाय के दूध में फिटकिरी मिलाकर नाक में डालने से भी नकसीर में लाभ होता है।
- आधा चम्मच फिटकिरी का चूर्ण समभाग मिश्री चूर्ण पानी से लेने से पेशाब में रक्त, नाक से रक्त या गुदा मार्ग से रक्त आने पर सभी में आराम होता है।
- फिटकिरी एवं मुर्दाशंख का महीन चूर्ण घावों में भरने से घाव जल्दी भर जाते हैं। मवाद वाले घावों पर भी इसका काफी अच्छा असर पड़ता है।
- दांत से मवाद आने पर या मुंह के लिसलिसे पर पर फिटकिरी एवं सेंधा नमक पीस कर उंगली या ब्रश से दिन में दो बार मन्जन की तरह मलें।
- फिटकिरी की भस्म प्रातः सांय मालिश करने से दांतों का मैल, पायरिया, दांत हिलना, दांतदर्द तथा दांत के कीड़ों वाली जगह भरने से आराम होता है।

- सरसों के तेल में फिटकिरी चूर्ण मिलाकर मालिश करने से हर प्रकार के दांत रोग ठीक हो जाते हैं।
- रक्त पित्त, पित्ती उछलने पर मिश्री एवं फिटकिरी का चूर्ण आधा चम्मच दूब के रस या जल में लेने से आराम होता है।
- मुनक्के या दही में एक ग्राम फिटकिरी भस्म डाल कर गले से नीचे उतरवा दें। इस क्रिया को दिन में तीन बार करने से अतिसार, पेचिश, संग्रहणी, खूनी बवासीर, रक्त प्रदर आदि में बहुत लाभ होता है।
- १०० ग्राम फिटकिरी चूर्ण के मध्य चावल भर अफीम रखकर मिट्टी के पात्र में आग पर चढ़ा दें तरल होने पर उतार लें फिर नीम की सींक से आंखों में आंजने की लाली आ जाने व पीड़ा आदि में आराम मिलता है।
- जब बुखार बहुत तेज हो रहा हो तो मृत्युंजय रस की एक गोली के साथ चने बराबर फूली फिटकिरी पीस कर गर्म जल से खिला देने पर बुखार उतर जाता है।
- फिटकिरी के गुनगुने पानी से गरारा करने पर या कुल्ला करने पर मुंह के छाले गले का दर्द, जीभ के छाले, टांसिल सभी में लाभ होता है।
- गर्म जल में फिटकिरी पीसकर बर्रे, बिच्छू, मधूमक्खी के दंश पर लगाने से इसमें लाभ होता है।
- छोटी हर्रे के क्वाथ में फिटकिरी मिलाकर गुदा धोने से बवासरी में लाभ होता है।
- मौल श्री की छाल के चूर्ण और फिटकरी के चूर्ण को एक साथ मिलाकर दांतों में रोज दो बार मलने से दांत मजबूत होते हैं।
- एक कप गुनगुने पानी में चौथाई चम्मच फिटकरी चूर्ण मिलाकर कान धोने से कान का बहना बन्द होता है।
- भुनी फिटकरी, चावल भर, कान में डालकर ऊपर से नींबू का रस डालने से कान दर्द में लाभ होता है।
- नेत्राभिष्यन्द में एक रत्ती फिटकरी अच्छी तरह पीसकर गुलाब के अर्क में मिलाकर उसकी दो चार बूंदें आंख में डालने से आंख की लाली और दर्द में लाभ होता है।
- कुक्कुर खांसी में फुलाई हुई फिटकरी का चूर्ण दो तीन रत्ती शहद में मिलाकर चटाने से लाभ होता है।

गुलाबी फिटकरी

यह फिटकरी का एक प्रकार है इसके गुण अधिकतर सफेद फिटकरी के समान हैं। यूनानी मत के अनुसार इसके निम्न औषधीय उपयोग हैं–

- एक माशा फिटकरी चूर्ण, तीन माशा मिश्री के चूर्ण के साथ कपकपी वाले ज्वर में जाड़ा लगने के पूर्व देने से लाभ होता है। यदि ज्वर फिर भी आ जाये तो चार दिन तक इसका निरन्तर प्रयोग करते रहने से लाभ होता है। इस रोग में रोगी को दूध और चावल पथ्य है।
- गुलाबी फिटकरी दस तोला, काली मिर्च चार तोला, नीम के पत्ते सेर भर के लगभग लेकर पहले पत्तों को पीसें फिर फिटकरी और काली मिर्चों का चूर्ण उसमें मिलाकर घोटें और चने के बराबर गोलियां बना लें। ज्वर आने के पूर्व इसकी गोली खाने से ज्वर नहीं आता है। ज्वर के समय भी यह गोली लाभदायक है।
- पार्श्वशूल के रोगी को तीन–तीन घंटे पर उपरोक्त एक एक गोली देने से लाभ होता है।
- प्लेग के ज्वर में भी यह दवा लाभदायक है।

श्रंद्धाजलि

हमें अपने पाठकों को यह सूचित करते हुए बहुत दुःख है कि जीवनीय परिवार से लम्बे समय से संबद्ध रहे गुजरात के प्रसिद्ध वैद्य भानु प्रताप मिश्र जी का अचानक देहान्त हो गया है। मिश्र जी पूरी लगन और निष्ठा से आयुर्वेद की सेवाओं में लगे हुए थे। वैद्य मिश्र जी का असमय निधन न केवल जीवनीय परिवार वरन समस्त आयुर्वेद जगत के लिए अपूरणीय क्षति है। समस्त जीवनीय परिवार उनकी आत्मा की शांति की प्रार्थना करता है।

बहूपयोगी इलायची

मसालों में इलायची का अपना एक विशिष्ट स्थान है। इसका उपयोग खाने पीने की वस्तुओं में तो होता ही है, साथ ही यह औषध और सुंगध उद्योगों के लिये भी महत्वपूर्ण है। इलायची को कई रोगों में घरेलू दवा की तरह भी इस्तेमाल किया जाता है। इतनी उपयोगी वनस्पति हमारे देश की ही उत्पत्ति है। हमारे देश में एक लाख हेक्टेयर से अधिक क्षेत्र पर इलायची की खेती की जाती है जिससे चार हजार टन इलायची का उत्पादन होता है। सबसे अधिक इलायची केरल में उगायी जाती है। इसके बाद कर्नाटक और तमिलनाडु का स्थान है।

इलायची आकार के अनुसार दो प्रकार की होती है। १. छोटी इलायची, २. बड़ी इलायची। छोटी इलायची का वानस्पतिक नाम इलेटेरिया कार्डामोमम है। इसे गुजराती इलायची या सफेद इलायची भी कहते हैं। संस्कृत में एला, सूक्ष्मैला, क्षुदैला आदि इसके नाम हैं। इसे गुजरात में एलची, मराठी में बेजची, बंगला में एलाइच आदि नामों से भी जाना जाता है।

बड़ी इलायची का वैज्ञानिक नाम एमोमम एरोमेटिकम है। दोनों ही जिंजीबरेसी कुल की हैं। इलायची के उत्पादन के लिए नम गर्म जलवायु, पर्याप्त वर्षा और दुमट मिटटी की आवश्यकता होती है। इसका पौधा दो से पांच मीटर लम्बा होता है। पत्तियां ३० से ९० सेंटीमीटर तक लम्बी होती हैं। असली तना प्रकन्द के रूप में जमीन के भीतर होता है। जमीन के ऊपर का तना पत्तियों के आवरण से बनता है। इसी से लम्बा वृत्त या डंठल निकलता है जिस पर फूल लगते हैं। फूलों के निकलने का समय अप्रैल माह से अगस्त तक होता है। इसके पश्चात जनवरी तक फल मिलते हैं। इसके बीज वायु में खुले रखने से खराब हो जाते हैं अतः इसे आवश्यकता होने पर ही छीलना चाहिए। इलायची तीन वर्षों तक प्रभावकारी रहती है।

इलायची में कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, खनिज, रेशे, नमी, कैल्सियम, फॉसफोरस, लोहा, विटामिन्स, मैग्नीशियम, ताँबा, जस्ता आदि उपयोगी तत्व उपस्थित होते हैं। इसकी सुगंध का कारण इसके दानों में उपस्थित उड़नशील तेल और अन्य रसायन हैं जो दानों को महकाते हैं। पुलाव, खीर, रसगुल्ले, केक, पेस्ट्री, बिस्कुट, मीठे अचार, चाय, काफी आदि व्यंजन इलायची के दानों से महकते हैं पान के बीड़े में भी इलायची की खास जगह है।

औषधीय प्रयोग

आयुर्वेद मत से इलायची शीतवीर्य है। यह दीपन, वातानुलोमक, सौमनस्यजनन और अवसादक है। इलायची में बहुत से औषधीय गुण होते हैं। इसके औषधीय प्रयोगों में से चार प्रमुख हैं– सुगंध के द्वारा भूख जगाना, गैस या वात खत्म करना, पाचन बढ़ाना और बहुमूत्रल अर्थात अधिक मूत्र उत्पन्न करना। चाय के पानी में इलायची के पिसे दानों को उबालकर पीने से कम पेशाब की शिकायत, अतिसार (डायरिया), पेचिश, ज्यादा काम करने की थकान, दिल की तेज धड़कन, मानसिक अवसाद (डिप्रेशन) आदि रोगों में लाभ होता है। इलायची के दाने अदरक, लौंग और जीरा पीसकर फाँकने से पेट की कई शिकायतें दूर होती हैं। इलायची चूसने से मितली और उल्टी बंद हो जाती है। भोजन के बाद इलायची चबाने से पित्त के विकार दूर हो जाते हैं।

इलायची के दानों के साथ काली मिर्च पीसकर खाने से कफ–खाँसी ठीक होती है, बुखार में भी आराम आता है। गले की सूजन और गले के घरघराने पर इलायची और दालचीनी के काढ़े का गरारा बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। प्रतिदिन गरारा करने से फ्लू पास नहीं फटकता।

छाले निकलने पर इलायची के दानों को पीसकर शहद में मिलाकर लगाने से आराम मिलता है। प्रतिदिन एक छोटी इलायची एक चम्मच शहद के साथ खाने से आँखों की दृष्टि बनी रहती है और दिमाग व तंत्रिका तंत्र मजबूत रहता है।

बड़ी इलायची के बीज हृदय और जिगर के लिए टॉनिक का काम करते हैं। खरबूजे के बीजों के साथ इलायची के बीज मिलाकर सेवन करने से यह बहुमूत्रल का काम करता है। इससे गुर्दे की पथरी दूर करने में भी मदद मिलती है। दांतों और मसूढ़ों के रोगों में इसके काढ़े से गरारा करने पर आराम होता है। इसके छिलके को दांतों पर रगड़ने से दांत का दर्द दूर होता है। पलकों की सूजन में बड़ी इलायची से मिले तेल को लगाने से फायदा होता है

लाल मिर्च केऔषधीय गुण

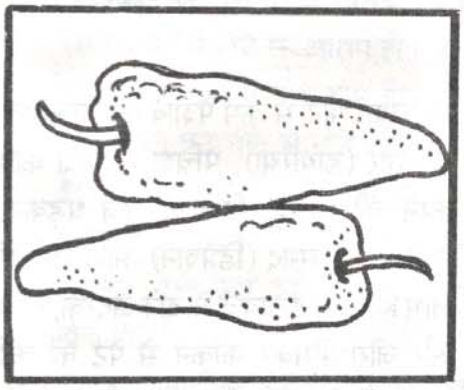

मिर्च हमारी दिन प्रतिदिन की आवश्यक भोजनार्थ वस्तुओं में से एक है। इसके अनेक प्रकार हैं जैसे हरी मिर्च, लाल मिर्च, शिमला मिर्च, पटना मिर्च, जयपुरी मिर्च इत्यादि। "आयुर्वेद" चिकित्सा पद्धति ने मिर्च में अनेक औषधीय गुण बतलाये हैं। आयुर्वेदाचार्यों के अनुसार मिर्च की तासीर गरम होती है और ये हल्की, रूखी व चरपरी होती है। इसका चरपरापन इसमें उपस्थित चरपरे तत्व कैप्सेकिन के कारण होता है जिसकी मात्रा ०.१ प्रतिशत होती है।

भाषावार नाम- हिन्दी- लालमिर्च, मिरचा; संस्कृत- कदुवीरा, लंका, रक्तमरिच; बंगला- लंका मरिच, गाछमरिच; मराठी- लालमिर्ची; गुजराती- मरचाँ; अंग्रेजी- रेडचिली, पीपर, बर्डचिली, कैप्सिकम; लैटिन- कैप्सिकम फ्रूटेस्सेंस।

मिर्च का मूल उत्पत्ति स्थान अज्ञात है। कुछ विद्वानों के अनुसार इसे पुर्तगाली लोग भारतवर्ष में लाये तथा यहां से यह सन १५१५ में इंग्लैंड पहुंची। भारतवर्ष के लगभग सभी भागों में इसकी खेती होती है तथा हरी मिर्च साल भर सब्जी बाजारों में व लाल मिर्च पंसारियों के यहां मिलती है।

विटामिनों और खनिज तत्वों से परिपूर्ण होने के कारण मिर्च बहुत लाभकारी होती है। इसमें प्रोटीन, वसा, कार्बोहाइड्रेट, कैल्सियम, फॉस्फोरस, लौह, विटामिन सी, विटामिन ई व कैरोटिन बहुतायत में होते हैं। इनके अतिरिक्त एल्यूमिनियम, थोरियम, ताम्र, लीथियम, मैगनीज, सिलिकॉन, टिटेनियम इत्यादि तत्व भी अल्प मात्रा में उपस्थित होते हैं। सूखे फलों में से लाल रंग का गाढ़ा स्थिर तेल तथा उड़नशील तेल भी प्राप्त होता है।

चरपरी तथा गरम होने के कारण मिर्च कफजन्य तथा वायुरोगों को दूर करती है। साथ ही गरम तासीर वाली होने से यह पित्त को बढ़ाती है। गरमी से पीड़ित तथा पित्त प्रकृति वालों व एसिडिटी, पैप्टिक अल्सर इत्यादि के रोगियों को मिर्च का अधिक सेवन नहीं करना चाहिए।

- कफ के कारण उत्पन्न सिरदर्द, आमवात, कमर का दर्द, पार्श्व शूल, डिफ्थीरिया एवं सायटिका रोग में मिर्च का लेप लगाया जाता है। कुत्ता काटने पर मिर्च के पाउडर का लेप लगाने से विष बाहर आ जाता है, दर्द कम हो जाता है और घाव में मवाद भी नहीं बन पाता है।
- चर्म रोगों में पिसी हुई मिर्च को सरसों के तेल में पकाकर लगाने का रिवाज आज भी हमारे ग्राम्यांचलों में प्रचलित है। यदि किसी व्यक्ति को साँप काट गया हो और ये पता लगाना हो कि साँप जहरीला था कि नहीं तो उस व्यक्ति को लालमिर्च चबाने के लिए देनी चाहिए।
- यदि साँप जहरीला था तो उस व्यक्ति को मिर्च बिल्कुल चरपरी नहीं लगेगी।
- बिच्छू काटने पर काटे हुए स्थान पर तत्काल मिर्च को पानी में पीसकर लगाने से शीघ्र आराम हो जाता है।
- मलेरिया इत्यादि बुखारों में मिर्च से बनी "विषम- ज्वरघ्नी वटी" लाभकारी होती है। गले के कफजन्य रोगों में मिर्च के काढ़े से कुल्ले कराये जाते हैं। मिर्च का सेवन करने से मूत्र-त्याग की कठिनाई दूर होकर पेशाब खुलकर आता है।
- हैजा होने पर हींग और कपूर के साथ मिर्च का चूर्ण मिलाकर गोली बनाकर देने से रोगी को आराम मिलता है और उसमें अवसाद (डिप्रेशन) नहीं होने पाता। लाल मिर्च के बीज निकाल कर, छिलकों को बारीक पीसकर, कपड़े से छानकर तैयार चूर्ण को शहद में मिलाकर, दो दो रत्ती की गोलियां बनाकर छाया में सुखा देनी चाहिए। हैजे के रोगी को प्रति दो तीन घंटे बाद एक गोली ठंडे पानी से दी जानी चाहिए।
- मिर्च में "अग्नि प्रदीप्त" अजीर्ण इत्यादि के गुण के कारण भोजन के प्रति अरुचि, अग्निमांद्य, अजीर्ण इत्यादि उदर विकारों में इसका सेवन कराया जाता है।
- मोटापे से पीड़ितों के लिए इसका नियमित सेवन लाभदायक होता है।

बाकुची

आयुर्वेदाचार्य एस.ए. खान, लखनऊ

बाकुची या बाउची के काले या भूरे रंग के बीज बाजार में मिलते हैं। ये एक छोटे से क्षुप के बीज होते हैं। इसमें एक विशेष प्रकार की गन्ध होती है। औषध के रूप में बाकुची के बीजों का ही प्रयोग किया जाता है। बाकुची का प्रयोग अधिकतर श्वित्र (सफेद दाग) रोग पर किया जाता है।

विभिन्न भाषाओं में बाकुची के नामः हिन्दी – बाकुची, वाकुची, बाउची; संस्कृत – बाकुची, सोमराजी; पंजाबी ,मराठी और गुजराती – बावची; बंगाली – हाकुच; तेलुगु – बावंचि; तमिल – कार्पोकराति; अंग्रेजी – पर्पुल फ्लीबेन; लैटिन – सोरालिया कोरिलीफोलिया।

बाकुची के बीजों का रस कसैला और कड़वा होता है। वीर्य उष्ण और पचने पर विपाक कटु हो जाता है। अधिक मात्रा में देने पर रेचक और आँतों में क्षोभ उत्पन्न करता है।

औषधीय गुण

यह वात, कफ शामक और पित्त वर्धक होता है। कफज रोग, कुष्ठ, पामा, दाद, कफज कब्ज, कृमि, सफेद दाग आदि में लाभ करता है। बाकुची के बीजों को शुद्ध करके ही प्रयोग करना चाहिये।

बाकुची का शोधन – बाकुची के बीजों को गोमूत्र में सात दिन तक भिगो कर रखना चाहिये। नित्य गोमूत्र बदलते रहना चाहिये। फिर पानी से धोकर सुखाकर रख लें। बाकुची के बीजों का प्रयोग अकेले तथा योगों में भी किया जाता है। इसके तेल का भी प्रयोग त्वक् रोगों व सफेद दाग में किया जाता है।

सफेद दाग में बाकुची का प्रयोग

बाकुची के शुद्ध बीजों को पानी में पीसकर

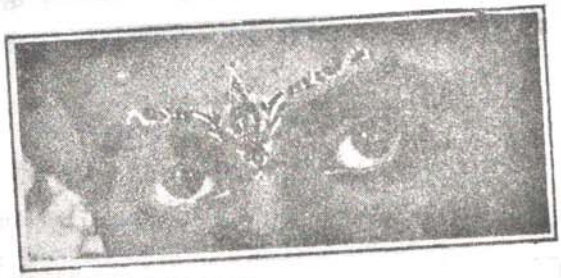

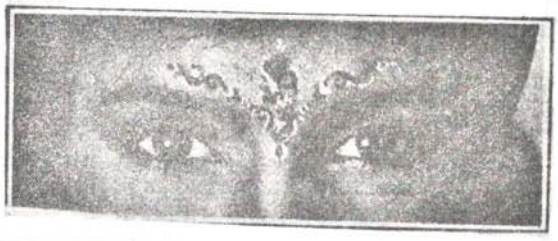

बिंदिया के दाग का इलाज

चटनी की तरह बनाकर सफेद दागों पर लेप करते हैं। बगैर शुद्ध किये बीजों को पानी में या गोमूत्र में पीसकर लेप करते हैं। किसी–किसी रोगी में दाग के स्थान पर फफोले पड़ जाते हैं। इन छालों को फोड़कर उस पर तिल का तेल लगाना चाहिये। मरिचादि तेल भी लगा सकते हैं। फफोले के स्थान की त्वचा पूर्ववत् हो जाने पर सामान्य रंग की हो जाती है। यदि ऐसा न हो तो दुबारा उपरोक्त प्रयोग दोहराना चाहिये।

कभी–कभी बाकुची लगाने के स्थान पर फुंसियाँ और दाने निकल आते हैं। इन पर मरिचादि तेल लगाना चाहिये। दाने ठीक हो जाने पर पुनः बाकुची लेप लगाना चाहिये और तब तक लगाते रहना चाहिये जब तक त्वचा का रंग काला न हो जाये।

बाकुची और बिछुआ के बीज बराबर–बराबर मात्रा में लेकर पानी या गोमूत्र, मट्ठे, कांजी या सिरके में पीसकर लगाना चाहिये।

कभी–कभी बाकुची का लेप लगाने से दाग वाले स्थान पर शीघ्र प्रभाव नहीं जान पड़ता। ऐसी स्थिति में बाकुची के बीजों के साथ चित्रक मूल या कठगूलर की छाल बराबर मात्रा में मिलाकर लेप किया जाये। इससे छाले मिट जाते हैं और दाग शीघ्र ठीक होने लगते हैं।

कभी–कभी ऐसा भी होता है कि यदि दाग वाले स्थान को ताँबे की वस्तु से खुरच कर बाकुची का लेप लगाया जाये तो शीघ्र लाभ होता है। इसी प्रकार दाग खुरच कर बाकुची का तेल लगाया जा सकता है।

श्वित्र पर किये गये अपने अध्ययन में मैंने पाया है कि बाकुची के प्रयोग के साथ यदि रोगी की प्रकृति निर्धारित कर तदनुसार आहार–विहार सेवन कराया जाये और बाकुची का आंतरिक सेवन भी कराया जाये तो लाभ अधिक होता है। मात्र लेप लगाने से सभी रोगियों पर एक सा लाभ नहीं होता है। श्वित्र रोग जितने कम समय का होता है लाभ उतना ही शीघ्र होता है। साथ ही मोटे तौर पर कफ, पित्त वर्धक आहार–विहार वर्जित करना होता है।

महागुणकारी लहसुन

आयुर्वेदाचार्य एस.ए.खान, लखनऊ

लहसुन इतना सुपरिचित कन्द है कि इसे खाने वाले तथा इससे परहेज़ करने वाले सभी इसे जानते हैं। इससे परहेज़ करने वाले इसकी दुर्गन्ध और तामसिक होने का तर्क देकर इसे नहीं खाते। परन्तु वास्तविकता यह है कि लहसुन एक महौषधि है। सम्भवतः इसकी रक्षा के लिये प्रकृति ने इसमें दुर्गन्ध पैदा की है। जो इसके असंख्य औषधीय और रसायन गुणों का लाभ उठाना चाहते हैं उन्हें इसकी दुर्गन्ध को सहन करना ही पड़ेगा। इसकी दुर्गन्ध भी शरीर के लिये लाभदायक ही है। इसके प्रयोग से पित्त का स्राव अधिक होने लगता है अतः पित्तज प्रकृति वाले व्यक्तियों या पित्तज रोगों से पीड़ित रोगियों को इसका सेवन नहीं करना चाहिये, कम करना चाहिये या युक्तिपूर्वक घी आदि के साथ प्रयोग करना चाहिये। वृद्धों और बच्चों के लिये तो यह अमृत के समान है। साथ में वात कफ शामक आहार-विहार का भी सेवन करना चाहिये।

भाषावार नाम :- हिन्दी - लहसुन; संस्कृत - रसोन, लभुन; बंगाली - रभुन; मराठी - लसूण; गुजराती - लसण; पंजाबी एवं सिन्धी - गलि, थूम; कन्नड़ - रोहन; अरबी - सूम, फूम; फ़ारसी - सीर; मा. - लहसण; अंग्रेज़ी - गार्लिक; लैटिन - एलियम सेटाइवम।

आयुर्वेदानुसार गुण

अम्ल को छोड़कर इसमें सभी ५ रस पाये जाते हैं परन्तु कटु रस प्रधान होता है। इसके कन्द में कटु रस की प्रधानता होती है। पौधे के अन्य भागों में अन्य रसों की प्रधानता होती है। इसका वीर्य (तासीर) गर्म होता है। विपाक भी कटु होता है। यह उत्तम वात कफ शामक और पित्त सारक होता है।

औषधीय मात्रा : २ से ४ ग्राम तक।

औषधीय गुण

यह चिकना, गरम, तेज़, लसलसा (पिच्छिल), भारी, सर, वात को निकालने वाला (गैस खारज कराने वाला), शुक्र वर्द्धक, स्मरण-शक्ति वर्द्धक, कृमिहर, सफेद दाग, कोढ़ नाशक, टूटी हड्डियों को जोड़ने वाला, वात की बीमारियों, हृदय रोग, उदर शूल, कब्ज़, गुल्म, अर्श, शोष (टी.बी.), अग्निमांद्य और वात कफ शामक है।

कुछ औषधीय उपयोग

सूखी खाँसी (वातज कास) : जब सूखी खाँसी आती हो, कास के वेगों के साथ पसलियों में दर्द होता हो, बलग़म बिल्कुल न निकलता हो, ऐसी स्थिति में कच्ची लहसुन २ से ४ माशा चबाकर गुनगुना पानी पीना चाहिये। श्वास में भी लाभदायक है।

जीर्ण प्रतिश्याय : जब बार-बार ज़ुकाम होता हो तो लहसुन के लगातार प्रयोग से लाभ होता है।

पुराना कब्ज़ : पुराने कब्ज़ में प्रातः तथा शाम कच्चा लहसुन प्रयोग करने से कब्ज़ दूर होकर मल साफ होता है। भूख लगने लगती है। पाचन क्रिया सुधरती है। आँतों की सूजन हो तो कम होकर उदर हल्का हो जाता है।

गैस बनना : जिन लोगों को गैस अधिक बनती है उन्हें कच्चा लहसुन प्रयोग करना चाहिये या ३० ग्राम अजवायन, ३० ग्राम काला नमक, ३० ग्राम लहसुन, ५ ग्राम हींग घी में भुनी (असली हींग) पीसकर मटर के बराबर गार्लिक बना लेनी चाहिये। २ से ४ गार्लिक उष्ण जल या मट्ठे से लें।

अग्निमांद्य या धातुज अग्नि मांद्य : इसमें पहले जठराग्नि का अग्निमांद्य होता है फिर धीरे-धीरे जब आमरस और आमदोष धातुओं में पहुंच जाता है तब अन्न रस से रक्त, मांस, मेद, अस्थि आदि धातुओं का उत्तरोत्तर सम्यक निर्माण नहीं हो पाता, ऐसी स्थिति में रक्तवाहिनियों में अपक्व मेद जमने लगता है तथा रक्त में भी मेद मिल जाता है। इसको संभवतः "रक्तगत कोलेस्ट्रॉल" कहते हैं यदि कच्चे लहसुन को लगातार प्रयोग किया जाये तो रक्त में कोलेस्ट्रॉल की मात्रा कम हो जाती है।

"गार्लिक पर्लस" या लहसुन की गन्ध समाप्त करने के लिये उसे २४ घन्टे खट्टी दही या मट्ठे में भिगोकर रखने या तेल में तलकर पाउडर बना लेने से यह उतना गुणकारी नहीं रहता जितना कि ताज़ा रहता है।

वात की बीमारियाँ : शियाटिका, आमवात, सन्धिवात, लकवा, वातज, शिरःशूल, उदर शूल, पसलियों में दर्द आदि सभी वात रोगों में लहसुन लाभदायक है। इसे लगातार नियम से ३ माह तक प्रयोग करें।

→

लहसुन के लाभकारी योग

श्रीमती सुनन्दा रानाडे, पुणे

अजीर्ण और अग्निमांद्य में : लहसुन का शर्बत १ चाय चम्मच ताज़े पुदीने का रस और आधा चम्मच अदरख के रस के साथ देना चाहिये।

लहसुन का शर्बत : १ आड़ी लहसुन की कलियों को छीलकर छिलका उतारकर पीस लें फिर उसे १० मि.ली. शुद्ध गन्ने के रस के सिरके में उबाल लें। ठन्डा होने पर छान लें और बराबर मात्रा में मधु मिलाकर साफ बोतल में सुरक्षित रख लें। यह शर्बत अतिसार, पेंचिश और संग्रहणी में भी लाभकर है।

बच्चों के बलगम को पतला करने के लिये लहसुन को कड़वे तेल में पकाकर गुनगुना होने पर छाती और गले पर मलने से लाभ होता है।

काली गाय के ५ लीटर दूध में १० पुतिया पिसा लहसुन, एक चम्मच इलायची पाउडर और २ इंच के दो टुकड़े दालचीनी पीसकर कपड़े की एक पोटली बनाकर डालें। धीरे-धीरे दूध को पकायें, जब दूध गाढ़ा होने लगे तब पोटली को दबाकर दूध में निचोड़ दें और दूध को चलाते जायें जब दूध का खोया बन जाये तो उसे आग पर से उतार लें। खोये के बराबर शहद मिला लें। पोटली का बाकी बचा रस भी दबाकर निचोड़ लें। एक चम्मच ज़ाफ़रान, एक बड़े चम्मच शुद्ध गुलाबजल में घोलें और खोये में मिला दें। ठन्डा करके एक जार में सुरक्षित रख लें। खाने के बाद दूध या पानी से दो बार दें। कास और दमा की यह अति उत्तम औषधि है। लकवा, नाड़ी शोथ, हाथों की नाड़ियों की कमज़ारी से काँपने में लाभदायक है। स्वस्थ लोग यदि एक बार नियमित रूप से लें तो शक्तिवर्द्धक, आयुवर्द्धक है।

वातज व्याधियाँ : आमवात, सन्धिवात और नाड़ियों के शोथ (वात प्रकोप) आदि के रोगियों के लिये वरदान है। इन लोगों को वर्धमान रसायन की तरह इसका प्रयोग करना चाहिये।

वर्धमान लहसुन रसायन : ४ जवा लहसुन दूध में उबालकर छानकर सोने के समय लें। रोज एक जवा लहसुन बढ़ाते जायें जब तक १० जवा न पहुंच जायें। फिर एक जवा लहसुन रोज घटाते जायें जब तक ४ जवा न आ जायें। इस प्रक्रिया को ४० दिन तक करें।

नजर की कमजोरी और ब्रेन एनिमिया में ताज़ा लहसुन का जूस दिया जाता है।

शोथ, मूत्रकृच्छ, विषम ज्वर और जीर्ण ज्वर में २५ मि.ली. लहसुन का क्वाथ तीन बार दिन भर में दिया जाता है। एक गिलास जल में १० जवा लहसुन कुचल कर डालें और उबाल लें। १/४ रहने पर उतार कर छान लें।

दर्दनाशक के रूप में इसका कल्क जोड़ों पर प्रयोग करते हैं या स्वरस को शूल युक्त पसलियों पर लगाते हैं।

एग्ज़ीमा (शुष्क) पर भी इसका रस लगाते हैं।

नारियल तेल में लहसुन पकाकर कान में डालने पर कान का दर्द जाता रहता है।

मूत्र रुकने में लहसुन की पुल्टिस पेट पर बाँधते हैं।

प्याज़ के साथ इसका प्रयोग रक्त कोलेस्ट्रॉल को कम करता है तथा बढ़े रक्तचाप व हृदय रोग में लाभदायक है।

→

- आमवात, जोड़ो का दर्द, पसलियों में दर्द, सर्दी के कारण दर्द आदि में लहसुन की जड़ को तेल में जलाकर मालिश करने से लाभ होता है।
- वृद्ध लोगों के लिये यह महौषधि है, रसायन है, अमृत है। वृद्धावस्था में वात कफ का प्रकोप होता है और लहसुन अच्छा वात कफ शामक होता है। अतः वृद्धों को इसका उपयोग नियमित रूप से करना चाहिये। धमनी काठिन्य, रक्तज कोलेस्ट्रॉल व वात के स्वाभाविक प्रकोप का शमन होकर वृद्ध लोगों को इसके गुणों का लाभ प्राप्त होगा। परन्तु उन्हें जहाँ तक हो सके एक पोतिया लहसुन की व्यवस्था करके उसे ही सेवन कराना चाहिये।

लहसुन सेवन के अयोग्य व्यक्ति : पित्तज (उष्ण) प्रकृति, अर्श के रोगी, गर्भवती स्त्रियाँ व कृश (अत्यन्त दुबले) पुरुषों को इसका प्रयोग नहीं करना चाहिये।

लहसुन प्रयोग के समय परहेज : अधिक शारीरिक श्रम, धूप का सेवन, क्रोध, दूध का अति सेवन, गुड़, दही का सेवन, दिन में सोना, मछली का सेवन, रात्रि जागरण, अधिक यात्रा करना, तेल में तले-भुने पदार्थ, सिरका, क्षार द्रव्यों व मद्य का सेवन नहीं करना चाहिये। इनके सेवन से पित्त के प्रकोप की सम्भावना रहती है।

अन्डे : प्राचीन एवं आधुनिक विचार

वैद्य रमेश नानल, बम्बई

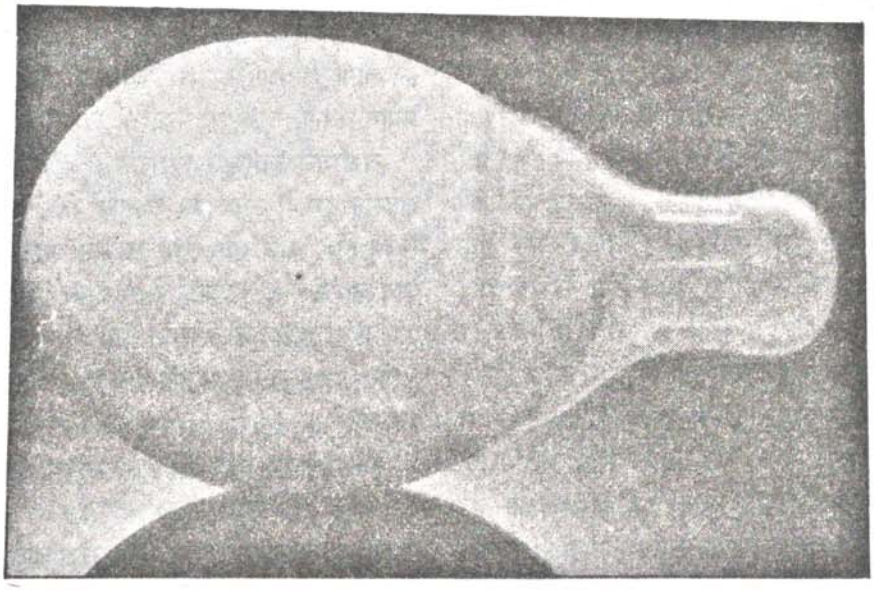

आजकल हर एक प्रचार माध्यम द्वारा अन्डे खाने का प्रचार धूम से हो रहा है। "सन्डे हो या मन्डे रोज खाओ अन्डे"। अमरीका में प्रति व्यक्ति तीन सौ पांच अन्डों का सेवन किया जाता है जो भारत में पांच अन्डों तक ही सीमित है। इसके कई कारण हो सकते हैं परन्तु एक महत्वपूर्ण कारण शाकाहारी प्रवृत्ति और दूसरा कारण वैद्यकीय दृष्टि से उनको समर्थन प्राप्त नहीं होना है।

यजुर्वेद में अन्डों का वर्णन प्राप्त होता है। चरक संहिता में भी उनका वर्णन मिलता है। लगभग ३२०-३५० वर्ष ईसा पूर्व में आचार्य विष्णुगुप्त चाणक्य ने कुक्कुट के चार गुणों का वर्णन किया है-

"प्रत्युत्थानं च युद्धं च संविभागं च बंधुषु।
स्वयमाक्रम्यभुक्तं च शिक्षेच्चत्वारि
कुक्कुटात्।।"

नीतिदर्पण

इससे प्राचीन भारत में मुर्गी पालन एवं अन्डे तथा उनके प्रचार की जानकारी मिलती है।

भारत की प्रथम पंचवर्षीय योजना में इसे व्यावसायिक स्तर प्राप्त हुआ। इस व्यवसाय का १९६० से मुर्गी का मांस एवं अन्डों की बढ़ती मांग के कारण काफी उत्कर्ष हुआ।

आयुर्वेदीय विचार

आयुर्वेद ने बारह प्रकार के आहार वर्ग बताये हैं। इनमें से एक विश्किर वर्ग है जिसमें अन्न को बिखेरकर अथवा कुरेदकर चुगने वाले पक्षी आते हैं।

नर मादा संबंध के बाद पैदा हुए अन्डे अधिक उपयुक्त माने जाते हैं क्योंकि इनकी प्रवृत्ति नैसर्गिक होती है। बिना नर मादा संयोग के उत्पन्न खाकी अन्डों के गुण प्राकृतिक अन्डों के समान होना संदेहास्पद है।

नैसर्गिक रूप में आहार पाने के लिए मुर्गियों को काफी परिश्रम पड़ता है वे विभिन्न प्रकार के अन्न और कीट तथा वनस्पतियों का सेवन करते हैं। व्यायाम तथा विभिन्न स्वरुप के आहार के पचन के बाद उत्पन्न होने वाले अन्डे और बिना परिश्रम भरपेट कृत्रिम आहार व रसायनों के उपयोग से उत्पन्न होने वाले अन्डे गुणात्मक रूप से समान नहीं हो सकते हैं।

मांस की अधिक वृद्धि के लिए आजकल मुर्गियों को हारमोन दिये जाते हैं जिनसे उनके मांस में इन हारमोनों के अवशेष मांसाहारियों को नुकसान पहुंचा सकते हैं। दूसरी ओर मध्यप्रदेश के तांबा और लोहा पाये जाने वाले क्षेत्रों में आदिवासी काले रंग के कड़कनाथ मुर्गे पालते हैं इनके मांस में लाभदायक लौह और ताम्र तत्व पाये जाते हैं।

द्रव्यगुणात्मक विचार

"धार्तराष्ट्र चकोराणां दक्षाणां
शिखिनामपि।
चटकानां च यानिस्स्युः
अंडानि च हितानि च।।"

"रेतः क्षीणेषु कासेषु हृद्रोगेषु क्षतेषु च।
मधुराण्य विदाहीनि सधोबलकराणिच।।"

च.सू.अक्षपानविधि

"ग्राम्य कुक्कुटः गुरुस्तु सः।
तातरोगसयवमी विषमज्वरनाशनः।। सु.सू.

"नातिस्निग्धानि वृष्याणि
स्वादुपाकरसानि च।
वातघ्नान्यातिशुक्राणि
गुरुण्यंअनिपक्षिणाम्।।

भाव प्रकाश, पूर्व खण्ड, मांस वर्ग

तीनों ही आप्तोने कुक्कुटांड की उपयोगिता वर्णन की है।अन्डों का द्रव्यगुणात्मक विचार इस प्रकार है।

रस – मधुर; **वीर्य** – उष्ण;

विपाक – मधुर;

गुण – स्निग्ध, गुरु मंद–पिच्छिस–मृदु;

दोषघ्नता – वातघ्न नाशक, कफवर्धक

धातु क्रिया – रस, मांस, भेद व विशेषतः शुक्रवर्धन;

विशिष्टकर्म – सद्योबलकर– तुरंत शक्ति बढ़ाने वाला, वृष्य, शरीर एवं मन को प्रसन्नता एवं उत्साह देने वाला;

अतिशुक्रल– शुक्र को खूब बढ़ाने वाला;

रोगघ्नता – राजयक्ष्मा, कास क्षयजकास, हृद्रोग वात–पित्तप्रकोपजन्य उरःक्षत छाती में व्रण होना, क्षत व्रण प्रकार वातरोग वात प्रकोप व विशेषतः धातुक्षयज वात रोग वमी– छर्दि–उल्टियां होना, विषमज्वर– वातप्रधान और पित्तप्रधान।

अन्डे रोज खाने का आग्रह बिना किसी भी "सापेक्षता" के विचार से केवल घटक द्रव्यों की उपस्थिति का प्रमाण दिखाकर किया जाता है। उदाहरणार्थ अन्डे में "प्रोटीन का भण्डार होता है" इसलिए रोज खाना उचित है। यह पूर्ण सत्य नहीं है। क्योंकि पहले अन्डों का योग्य पाचन होना आवश्यक है अर्थात् "अग्नि सापेक्षता" विचार अनिवार्य है। पदार्थ चाहे कितना भी उपयुक्त क्यों न हो उसका उपयोग तभी सिद्ध होगा जब वह पच जाए और अन्डा भी इसका अपवाद नहीं हो सकता।

कुक्कुट स्वभावतः श्रमजीवी , विचरणशील, नैसर्गिक अन्न सेवन करने वाला प्राणी है। आधुनिक पोल्ट्री में पूर्ण विरोधी पर्यावरण में इन्हें रखा जाता है। इन्हें जरा सा भी परिश्रम न हो इसका पूरा ध्यान दिया जाता है। अन्न भी मानों परोसकर उन्हें थाली में दिया जाता है। यह अन्न भी संतुलित रूप में ही होता है। सूर्यास्त के बाद अन्न सेवन न करने की पक्षियों में स्वभाविक प्रवृत्ति होती है। इसे भी जान–बूझकर नष्ट किया जाता है और कृत्रिम प्रकाश योजना भी की जाती है जिससे ये प्राणी अपना स्वभाव छोड़कर रात्रि में भी खाता ही रहता है।

अन्डों का उत्पादन बढ़ाने के लिए कृत्रिम संप्रेरकों (हारमोन) का प्रयोग किया जाता है। इससे प्राणी को निर्जीव यन्त्रवत् अन्डे देने के लिए बाध्य किया जाता है। उसी प्रकार भूख बढ़ाने के लिए भी अन्य अनेक औषधियों का प्रयोग निरंकुश रुप से होता है। परिणाम स्वरूप इन औषधियों का अपाचित अवशेष भाग मांस एवं अन्डों में रहता है। यह मनुष्य के लिए घातक और रोगकर हो सकता है।

मुर्गी के कृत्रिम अन्डे के गुण बदल जाते हैं। उदाहरणार्थ शुक्रजनन स्वभाव बदल जाता है और उसकी अपेक्षा मांस रस इत्यादि धातुओं पर अधिक प्रभाव पड़ता है। स्वाभाविक गुरुता पिच्छिलिता बढ़ती है जिससे रस धातु की विकृति होकर हृदय रोग का कारण बन सकती है। शरीर में अतिरिक्त अपाचित धातु विकृत होकर रस–रक्त एवं मेद तथा इनकी वाहिनियों में अवरोध उत्पन्न होता है। इससे असाध्य धमनी प्रतिचय हृद्शूल आदि रोग बढ़ते हैं। इस प्रकार के अन्डों से आमदोष भी बढ़ते हैं।

अन्डे का वजन लगभग ३० ग्राम होता है। इसमें अन्डे का छिलका १०% सफेद हिस्सा ५७% पीला हिस्सा ३२% होता है। पोषक तत्वों में पानी ६६%, प्रोटीन १३%, वसा १०% व लवण द्रव्य ११% होते हैं।

सेवन विधि

वर्तमान में अनेक प्रकार से अन्डों का सेवन किया जाता है। भारत वर्ष में कच्चा अन्डा, कच्चा अन्डा में दूध मिलाकर, उबला अन्डा, आमलेट, अन्डे की करी के रूप में और कभी कभी चीनी आदि पदार्थों को मिलाकर भूनकर पकाकर खाया जाता है। कई बार बालको पोषणार्थ इन्हें दूध केला और अन्य फलों के साथ भी खिलाया जाता है।

आयुर्वेदमतानुसार यथासंभव नैसर्गिक अन्डों का ही प्रयोग करें तथा यह भी भली भांति देख लें कि वह बासी अथवा सड़ा हुआ न हो। अधिक तेल घी का प्रयोग कर बनाये गये आमलेट नहीं खाना चाहिए। इनके अधिक सेवन से मूत्राश्मरी, अम्लपित्त, त्वचा रोग हृदरोग तथा कामला रोग हो सकते हैं। यदि पहले से यह रोग हो तो अन्डों का उपयोग न करें। अधिक परिश्रम का काम करने वाले, तीक्ष्णाग्नि तथा लम्बी बीमारी के पश्चात डाक्टर की सलाह से अन्डों का सेवन किया जा सकता है। मंदाग्नि, अजीर्ण, छर्दि, उदरशूल, आध्मान, शीतपित्त आदि रोगों में अन्डों का प्रयोग न करें। कफ काल में अन्डों का प्रयोग अधिक न करें। अन्डों का सेवन करने के बाद कम से कम आधा घण्टे तक पानी नहीं पीना चाहिए। दूध, मद्य, फल, दही और छाछ के साथ अन्डों का प्रयोग न करें। अन्डों के छिलके कभी भी न खायें। इससे अन्नवह श्रोतस में जख्म होना व तीव्र उदर शूल होना संभव है।

हर एक व्यक्ति को चाहिए कि वह स्वयं के शरीर का ज्ञान रखें। खान–पान का भी पूर्ण विचार करके योग्य आहार को ही खायें। केवल विज्ञापन आदि को देखकर बिना सोचे समझे ही आहार न करें। पशु भी आहार की परीक्षा कर अनचाहे आहार का त्याग करते हैं। हम तो बुद्धिमान मनुष्य हैं। हमें यह कभी भी यह नहीं भूलना चाहिए कि –

"आहार संभवं वस्तु रोगांश्च आहार संभवः"

योग्य आहार से ही स्वास्थ्य बना रहता है और अयोग्य आहार से रोग बने रहते हैं। अन्डे भी इसका अपवाद नहीं हो सकते।

शरीर का वजन घटाएं – पत्तागोभी खाएं

डॉ. (श्रीमती) सुनन्दा रानाडे, पुणे

यह पूरे विश्व में खाई जानेवाली बहुत प्रसिद्ध एवम् चिर–परिचित सब्जी है। यह सब्ज़ी विटामिन "ए" का एक बड़ा भण्डार है, परन्तु इसमें विटामिन "बी" और "सी" भी होता है।उपयुक्त मात्रा में यह सब्ज़ी भूख बढ़ाती है तथा पाचक का कार्य करती है अर्थात् सुगमता से भोजन का पाचन करती है। शरीर का वज़न घटाने में इस सब्ज़ी का उपयोग सर्व विदित है। सप्ताह में एक दिन दोपहर तथा रात्रि भोजन न लेकर उसके स्थान पर एक गिलास पातगोभी का रस, टमाटर और गाजर का रस लेना शरीर का वज़न घटाने में सहायक होता है।

ताज़ा पातगोभी का रस ६ औंस, एक चाय का चम्मच भर शहद के साथ दिन में दो बार सेवन करना पेट में गैस वृद्धि एवम् साधारण यकृत विकारों को दूर करने की भी औषधि है।

संयुक्त राष्ट्र अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया में हुए हाल के अनुसन्धानों से यह भी ज्ञात हुआ है कि पातगोभी का रस जठर कैंसर अथवा आमाशय के कैंसर में उपयोगी होता है। ऐसे रोगियों को प्रतिदिन २५० ग्राम ताजा पातगोभी का रस दिन में दो बार तीन माह तक लेना चाहिये। ताजा पातगोभी का रस एक चाय–चम्मच भर शहद के साथ दिन में दो बार लेना, शुष्क एवम् खुजली से पीड़ित त्वचा को ठीक करने में उपयोगी है। इसमें विटामिन "सी" की उपस्थिति के कारण यह मसूड़ों से खून आने जैसी व्याधि को भी दूर करती है।

पात गोभी के रस में विटामिन "ए" भी प्रचुर मात्रा में होने के जिस कारण यह रतौंधी में भी उपयोगी होता है।शीतल एवम् मूत्र लानेवाला होने के कारण यह ताज़ा रस मूत्र–विकारों जैसे मूत्र–त्याग में जलन आदि में भी उपयोगी है। विटामिन "ए" "बी" और "सी" तथा पोटेशियम की इसमें पर्याप्त मात्रा उपस्थित होने के कारण यह उन मनुष्यों द्वारा भी उपयोग में लाया जा सकता है जो उच्च–रक्तचाप तथा नेफ्राइटिस जैसे मूत्र–रोग से पीड़ित हैं।

चरक–संहिता, जो आयुर्वेद का प्राचीनतम् ग्रन्थ है उसमें भी मूत्र विकारों के उपचार हेतु पातगोभी का प्रयोग बताया गया है। इसका ताज़ा रस ६ औंस की मात्रा में शहद के साथ यदि प्रसूता को शिशु–जन्म के पूर्व होने वाले दर्द (लेबर–पेन) के समय एक घण्टे पहले दे दिया जाये तो शिशु का जन्म सुगमता से हो जायेगा।

यदि पातगोभी को सब्ज़ी माफिक काटकर, उसे पानी में खौलायें और इस उबलते पानी की भाप का बफ़ारा लें तो यह कफ व ठंड कम करने की औषधि साबित होगी। प्राकृतिक चिकित्सा विज्ञान ने विशिष्ट रूप से इस प्रयोग पर बल दिया है और सामान्य सर्दी के उपचार हेतु, इसके वाष्प को साँस के साथ अन्दर खींचना उपयोगी बताया है। पातगोभी का अत्यधिक मात्रा में सेवन, वात.दोष प्रबल करता है। इसको दूर करने हेतु पातगोभी में ज़रा सी हींग का छौंक दे देना चाहिये। अतः रोगियों को पातगोभी का सेवन, मर्यादित मात्रा में करना चाहिये।

पातगोभी के व्यंजन

दो प्लेट कटी हुई पातगोभी में चौथाई कप भुनी हुई मूंगफली का चूरा मिलायें और उतनी ही मात्रा में कसी हुई गरी उसमें डालें। फिर उसमें ३ चाय–चम्मच भर नींबू का रस मिलायें। तत्पश्चात् उसमें नमक एवम् थोड़ी–सी चीनी, स्वाद बढ़ाने हेतु मिलाये। दो हरी मिर्च भी महीन कतर कर इसमें मिला दें। यह सलाद स्वादिष्ट एवम् प्रचुर मात्रा में विटामिनों से युक्त होगा।

२– दो प्याले कटी हुई पातगोभी में दो लाल टमाटरों के स्लाइस भी काट दें। इसमें एक कप–भर कटी हुई पालक मिला दें और साथ में एक कप कसी हुई गाजर भी। इन सबको भली प्रकार आपस में मिला लें। फिर इसमें आधा कप भुनी हुई मूंगफली का चूरा और कसी हुई गरी भी मिलायें। स्वाद–भर नमक व थोड़ी सी चीनी भी डालें। अब चार चाय–चम्मच तेल लेकर उसे गर्म करें। तड़का हेतु कुछ सरसों का तेल भी उसमें डालें तथा हींग व पिसी हल्दी भी। इसमें सलाद को कल्हार कर उतार लें और प्रयोग में लायें। यह सलाद कुपोषण से युक्त दुर्बल बच्चों के लिये उपयोगी है।

पातगोभी के बडे : चार कप कटी हुई पातगोभी में आधा कप चने अथवा मूंग की दाल का आटा मिलायें उसमें दो चाय–चम्मच पिसी हल्दी और पिसी लालमिर्च मिला लें। नमक स्वाद–भर डालें। कुछ ग्राम हरे धनिये की पत्ती भी काटकर मिला लें। अब इसमें कुछ पानी मिलाकर आटा माफिक माड़ लें। फिर इसे एक थाली में तेल चुपड़ कर बराबर से फैलायें। फिर इसे कुकर में पकाएँ। जब यह ठंडा हो जाये तो इसे छोटे–छोटे बड़ों के आकार में काट लें। फिर इन बड़ों को तेल में तल लें। ये बड़े अच्छे पोषण–मान वाले होते हैं।

स्वादिष्ट गाजर

यह शीत ऋतु की फसल है। समशीतोष्ण जलवायु में यह वसन्त, ग्रीष्म और पतझड़ के मौसम में तथा उष्ण एवं उपोष्ण कटिबन्धीय जलवायु में जाड़ों में होती है। यह एक वार्षिक या दोसाला पौधे का कन्द है। पौधे की उत्पत्ति एक मोटी मांसल जड़ से होती है, जो ५ से.मी. से ३० से.मी. तक लम्बी होती है। यह पौधा ३० से.मी. से १२० से.मी. तक ऊँचा होता है। गाजर के पौधों में संयुक्त छत्रक लगते हैं। फूल प्रायः सफेद या पीले होते हैं जिनमें छोटी-छोटी पंखुड़ियाँ होती हैं।

गाजर प्रायः तीन रंग की पायी जाती है, लाल, पीली और काली। यह मधुर एवं स्वादिष्ट होती है। लाल और काली गाजर गुणकारी है, जबकि पीली गाजर गुण और स्वाद में हीन होती है। गाजर में कैरोटीन, शर्करा, स्टार्च, ऐल्ब्युमिन, मैलिक एसिड, लवण, एक उड़नशील तेल तथा पर्याप्त लौह भी होता है। गाजर के बीज सौंफ से बहुत मिलते-जुलते होते हैं। बीजों में एक प्रकार का पीला, गाजर के समान सुवासित और चरपरा उड़नशील तेल होता है।

औषधीय गुण

गाजर कटु, तिक्त, उष्णवीर्य, कटु विपाकी, तीक्ष्ण, विदाही, दीपन, रुचिकारक, रूक्ष, ग्राही, रक्तपित्त-कफ-कृमिनाशक है।

वृक्कों पर गाजर उत्तम् प्रभाव डालती है। जलोदर के रोगी यदि इसका सेवन करें तो उन्हें यह मूत्र अधिक मात्रा में लाकर आराम पहुंचाती है। चर्म रोगों में गाजर के बीजों को पीसकर लेप करने से बहुत लाभ होता है। कच्ची गाजर खाने से आँतों के कीड़े नष्ट होते हैं और वे भविष्य में आँतों में पुनः पनप भी नहीं पाते। इसके लिए आवश्यक है कि गाजर के मौसम में लगभ १०० ग्राम तक गाजर यथासम्भव नित्य खायी जाय। गाजर का हलुवा अति पौष्टिक है।

मासिक-धर्म में कमी, गर्भाशय-शूल तथा विलम्ब प्रसव में गाजर के बीजों का काढ़ा अत्यन्त लाभदायक है।

बच्चों की सामान्य कमजोरी में गाजर का रस बहुत उपयोगी पाया गया है। जिस बच्चे का स्वास्थ्य नाज़ुक हो, बार-बार बीमार पड़ता हो, खून की कमी हो, उस बच्चे को गाजर का रस दस ग्राम कुछ दिनों तक नियमित पिलायें। इससे बच्चे का विकास, जो अवरुद्ध था सुचारु रूप से होने लगेगा।

प्रायः बच्चे चीनी, टॉफी अधिक खाते हैं जिससे उनके पेट में कीड़े पड़ जाते हैं। ये कीड़े खाये-पिये का रस, रक्त आदि नहीं बनने देते। इससे बच्चे धीरे-धीरे कमजोर पड़ जाते हैं। बड़े लोगों के पेट में भी कीड़े पड़ते हैं। जिसके पेट में कीड़े पड़ जाते हैं वह नींद में अपने दाँतों को बजाता या किटकिटाता है। ऐसे लोगों को एक महीने तक नित्य २०० ग्राम की मात्रा में गाजर का रस पीना चाहिये। बच्चों को उनकी अवस्था के अनुसार ५० ग्राम से १०० ग्राम तक गाजर का रस पिलाना चाहिये।

स्त्रियों से सम्बन्धित बीमारियों में गाजर के बीज बहुत काम आते हैं। गाजर के बीज गर्भाशय की शुद्धि करके उसे बल प्रदान करते हैं। इससे माहवारी समय पर होती है और प्रदर रोग में भी लाभ होता है। अतः स्त्रियों से सम्बन्धित रोगों में विशेषतः माहवारी कष्टप्रद होने पर निम्नलिखित प्रयोग आज़मा कर देखें, अवश्य लाभ होगा -

गाजर के बीज - ०७ ग्राम, गुड़ - १४ ग्राम की एक मात्रा। उक्त एक मात्रा को लेकर २५० मि.ली. जल में उबाल लें। जब आधा जल शेष रहे तो उसे उतार कर कपड़े से छानकर पी लें। यह प्रयोग एक सप्ताह तक नियमित करें।

गाजर का नियमित सेवन करने से आँखों की ज्योति बढ़ती है और चर्म-रोग दूर होते हैं।

ब्रिटिश मेडिकल जरनल 'लान्सेट' में प्रकाशित शिकागो के 'सेन्ट ब्यूक हॉस्पिटल' की एक अनुसन्धान-रिपोर्ट के अनुसार नियमित गाजर खाने से कैंसर का रोग नहीं होता है। यह अनुसन्धान-रिपोर्ट लगभग दो हजार व्यक्तियों पर बीस वर्ष तक किये गये अध्ययन का परिणाम है। उक्त अनुसन्धानकर्ताओं के अनुसार गाजर में "बेटाकेरोटीन" नामक तत्व बहुतायत से पाया जाता है जो कि सिगरेट पीने वालों को भी फेफड़ों के कैंसर से सुरक्षित रखता है।

आइये, देशी चाय पियें

आजकल जहां दिन रात विषैली चाय पी जाती है, उसके स्थान पर तुलसी की देशी चाय पीना अधिक लाभप्रद है। किसी भी अवस्था में तुलसी की चाय अत्यंत श्रेयस्कर है। इससे बनी चाय स्फूर्ति और आराम देने वाली होती है। वर्षा ऋतु में मलेरिया की रोकथाम के लिए और शीत ऋतु में शीत से बचने के लिए इसकी चाय अधिक लाभप्रद है। इसके नियमित सेवन से बहुत से रोगों से बचा जा सकता है एवं रोग की स्थिति में उससे छुटकारा पाया जा सकता है।

बाजार में बिकने वाली विविध ब्रांडों की चाय दिल और दिमाग को कमजोर करती है, ज्ञानवाही तन्तुओं को निर्बल बनाती है और रक्त वाहिनियों की दीवारों को कठोर बना देती है। परिणाम यह होता है कि समय से पूर्व ही बुढ़ापे के चिन्ह प्रकट होने लगते हैं। जबकि तुलसी की देशी चाय सुगन्धित एवं ताजगी देने वाला पेय है, जो उपरोक्त सभी कमजोरियों से बचाता है और सच्ची स्फूर्ति व आनन्द प्रदान करता है।

गुरुकुल चाय

छाया में सुखाये हुए तुलसी के पत्ते तीन किलो, दाल चीनी पांच सौ ग्राम, तेज पत्र एक किलो, सौंफ दो किलो, इलायची एक किलो, अगियाघास तीन किलो, बनफसा दो सौ पचास ग्राम, ब्राह्मी बूटी एक किलो और लाल चन्दन दो किलो। गड़ासे से कूटकर इनका बारीक चूरा बना दें। एक किलो स्वच्छ उबलते पानी में बारह ग्राम चूरा डालकर उतार लें। जरा ढक कर सींझने दें। फिर छानकर इच्छानुसार दूध और मीठा डालकर पीयें।

शिवशक्ति चाय तुलसी पत्र ग्यारह, काली मिर्च पांच थोड़ा सा अदरक या सोंठ डालकर उबालें। छानकर यथारुचि साफ गुड़ या देशी शक्कर मिलाकर पीयें। यह एक मात्रा है। भोजन त्यागकर दिन में तीन चार बार पीने से सर्दी, जुकाम, खांसी, श्वास, ज़ूडीज्वर व अंगों में ऐंठन दूर हो जाती है। पसीना आता है और पेट भी साफ हो जाता है।

विषमज्वरहर चाय

तुलसी पत्र दस, काली मिर्च पांच, लौंग तीन, अदरक एक ग्राम, पानी दो सौ पचास ग्राम, दूध दो सौ पचास ग्राम, मुनक्का बीस ग्राम। सबको मिलाकर उबालें। अच्छा उबालने के बाद छान लें और दो दो घंटे के अन्तर पर तीन बार पीयें। ज्वर उतर जाएगा।

प्राकृतिक चाय

तुलसी सूखी पत्ती साठ ग्राम, पुदीना की सूखी पत्ती साठ ग्राम, पीपल के सूखे पत्ते साठ ग्राम, लौंग साठ ग्राम, काली मिर्च तीस ग्राम, सौंफ साठ ग्राम तथा छोटी इलायची साठ ग्राम लें। इन सबको कूटकर यह मिश्रण साफ शीशी में भर लें। चाय बनाने के लिए इसमें से थोड़ा लेकर पानी में उबालकर दूध गुड़ के साथ चाय की तरह सेवन करें। यह प्राकृतिक चाय अत्यन्त स्वादिष्ट एवं रुचिकारक तो होती है साथ साथ त्रिदोषनाशक, स्फूर्तिदायक और रक्तशोधक होती है। यह शूल, श्वास, कास, विष, वमन, और ज्वर आदि अनेक रोगों को शीघ्रातिशीघ्र नष्ट कर देती है।

त्रिदोषशामक चाय

तुलसी, आम, जामुन, बेल, बिजौरा, नींबू और अशोक की कोमल पत्तियां समान मात्रा में लेकर छाया में सुखाकर कूटलें। जरूरत के समय थोड़ा सा चूर्ण लेकर इसकी चाय बनावें और छान कर दूध व गुड़ मिलाकर पीयें इस चाय के बराबर पीते रहने से वात पित्त और कफ तीनों शांत रहते हैं।

रक्तदोषहर चाय

तुलसी, कटेरी, बेलपत्र, लाजवन्ती और आम की पत्तियों को अलग अलग छाया में सुखाकर और इनका चूर्ण बनाकर एक रस करके रख लें। चाय की आवश्यकता पड़ने पर इसमें से थोड़ा चूर्ण लेकर और जल में उबालकर पीवें। इस चाय के इस्तेमाल से रक्त के सारे दोष दूर हो जाते हैं।

दीपन चाय

तुलसी के शुष्क पत्र तीन ग्राम, छोटी इलायची तीन ग्राम, केसर तीन सौ पिचहत्तर मिलीग्राम, दालचीनी तीन सौ पिचहत्तर मिलीग्राम। इन सबको तीन सौ पिचहत्तर मिली लीटर उबलते हुए पानी में डालकर ढक दें। दो तीन मिनट बाद उतारकर छान लें और दूध, शक्कर डालकर पीवें।

स्वादिष्ट चाय

तुलसीपत्र बारह ग्राम, सौंठ बारह ग्राम, जायफल छः ग्राम, जावित्री छः ग्राम, दालचीनी छः ग्राम, छोटी इलायची के बीज छः ग्राम, बड़ी इलायची के बीज छः ग्राम। इन सबको मिलाकर कूट लें। जब भी आवश्यकता हो पानी में उबालकर दूध शक्कर मिलाकर पीयें।

यह तो हुई शुद्ध रूप से देशी चाय की बात कि जिसे पीना स्वास्थ्य के लिए बहुत ही लाभकारी है और इससे रोगनिरोधी क्षमता बढ़ती है।

रामदाना

भारत में परम्परागत रूप से रामदाना उगाया जाता है। इसे राजगिर अर्थात देवताओं का भोजन भी कहते हैं। इसकी उत्पत्ति "अमर" शब्द से हुई है (जो नष्ट नहीं होता)। भारतीय परम्परागत खेती में कई अनाजों को मिलाकर बोने की प्रथा रही है। रामदाना दक्षिण भारत के नवदान्य खेतों (नौ अनाजों के खेत) हिमालय क्षेत्र के बारानाजा (बारह अनाजों के खेत) खेतों की एक फसल रहा है।

रामदाना दुनियां का सबसे पौष्टिक अनाज है। इसके बीज काले, भूरे, लाल, सुनहरे या सफेद होते हैं। इसके दाने कई प्रकार से पकाये जा सकते हैं। रामदाना का तना और पत्तियां भी स्वादिष्ट और पौष्टिक होती हैं। यद्यपि रामदाना के दाने बहुत छोटे होते हैं परन्तु ये बहुत अधिक मात्रा में होते हैं और एक बाली से एक किलो तक बीज प्राप्त हो सकते हैं। इसका पौधा कीड़ों और बीमारियों से सुरक्षित रहता है तथा इसे दूसरी फसलों के मुकाबले आधे पानी की आवश्यकता होती है।

रामदाना में दूसरे अनाजों की तुलना में अधिक प्रोटीन पाया जाता है। बल्कि अधिक रेशा भी पाया जाता है। इसके अतिरिक्त इसमें अधिक मात्रा में कैल्शियम और लौह भी पाया जाता है।

भुने रामदाने से लड्डू और चिक्की बनाये जाते हैं। इसे कुछ लोग अनाज नहीं मानते हैं इस कारण व्रत आदि में प्रयोग करते हैं। रामदाना का ५० से ८०% तक पौधा खाने योग्य है। इसके हरे पौधे की सब्जी बनाई जा सकती है। इसमें विटामिन ए अधिक मात्रा में पाया जाता है। अतः इसके उपयोग से बच्चों की नेत्र ज्योति ठीक रहती है और रतौंधी की समस्या दूर होती है। इसमें कैल्सियम और लौह अधिक पाये जाने के कारण भी यह माताओं और बच्चों के लिए उत्तम आहार है। इसमें जल की मात्रा बहुत कम होती है। अतः समान मात्रा में लेने पर यह दूसरी सब्जियों से दो तीन गुना अधिक पोषकता प्रदान करता है।

आज जबकि जमीन की अपेक्षा पानी की कमी खेती की मुख्य समस्या बनती जा रही है। तो पोषकता का मान जल की खपत के आधार पर किया जाना चाहिए। इस दृष्टिकोण से रामदाना मनुष्य की खाद्य आवश्यकताओं की पूर्ति में प्रथम स्थान रखता है। हरित क्रांति की एकांगी विकास की अवधारणा के कारण रामदाना ऐसे अनाज हाशिये पर डाल दिये हैं जिन्हें फिर से पुर्नस्थापित करने की आवश्यकता है। सर्वांगीण विकास और कृषि में जैव विविधता की रक्षा के लिए "नवदान्य" और "बारहनाजा" जैसे प्राचीन पद्धतियों की पुनर्स्थापना से ही हम कीटनाशकों और रासायनिक खादों द्वारा प्रदूषित वातावरण, जमीन की पैदावार में कमी और छोटे किसानों के निरन्तर गरीब होते जाने के दुष्चक्र से बच सकेगें।

"वन्दना शिवा द्वारा प्रकाशित "बीज" से साभार"

रामदाना और अन्य अनाजों की पोषकता

	लौह	कैल्सियम	प्रोटीन	कैलोरी	रेशे
रामदाना	३-२२	२५-३९०	१६-१९%	३६६	१६-१७%
मक्का	२	१०	९-१३%	३५२	२-३%
गेहूं	१२	४८	१२-१४%	३४३	७%
जई	४	५०	१४-१६%	३८४	६-९%
चावल	३	१०	८%	३५३	२-४%
जौ	३	१६-३४	१२%	३५३	६%

आपकी समस्यायें

वैद्य एस. ए. खान, लखनऊ

मेरी समस्या है कि चेहरे पर बहुत ज्यादा झुर्रियां पड़ने लगी हैं तथा चेहरे पर प्रौढ़ता सी आती जा रही है। एक वैद्य जी ने नियमित रूप से त्रिफला खाने की सलाह दी मैं एक वर्ष से त्रिफला नियमित रूप से खा रहा हूं पर मुझे कोई लाभ नहीं हुआ। वैद्य जी मुझे कोई ऐसी चमत्कारिक आयुर्वेदिक औषधि बतावें जिसके सेवन से मैं वृद्धावस्था में भी यौवन प्राप्त कर सकूं तथा मेरा चेहरा २० वर्ष के नवयुवक सा दिखे।

श्री भवानी सिंह, उन्नाव

ऐसा लगता है कि आप असमय बुढ़ापा रोग से पीड़ित हैं इसका सामान्य निम्न कारण हो सकता है–

मैथुन व्यवहार में अत्यधिक रत होना। इससे सभी धातुओं की क्षीणता होकर बुढ़ापा शीघ्र आता है।

किसी रोग के कारण शरीर की सभी धातुओं का क्षीण हो जाना– जैसे संग्रहणी, क्षयरोग आदि।

अपनी प्रकृति के विरुद्ध असन्तुलित भोजन करना या बहुत कम भोजन करना।

आर्थिक, मानसिक, सामाजिक विकट परिस्थितयों से निरन्तर घिरे रहना तथा अत्यधिकश्रम लगातार काफी समय तक करना।

किसी सुयोग्य वैद्य से परीक्षण कराकर उपरोक्त में से जो कारण हो दूर करें। कोई बीमारी हो उसका इलाज करायें। पौष्टिक, धातुवर्धक, वीर्यवर्धक औषध द्रव्यों का सेवन अपनी पाचन शक्ति के अनुसार करें। दूध, घी, दही, मक्खन, मांस, मछली, सूखे मेवे आदि का प्रयोग कर शरीर की सभी धातुओं को बढ़ायें, यौनाचार में संयम बरतें। किसी रसायन औषधि का सेवन किसी वैद्य से शरीर शोधन कराकर लगातार करें। दिनचर्या नियमित करें कुछ व्यायाम भी करें। किसी एक चमत्कारी औषधि से झुर्रियां मिटाकर २० वर्ष के युवा की भांति होने की आशा न करें। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए आप ही को सतत् प्रयत्न करना पड़ेगा। आहार विहार, औषधि का सेवन, ऋतुचर्या, दिनचर्या का सेवन आयुर्वेदशास्त्रानुसार किसी योग्य वैद्य की निगरानी में करें। ईश्वर ने चाहा तो अवश्य लक्ष्य की प्राप्ति होगी। चमत्कार की आशा न करें। सर्वप्रथम प्रकृति की जांच किसी वैद्य से कराकर उसके अनुसार खान पान आरम्भ करें। चेहरे पर मसाज भी करा सकते हैं।

मेरा बच्चा एक वर्ष का है। उसका पेट अक्सर कड़ा रहता है व गैस भी बनती है जिसके कारण पेट नियमित रूप से साफ न होने से अक्सर रोता रहता है। कृपया बतायें कि क्या करें?

विजय सिंह, लखनऊ

निम्न घरेलू उपचार करें–

- एक दो मुनक्का बीज निकालकर दूध में उबाल लें यह दूध सांयकाल पिलावें (मुनक्के की मात्रा कोष्ठ के अनुसार घटा बढ़ा सकते हैं)
- चौकिया सुहागा पंसारी के यहां से लेकर आग पर तवे में रखकर भून लें। भुना हुआ सुहागा पीसकर सुरक्षित रख लें। एक एक रत्ती शहद में मिलाकर चटाएं। बच्चे की भूख बढ़ेगी,पाचन सही होने पर पेट का कड़ापन और गैस बनना दूर हो जाएगा।
- सोंठ,कालीमिर्च और छोटी पीपल का चूर्ण २५० मिलीग्राम से ५०० मिलीग्राम और घी में भुनी हुई हींग आधा रत्ती शहद में मिलाकर प्रातः सांय दूध में घोलकर पिलाएं।
- यदि बच्चा कुछ अनाज खाने लगा हो तो उसे वातकरक वस्तुएं जैसे चावल, अरहर की दाल चने या मटर की दाल न दें।
- यदि बच्चा माता का दूध भी पीता हो तो माता को लाल मिर्च, दालें व पत्तेदार सब्जियां न खाने दें।

मुझे पित्ताशय की पथरी की शिकायत है कई इलाज किए लाभ नहीं होता। मैं आपरेशन से बचना चाहता हूं। कृपया कोई लाभकारी नुस्खा बतायें?

रामकुमार, चौक, वाराणसी

समाधान

निम्न उपचारों में कोई एक उपचार करें।

- मक्का (भुट्टे) की बाल पर जो पीले पीले बाल जैसे रेशे होते हैं उन्हें लेकर १६ से १० गुने जल में उबालकर चौथाई शेष रहने पर थोड़ा सा शहद मिलाकर दिन में तीन बार पीयें। यदि ज्यादा क्वाथ पी सकें तो और अच्छा है। इसके पीने के दो चार दिन में यदि पित्ताशय में दर्द बढ़े तो यह समझना चाहिये कि औषधि लाभ कर रही है। दवा रोकें नहीं कोई दर्द निवारक दवा ले लें। यह उपचार डेढ़ महीने तक लगातार जारी रखें।
- दूर्वा (दूर्वा घास) का स्वरस (बिना पानी मिलाये पीसकर निकाला गया रस) २ चम्मच, दो छोटी इलायची के दाने, ढाई काली मिर्च (पिसी हुई) आधा चम्मच शहद मिलाकर प्रातः काल नहार मुंह पियें। एक घंटे बाद नाश्ता करें। १५ दिन से ३० दिन तक लगातार सेवर करें। लाभ लगने पर ३ मास तक लगातार प्रयोग करें फिर आधुनिक जांच कराकर देखें कि पथरी घुलकर निकल गई कि नहीं। १५ दिन तक लाभ न होनें पर चिकित्सक को दिखा लें। कड़ुवा तैल, घटाई, तली चीजें, गुड़, दही, उड़द की दाल, गरिष्ठ चीजें न खायें। सेंधा नमक खायें।

मुझे पिछले वर्ष पीलिया हो गया था तब से भूख ठीक नहीं रहती थी। पिछले माह फिर पीलिया की हल्की शिकायत थी। कृपया कोई घरेलू नुस्खा व खान पान के लिए मार्ग निर्देश दें?

आशीष खत्रा, चौक, लखनऊ

- मुनक्का, अंजीर, कुटकी, छोटी पीपल, मुलेठी, कालमेघ, नागरमोथा व सोंठ बराबर लेकर कूट कर मिला लें। मिश्रित औषधियों की मात्रा २५ ग्राम लेकर आधा लीटर जल में उबालें। चौथाई भाग शेष रहने पर मसलकर छान लें। प्रातः दोपहर सांय थोड़ा शहद मिलाकर गुनगुना कर पीयें। इसे लगातार प्रयोग कर सकते हैं।

दादी माँ के नुस्खे

वैद्य बदलूराम रसिक, लखनऊ

सरस्वती–चरणस्पर्श, दादी माँ!

दादी माँ–प्रसन्न रहो बेटी, कहो सब आनन्द मंगल है गाँव में?

सरस्वती–दादी मां, गाँव घर सब आनन्द है, मगर बरसात के समाप्त होते ही गाँव भर मा लड़कन के, बड्डे बूढ़न के खुजली इतना जोर है कि जिसको देखो खुजलाता ही रहता है बहुत लोगन के उकौता हो जाता है। कुछ लोगों के सफेद दाग शरीर में पड़ जाते हैं इसी तरह के कई रोग चमड़ी में हो जाते हैं अतः आप हमें इन सबकी दवा बताओ। पहले खुजली की दवा बताओ।

दादी माँ–अच्छा लिखो बेटी। खुजली दो प्रकार की होती है, एक तो सूखी, जिसमें कोई दाना या फुंसी नहीं निकलती, केवल खुजली होती है, खुजाते–खुजाते परेशान हो जाते हैं, इसकी दवा लिखो, गंधक १० ग्राम, कुटकी १० ग्राम, बाकुची १० ग्राम, पकवड़ के बीच १० ग्राम, तूतिया ५ ग्राम इन सब दवाइयों को खूब बारीक पीस कर रख लें। तिल का तेल २०० ग्राम, नीम की हरी पत्ती का रस २०० ग्राम। तिल के तेल को दो कप पानी में स्टील के भगोने में आग पर चढ़ायें उसी में नीम की पत्ती का रस तथा पिसी हुई दवा डाल कर धीमी आंच पर धीरे–२ पकायें और कलछी से चलाते रहें, जब सब पानी उड़ जाय और तेल फेना देने लगे तब उतार कर ठंढा कर लें। बाद में छान कर तेल को एक बोतल में भर कर उसमें कपूर १० ग्राम महीन कर छोड़ दें। बस तेल तैयार है।

यह तेल गीली खुजली में लगाने से खुजली को ३–४ दिन में दूर कर देता है। जो छानने से बची दवा है उसका मरहम इस प्रकार बना लें छनी हुई दवा, मोम १० ग्राम, खुजली वाला तेल २५ ग्राम। पहले तेल को स्टील के भगोने में आग पर गरम करें जब तेल गरम हो जाय तो उसमें मोम को छोटे–छोटे टुकड़े करके डाल दें जब मोम गल जाय तो तेल की छनी हुई दवा को डाल कर मिला दें और उतार कर ठंढा कर लें। यह मरहम खुजली के दानों पर लगायें और नीम की पत्ती को आग पर उबाल कर उसके पानी से रोज धुलाई करें।

जिन लोगों को सूखी खुजली हो उन्हें चाहिये कि पहनने, बिछाने तथा ओढ़ने वाले कपडों को लाइफब्वाय साबुन के गरम पानी के घोल में धोकर सुखा लें तब पहनें क्योंकि सूखी खाज में एक ऐसा कीड़ा होता है जो फैलता है और घर भर के लोगों को या पास बैठने वाले लोगों तक को खाज का रोगी बना देता है। खुजली वाले रोगी को नमक कम और नया गुड़ न खाना चाहिए।

सरस्वती–दादी माँ अब उकौता की दवा भी बताइये।

दादी माँ–लिखो बेटी, देखो उकौता एक तो सूखा होता है जो हाथ पैर की चमड़ी या जांघ पर होता है। चमड़ी को काली और मोटी कर देता है, चमड़ी फट जाती है खूब खुजली होती है और पानी निकलने लगता है। दूसरा उकौता पीला होता है जिसमें हर समय चमड़ी में खुजली होती है, मवाद पड़ जाता है, जो बहा करता है, खून भी गंदा निकलता है, बड़ा दर्द होता है। दूसरे स्थान पर इसका पानी लगने से वहां भी उकौता हो जाता है। इन दोनो प्रकार के उकौतों के लिए एक मरहम है जो इस प्रकार बनता है:

मुर्दासंख १० ग्राम, कबीला असली १० ग्राम, रस कपूर १० ग्राम, गंधक १० ग्राम, कत्था असली १० ग्राम, रालकामा १० ग्राम, मेंहदी की पत्ती १० ग्राम, शीतल चीनी १० ग्राम, इलायची छोटी का बीज १० ग्राम, संग जराहत १० ग्राम, सुहागा चौकिया १० ग्राम, हल्दी १० ग्राम, तूतिया ५ ग्राम । सब औषधियों को पीस कर बारीक कपड़े से छान लें।

गाय का घी २५० ग्राम ले लें अगर न मिले तो भैंस का घी लें, इस घी को स्टील के एक किलो पानी वाले भगोने में डालें और उसमें तीन गिलास कुएं या हैण्ड पाइप का पानी डालकर चम्मच से खूब मिलायें और उस पानी को एक खाली बालटी में डाल दें। फिर उसी प्रकार पानी दो गिलास डालकर चम्मच से मिलावें। खूब घोटने के बाद पानी बाल्टी में फेंक दें। इसी प्रकार १०० बार पानी डालकर घी को फेट कर उसकी धुलाई करें। बालटी में जो पानी फेंका गया है उसमें थोड़ा घी चला जाता है।अंत में उसे निकाल कर घी में डाल लें। यह शतधौत घृत कहलाता है। इसको २४ घंटे रखने के बाद उसे हाथ से दबाकर पानी निकाल दें। इस घी में पिसी हुई दवा को मिलाकर रख लें ।यह मरहम सूखे या गीले हर प्रकार के उकौते में लाभ करता है। उकौते पर मरहम लगाने के पहले उसे नीम की पत्ती डालकर उबाले हुये पानी से अवश्य धोना चाहिये। मरहम लगाने के बाद कपड़े की गाज रखकर वहीं बांध देनी चाहिये।

हर प्रकार के चर्म रोग को दूर करने के लिये रक्तशोधक दवा का सेवन करना चाहिये। मैं एक चोपचीन्यादि चूरन बताती हूं यह हर प्रकार के रक्त दोष को दूर करती है।

चोपचीनी ५० ग्राम, मजीठ ५० ग्राम, मुण्डी ५० ग्राम, बाकुची ५० ग्राम, कुटकी ५० ग्राम, शहतरा ५० ग्राम, सरफोंका ५० ग्राम, ब्रह्मदंडी ५० ग्राम, नीलकंठी ५० ग्राम, गुलाब फूल ५० ग्राम, नीलोफर ५० ग्राम, दारु हल्दी ५० ग्राम, मुलेठी ५० ग्राम खतमी ५० ग्राम, सौंफ ५० ग्राम, हड़ ५० ग्राम, बहेड़ा ५० ग्राम, आमला ५० ग्राम, चन्दन लाल ५० ग्राम, वायविडंग ५० ग्राम, गुरच ५० ग्राम, सनाय ५० ग्राम। सब चीजों को कूट पीस कर छान लें। यह चूरन तैयार हो गया। इस चूरन को सवेरे शाम ३–३ माशा की मात्रा में शहद के साथ लेने से सभी रक्तविकारों और चर्म रोगों में बड़ा लाभ होता है।

अगर इस चूरन को शहद में मिलाकर अवलेह बना लें और १–२ बड़ा चम्मच सुबह शाम पानी से लें तो भी बड़ा लाभ होगा।

यह सभी योग हजारों रोगियों पर प्रयोग किये गये हैं और ९० प्रतिशत लाभ अवश्य होता है। लिख लिया बेटी।

सरस्वती–हां दादी माँ अब सफेद दाग की दवा बतायें।

दादी माँ–सफेद दाग यदि शरीर में दो चार स्थान पर है और थोड़ा है तथा साल दो साल से हुआ है तो औषधि फायदा करेगी अगर पूरे या आधे शरीर में दाग हैं और पुराने हैं तो लाभ नहीं होगा। अब औषधि लिखो। बाकुची १०० ग्राम लेकर पीस लें, ताजे भृंगराज का रस, भृंगराज की पत्ती को पीस कर निकाल लें यह रस १०० ग्राम होना चाहिये। इस रस को खरल में डालकर बाकुची का चूर्ण डाल दें और खूब घोटें जब बाकुची में पड़ा रस सूखने लगे तब उसकी मटर भर की गोली बना लें। २ गोली सबेरे २ शाम पानी से लें। तीन महीने इसका सेवन करने से पहले तो दागों का बढ़ना रुक जाता है और सफेद दाग हल्के होकर प्राकृतिक चमड़ी वाले निशान आने लगते हैं। इसी प्रकार एक साल में रोग निमूल हो जाता है। दागों पर लगाने की दवा– बाकुची १० ग्राम, कुटकी १० ग्राम, लाल धुंघची १० ग्राम, मैनसिल १० ग्राम, हरताल १० ग्राम। इन सब दवाइयों को पीस लें और देशी अंजीर (कठूमर) के वृक्ष की छाल हरी १०० ग्राम लेकर पानी से सिल पर पीस लें उसी में चूर्ण मिलाकर फिर पीसें और गोलियां बना लें। ये गोलियां १–१ इंच गोल होनी चाहिये। सूख जाने पर शीशी में भर लें इसमें से १ गोली लेकर ताम्बे के बरतन पर पानी से पीस लें और दागों पर लगाएं। अगर खुजली होने लगे तो सरसों का तेल लगा दें। इससे भी बड़ा लाभ होगा।

सफेद दाग के रोगी को नमक बिल्कुल कम, मछली, अण्डा, मुर्गा आदि मांस आहार नहीं खाना चाहिए। यह रोग पैतृक नहीं होता है ठीक भी हो जाता है तथा संक्रामक अर्थात एक से दूसरे को नहीं होता है, लिख लिया बेटी।

सरस्वती–हां लिख लिया दादी माँ।

दादी माँ–अब दाद की घरेलू दवा लिखो।

गंधक १० ग्राम, फिटकरी १० ग्राम, मिश्री १० ग्राम, तीनों को पीस कर थोड़ा पानी मिलाकर गोली बना लें। इस गोली को पानी में पीस कर लगाने से दाद दूर हो जाता है।

बहुत से लोगों को वरसात के मौसम में गीले कपड़े पहने रहने से या अधिक पसीना आने से लंगोट या जांघिया गीला पहनने से एक प्रकार की खुजली हो जाती है इसे ग्रामीण भाषा में ओदी कहा जाता है। यही ओदी १०–१५ दिन रहने के बाद दाद हो जाती है। इसकी सरल दवा लिखोः

मि ट्टी का तेल१० एम.एल. सरसों का तेल १० एम. एल. दोनों को एक शीशी में मिलाकर रख लें और ओदी वाले स्थान पर सुबह शाम दोनों समय लगाएं तीन दिन में खुजली समाप्त हो जायगी मगर गीला कपड़ा न पहने।

कुछ लोगों को जिनके परिवार में पिता माता, मामा, नाना या नानी आदि को पहले कोई चर्म रोग हुआ होता है उन के परिवार वालों को भी चर्म रोग हो जाता है। और यह रोग उनके पूर्वजों को उपदंश रोग हो जाने के कारण होता है। यह रोग पैतृक है। इसकी औषधि चोपचीन्यादि चूर्ण या अवलेह है, जिसे २–३ साल खाने से रोग समाप्त हो जाता है।

बरसात के मौसम में बच्चों या बड़ों को तमाम फोड़े फुंसी हो जाते हैं। उनकी सबसे उत्तम औषधि नीम वृक्ष की ताजी लाल अंतर छाल को लेकर उसे पानी से पत्थर पर घिस कर उसका लाल हिस्सा जो चन्दन की भांति हो गया है एक कटोरी में उंठालें और उसे ही रोज दिन में २–३ बार फुंसियों पर छिड़कें, फुंसी ठीक हो जायगी। यह नीम की छाल फुंसी में लगाने के बाद इन्जेक्शन का काम करती है और फुंसी के विषैले प्रभाव को दूर करती है। लिख लिया?

सरस्वती–हां दादी माँ, मैंने सब कुछ ढंग से लिख लिया है, अब जाती हूं चरण स्पर्श

कैम्पो : जापानी औषधीय चिकित्सा पद्धति

आधुनिक चिकित्सा व्यवस्था में साधारणतया एलोपैथिक दवाओं का ही प्रयोग किया जाता है। परन्तु हाल ही में जापान में लोग एक वानस्पतिक औषधीय चिकित्सा पद्धति "कैम्पों" की ओर आकृष्ट हुए हैं। आज से दो हजार वर्ष पूर्व ये पद्धति केवल पुराने रोगियों के लिये ही निर्धारित की गयी थी परन्तु अब इसके नये आयाम सामने आये हैं।

सातवीं शताब्दी में जापानी बौद्ध भिक्षु चीन गये और वहां से चीनी वानस्पतिक औषधियां लेकर आये। इन औषधियों के संगठन में वानस्पतिक जन्तु और खनिज तत्वों का समावेश किया गया। इन्हें करीब हजार वर्षों तक इनके मूल रूप में ही प्रयोग किया गया। धीरे धीरे इनमें परिवर्तन किया गया और पहले की तुलना में कम अवयव प्रयोग किये गये जिसके परिणामस्वरूप चीनी औषधीय चिकित्सा पद्धति कैम्पो में परिवर्तित हो गयी।

मानव का शरीर एक छोटा सुव्यवस्थित ब्रहमांड है जो अपने आप में एक समष्टि है। इस व्यवस्था के भंग होने पर शरीर रोगी हो जाता है। यदि किसी रोगी की नाक में तकलीफ है तो डाक्टर नाक के साथ ही उसके शरीर के अन्य अंगों की भी जांच करते हैं क्योंकि शरीर से अलग नाक का अपना अस्तित्व नहीं होता है। कैम्पो भी इसी दृष्टिकोण पर आधारित है।

कैम्पो औषधियां अलग–अलग उतनी प्रभावी नहीं होती वरन् जब अनेक औषधियों को मिलाकर प्रयोग किया जाता है और नुस्खा बनाया जाता है तो वे अधिक प्रभावशाली होती हैं। आज कैम्पो औषधियों के तीन सौ से अधिक नुस्खे ज्ञात हैं। प्रत्येक नुस्खे के अनुसार औषधियों के अवयवों को निश्चित अनुपात में मिलाया जाता है। कैम्पो औषधियों के रासायनिक तत्व साधारणतया जल में घुलनशील होते हैं, इस कारण शरीर में एकत्र नहीं होने पाते और शरीर के लिए हानिकारक नहीं होते हैं।कैम्पो औषधियों के प्रयोग द्वारा डाक्टर रोगी के समस्त शरीर की जाँच करता है। कैम्पो के विभिन्न नुस्खे डायरिया, सिरदर्द, दिल की तेज धड़कन, अल्सर आदि रोगों में बताये जाते हैं। जापान के डाक्टर अपने क्षेत्र में कैम्पो औषधियों के नये आयाम खोजने में प्रयत्नशील हैं। इस तरह की प्रगति से ऐसा प्रतीत होता है कि शीघ्र ही कैम्पो आधुनिक चिकित्सा पद्धति में अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाने में सफल हो सकेगा

ताजे आँवलों के उपयोग

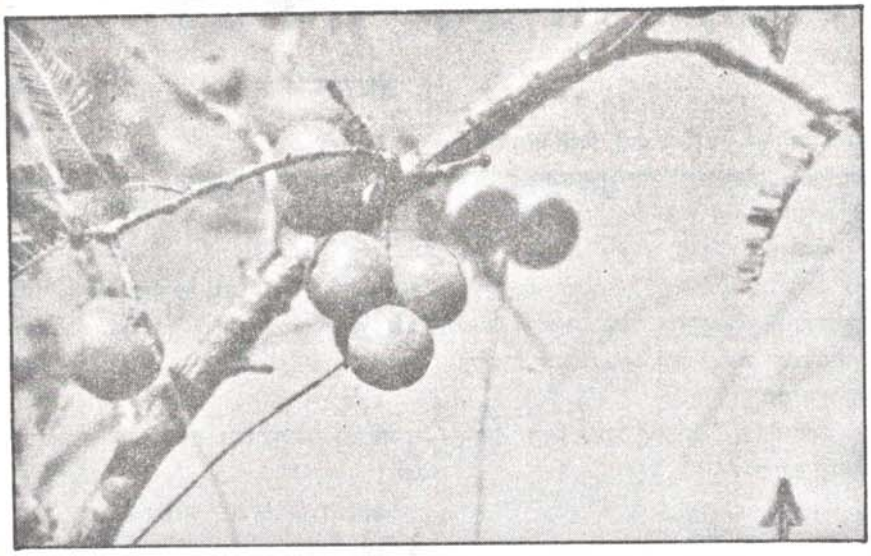

आँवले का मुरब्बा

ताजे पके, हाथ से तोड़े, बिना चोट खाये बड़े बड़े आँवले लें। सड़े गले न हों। आँवलों को किसी नुकीली चीज से. सूजा आदि से खूब छेद दें। फिर चूने के पानी में १२ से २४ घंटे भिगायें। फिर चूने के पानी से निकाल कर खूब अच्छी तरह धोकर रखलें। अब इन आँवलों को हल्का उबालें और पानी से निकाल कर अलग किसी कपड़े पर फैला दें अब शक्कर समान भाग लेकर दो तार की चाशनी बनाकर उसमें उबालें व पानी सोखे हुये आँवले डालकर २४ घंटे के लिए रख दें। अगले दिन आँवले चाशनी से निकाल लें और चाशनी को पुनः आग पर चढ़ा कर दो तार की कर लें ठंडा होन पर पुनः आँवले डालकर २४ घंटे के लिए रख दें। पुनः चाशनी से आँवले निकाल कर चाशनी को आग पर चढ़ा कर दो तार की करलें। यह क्रिया तब तक करें जब तक चाशनी पतली होना न बन्द कर दे। फिर शीशे के मर्तबान में सुरक्षित रख लें। यह मुरब्बा पित्तज व वातज प्रकृति वालों के लिए अत्यन्त लाभकर है। अम्लपित्त, चक्कर आना, बार बार बीमार पड़ना, नजर की कमजोरी, सामान्य दुर्बलता आदि में तथा सभी पित्तज रोगों में लाभ कर है। अपने घर हर व्यक्ति शुद्धता के साथ बनाकर लाभ उठा सकता है।

आँवला का तेल

ताजे देशी आँवलों का स्वरस ४ किलो, तिल तेल १ किलो लेकर मन्द आग पर पकायें। जब मात्र तेल शेष रह जाये तब उतार कर मन पसन्द खुशबू यदि चाहें तो मिला लें। इसी प्रकार बालों के लिए अधिक लाभकारी बनाने के लिए समान भाग काले भंगरे का रस मिलाकर पाकाएं या स्मृति वर्धक बनाने के लिए ब्रहमी का रस या क्वाथ मिलाकर पाका लें । इस प्रकार आँवले का तेल, भृंगराज आँवला तेल या ब्रहमी आँवला तेल बन जायेगा। आवश्यकतानुसार कोई तेल बनाकर लाभ उठायें।

धात्री लौह

यह औषधि अम्ल पित्त, आध्यमान, बदहजमी, खट्टी डकरें आदि अनेक पित्तज व कफज उदर रोगों में अत्यन्त लाभकारी है।

इसे बनाने के लिए ताजे सुखाये हुये देशी आँवलों का चूर्ण ४०० ग्राम, अच्छी कम्पनी की बनी लौह भस्म २०० ग्राम, अच्छी मुलेठी का चूर्ण १०० ग्राम लें। सभी औषध द्रव्यों को मिलाकर खरल में रखें और ताजे आँवलों के रस से तर करके एक दिन रखा रहने दें फिर घोटें। सूख जाने पर पुनः आँवले का रस डालें फिर २४ घंटे रखने के बाद घोटें। पुनः रस डालें इस प्रकार सात बार रस डालकर घोटाई कर सुखा कर शीशी में रख लें। २५० मिली.ग्राम से ५०० मिली.ग्राम दवा मधु से दो बार लें।

आमलकी रसायन

६किलो देशी आँवलों का ताजा चूर्ण लेकर एक हजार आँवलों के रस में तर कर लें। एक दिन रखने के बाद खरल में घोटाई करें। पुनः इतने ही आँवलों का रस डालकर एक दिन रखकर घोटें। इस प्रकार २१ बार घोटाई करें। फिर इसमें घी ७०० ग्राम व मधु ६०० ग्राम (घी व मधु बराबर न डालें), पिपली छोटी ६५० ग्राम खान्ड डेढ़ किलो मिलायें। सभी द्रव्यों को अच्छी प्रकार मिलाकर घी चुपड़े हुए मिट्टी के पात्र में रखकर ढक्कन रखकर सन्धि बन्द कर राख के ढेर में ६ महीनों गाड़ दें। वर्षा ऋतु के बाद निकाल लें। मात्रा १० से २० ग्राम गोदुग्ध से। शरीर का शोधन कर के नियमित सेवन से मनुष्य निरोग रहता है। आयु व रोग से लड़ने की क्षमता बढ़ती है।

बलशाली महापौष्टिक पाक

वैद्य शिव कुमार सिंह, गोनी गोंडवा, हरदोई

शरद ऋतु समाप्त हो रही है। अतः अब हमारी पाचन क्रिया अच्छी हो गई है। जिन व्यक्तियों की पाचन क्रिया न सही हो वे इसके लिये रात को सोते समय छोटी हरड़ (काली हरड़) का चूर्ण एक तोला की मात्रा में गुनगुने जल से तीन दिन तक नियमित रूप से लें। मैं एक पौष्टिक पाक बनाने की विधि बतला रहा हूं। इसे प्रत्येक विवाहित व्यक्ति सेवन कर सकता है। कृपया अविवाहित व्यक्ति इसका सेवन न करें। यह पाक सर्दियों में ही शिशिर से हेमन्त तक सेवन करें। क्योंकि इसे पचाने के लिये सर्दी का मौसम ही उपयुक्त होता है।

सामग्री

बिनौलों की गिरी – ५० ग्राम, बादाम की गिरी – ५० ग्राम, उड़द की धुली दाल – ५० ग्राम, काले तिल – ३० ग्राम, शतावर – १० ग्राम, सफेद मूसली – १० ग्राम, काली मूसली – १० ग्राम, अश्वगंधा – १० ग्राम, कौंच के बीज – १० ग्राम, तालमखाना – १० ग्राम, गोखरू – १० ग्राम, बीज बन्द – १० ग्राम, सालिम मिश्री – १० ग्राम, सकाकुल मिश्री – १० ग्राम, बहमन सुर्ख – १० ग्राम, बहमन सफेद – १० ग्राम, कूठ – १० ग्राम, मुलेठी – १० ग्राम, कीकर की गोंद – १० ग्राम, दालचीनी – १० ग्राम, अकरकरा – १० ग्राम, लौंग – १० ग्राम, छोटी इलायची – १० ग्राम, केशर – ०५ ग्राम, भुनी भांग – २० ग्राम

विधि

बिनौलों की गिरी, बादाम की गिरी, उड़द की दाल, तथा काले तिल, इनको सिल पर पीसकर पीठी बना लें।फिर शतावर से छोटी इलायची तक सभी वस्तुयें बारीक कूट–पीसकर रख लें।

केशर को गुलाबजल में घोटकर अलग रख लें। पीठी को २०० ग्राम घी में भूरा होने तक भून लें, एक किलो देशी शकर की चाशनी बनाकर, भुनी पीठी चाशनी में डालकर खरल कर लें, फिर सभी पिसी हुई दवायें व भुनी, पिसी भांग सहित मिलाकर खरल कर लें और गुलाबजल में घोटी हुई केशर मिलाकर एक–एक तोले के लडडू बना लें अथवा घी से चुपड़ी थाली में जमा दें।

सेवन विधि :– जिन भाइयों को कब्ज़ रहता हो वे पहले पाचन क्रिया सुधार लें। फिर एक लडडू सुबह–शाम खाकर ऊपर से मीठा गुनगुना दूध पियें।

अविवाहित व्यक्तियों के लिये निम्न नुस्खा उपादेय है

सामग्री

सेमल मूसरा – १०० ग्राम
सफेद कंद – २०० ग्राम
गोखरू – ५० ग्राम

तीनों का बारीक चूर्ण करके एक तोला चूर्ण सुबह–शाम गाय के दूध के साथ सेवन करें तथा कब्ज़ न होने दें।

पथ्य :– सुबह अंकुरित मूंग, मसूर, चना व गेहूं का अल्पाहार व ताज़ा एवं सादा भोजन करें।

अपथ्य :– अचार, अरहर की दाल, मांस व मिर्च, मसाला।

मुनक्का से विभिन्न रोगों का इलाज

वैद्य. एस. ए. खान, लखनऊ

कौडी का दर्द– (इपीगैस्ट्रिक पेन)

२ रत्ती (२५० मिली ग्राम) असली हीरा हींग लें बीज निकाले हुए मुनक्के में लपेट कर निगलादें ऊपर से एक घूंट गरम जल पिला दें शूल समाप्त हो जायेगी।

हिचकी

जब हिचकी अन्य दवाओं से न रुक रही हों तो २५० मि.ग्राम हीरा हींग बीज निकले मुनक्के में लपेट कर गरम जल से दिन में २-३ बार खिलायें। हिचकी बन्द हो जाएगी।

निरापद रेचक

वृद्धलोग, महिलाओं तथा बच्चों को तथा मियादी बुखार में तथा सुकोमल प्रकृति के लोगों के लिए मुनक्का एक अच्छा रेचक है। आयु व कोष्ठ के अनुसार ५ से १५अहद मुनक्का दूध में उबालकर खिलादें और दूध पिलादें। यह प्रयोग शाम का सोने से पहले करना चाहिए।

छोटे बच्चों को भूनकर बीज निकाल मुनक्का रेचन के लिए खिला सकते हैं।

रेचन के लिए

मुनक्का, निशोथ और मिश्री बराबर बराबर लेकर कूट कर बेर के बराबर गोली बनालें एक या दो गोली गरम जल से दें।

ज्वर में भुने (सेंके हुए) चूसने से प्यास दूर होती है।

अम्ल पित्त व पेट व सीने में जलन होने पर मुनक्का सौंफ २०-२० ग्राम लेकर कूट लें। शाम को एक गिलास पानी में भिगो दें प्रातः मसल कर छान कर ३-४ बार में पियें।

मुनक्का, लौंग और मिश्री मुंह में रखकर चूसने से सूखी खांसी (वातज कास) में बहुत लाभ होता है।

अपने आंगन में

हेमंत में उपयोगी शाक-सब्जी उगाएँ

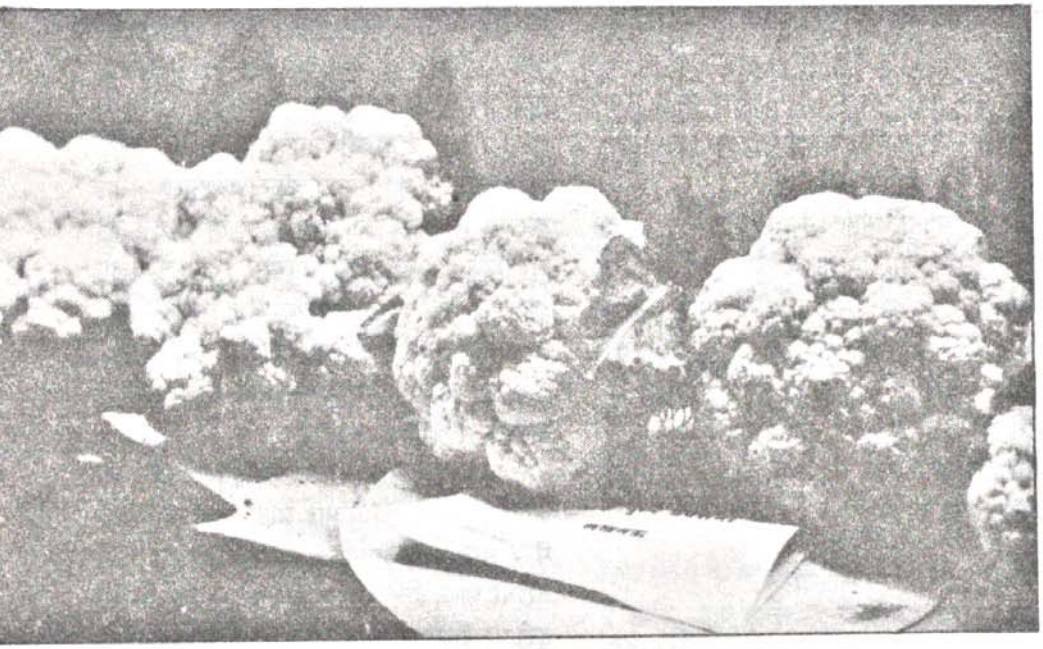

मटर

यह एक प्रसिद्ध फली है, जिसके हरे बीजों की तरकारी व अन्य खाद्य वस्तुएं बनायी जाती हैं। पकी फलियों और सूखे बीजों को भी विविध प्रकार से खाते हैं। देसी, पहाड़ी, सफेद, काली इत्यादि कई प्रकार की मटर पाई जाती हैं। काबुली मटर इसका प्रमुख भेद है।

औषधीय उपयोग- यह उत्तम आहार है। इसमें प्रोटीन की मात्रा प्रचुर होती है। मटर के दानों को शहद के साथ खाने से बलगम वाली खांसी में विशेष लाभ होता है। मटर पीस कर इसका लेप करने से स्तन की सूजन कम होती है। तिल के तेल मे इसे लेने से पेट की मरोड़ व पेचिस में लाभ होता है और मुंह के दाग दूर होते हैं। इसी प्रकार इसका लेप लगाने से झाईयां दूर होती हैं।

भाषावार नाम- हिन्दी-मटर, संस्कृत-सतीन, मराठी-वाटाणे, गुजराती-मटाणा, कन्नर-बटाणि, तेलुगू-जुंडुसातगलु, तमिल-पटाणी, मलायालम-पटटानि, अंग्रेजी-गार्डेन पी, लैटिन-पाइरस सटाईवम।

मटर कैसे उगायें- कम्पोस्ट खाद डालकर क्यारी की कई बार जुताई करें। बोने से पहले क्यारी खूब भुरभुरी व समतल कर लें। बोआई के समय नमी होना आवश्यक है। मटर की बोआई पंक्ति में करना चाहिए। दो पंक्तियों के मध्य ५० से.मी. के अंतर पर बीज सतह से २-३ से.मी. गहरा बोना चाहिए। मटर ज्यादा पानी चाहती है अतः १ या २ सिंचाई काफी होती है। पहली सिंचाई, बुवाई के १५-२० दिन बाद व दूसरी ४०-४५ दिन पर करनी चाहिए। सिंचाई के बाद निराई-गुड़ाई आवश्यक है। ताकि खरपतवार न पनप सके। चूंकि मटर का तना मुलायम होता है अतः जमीन पर फैल कर शाखा एक दूसरे पैधे का प्रकाश रोक सकती हैं। अतः पौधों को लकड़ी इत्यादि का सहारा देकर उनपर चढ़ा देने से सबको धूप खूब मिलती है और फलियां अच्छी मिलती हैं। मटर की फसल में एक माह तक फूल आते रहते हैं और धीरे धीरे फलियां बनती हैं। हरी सब्जी हेतु फलियां न तो कच्ची अवस्था में तोड़े और न ही दानों को कड़ा पकने दें। जैसे जैसे फलियों में दाना भरता जाए उन्हें तोड़ते रहना चाहिए। फसल के अंत में कुछ फलियां बीज के लिए छोड़ देनी चाहिए।

फूल गोभी

यह प्रसिद्ध शाक जाड़ों के मौसम मे प्रचुर मात्रा में बाजार में मिलता है और सभी लोग इसे बड़े चाव से खाते हैं।

फूल गोभी के गुण- यह ठंडी प्रकृति की है यह पित्त शामक और कफ वर्धक है। यह पौष्टिक एवं अच्छे स्वाद वाली सब्जी है और मोटापा भी नहीं बढ़ाती है। फूलगोभी तने का परिवर्तित रूप है। फूल जैसा आकार होने के कारण यह फूल गोभी कहलाता है। पत्ते वाली न होने के कारण यह वातवर्धक नहीं है। परन्तु इसे वात-वर्धक पदार्थों, जैसे चावल के साथ नहीं खाना चाहिए। विशेष रूप से वातज, कफज या वात-कफज प्रकृति के व्यक्तियों को इसे चावल के साथ नहीं खाना चाहिए। पित्तज प्रकृति के व्यक्तियों के लिए यह बहुत उपयुक्त साग है। इसे चावल के साथ वे बहुत आराम से ले सकते हैं। हर व्यक्ति के लिए हर सब्जी तथा हर अन्न या खाद्य पदार्थ सात्म्य नहीं होता है। जब हम अज्ञान या जिव्हा के स्वाद के वश में खाद्य पदार्थों का सेवन बिना विचारें करते हैं तभी वे हमें हानिकर लगते हैं या हमें उनका पूर्ण लाभ प्राप्त नहीं होता। यदि हम थोड़ी सी मेहनत करके यह जानने का प्रयत्न कर लें कि हमारी प्रकृति के अनुसार कौन सा शाक, फल, अन्न या खाद्य पदार्थ हमारे लिए सात्म्य है तो हमारी बीमारियां भी दूर हो जाएंगी और हम स्वस्थ रह सकेंगे।

उगाने की विधि- फूल गोभी की "पटना" प्रमुख प्रजाति है जो उत्तर भारत के मैदानी भागों के लिए उपयुक्त है। इसके अतिरिक्त "स्नोबल" और "फोररनर" दो अन्य प्रजातियां भी लोकप्रिय हैं। पौधे अच्छी खदीली दोमट मिटटी में अच्छे पनपते हैं। समतल क्यारियों में जुलाई से सितम्बर तक बीजारोपण करते हैं। २ सप्ताह

के पौधों को ४० सें.मी. की दूरी रोपित कर देते हैं। दो कतारों के मध्य ६० से.मी. की दूरी बनाये रखें। रोपाई के तुरंत बाद सिंचाई करनी चाहिए तथा प्रत्येक ५–६ दिन पर पानी देते रहें। सूखे की स्थिति में फूल जल्दी आने लगेंगे व छोटे रह जाऐंगे। इसी प्रकार पानी की कमी से फूल का रंग भूरा या बादामी होने लगेगा। खरपतवार भी बीच–बीच में निकालते रहें और अमोनियम सल्फेट व सोडियम नाइट्रेट थोड़ी मात्रा में डालें। फसल १२०–१५० दिन में तैयार हो जाती है। फूल बदरंग हो उससे पहले काट कर अलग कर लेने चाहिए।

शलजम

यह सारे भारतवर्ष में जाड़ों के दिनों में उपयोग किया जाने वाला कंदशाक है। शलजम अधिकतर तरकारी के रूप खाया जाता है। शलजम का अचार पाचन के लिए खाया जाता है। शलजम के उपयोग से पेशाब साफ होती है तथा यदि पेशाब करने में जलन हो तो लाभ पहुंचता है। कब्ज, खांसी, कमजोरी, पथरी रोग में गठिया व सियाटिका आदि रोग में इसका उपयोग पथ्य के रूप में होता है। इसके अधिक खाने से पेट फूलता है और गैस बनती है। इसके निवारण हेतु शलजम को काली मिर्च व नींबू के रसे के साथ लेना चाहिए।

भाषावार नाम– हिन्दी–शलजम शलगम, मलयालम–सीमामुलंगि, असमिया–शलगोम, पंजाबी– गोग्लु, अंगेजी– टर्निप, लैटिन– ब्रास्सिका रापा।

उगाने की विधि– शलजम एक द्विवर्षीय फसल है। पहले वर्ष इसमें एक शंखाकर चपटा, फूला हुआ कंद एवं सतह से ऊपर उठा हुआ पत्तियों का झुंड होता है। दूसरे वर्ष १–३ फीट उंचा तना, पत्तियां एवं पुष्प आते हैं। सितम्बर से नवम्बर तक इसकी बुआई की जाती है।

यह ठंडे स्थानों पर अच्छी उपज देता है। यह सभी प्रकार की मिटटी पर पैदा किया जा सकता है परन्तु अच्छी कम्पोस्ट पड़ी समतल मिटटी सर्वथा उपयुक्त होती है। शलजम के बीजों को पहले रेत में मिलाकर फिर छिड़क कर बोते हैं। जिन स्थानों पर पानी भर जाने की आशका हो वहां मेढ़ बना कर १५ से.मी. के अंतर पर बीज बोते हैं। पौधे जम जाने पर कुछ पौधों को इस प्रकार निकाल देते हैं कि पौधों में १०–१५ से.मी. का अंतर बना रहे। फसल ४५–७० दिनों में तैयार हो जाती है। इस बीच एक या दो बार खरपतवार निकाल देने चाहिए और पानी भी १५ दिन के अंतर से लगाना चाहिए। बुवाई के २५–३० दिन के बाद एक बार निराई व गुड़ाई भी कर देनी चाहिए। पानी की कमी या सूखा छोड़ देने पर शलजम का कंद सख्त हो जाता है। कंद का आकार बड़ा हो जाने पर एक पानी लगागर अगले दिन पौधे को उखाड़ लेना चाहिए ऊपर के शाकीय भाग को काट कर कंद धो लेना चाहिए और उपयोग करना चाहिए।

मूली

यह विभिन्न आकार प्रकार के सफेद रंग का एक प्रसिद्ध शाक है। इसका स्वाद रसीला, क्षारीय एवं तीक्ष्ण होता है। आयुर्वेद के अनुसार छोटी मूली कड़वी चरपरी हृदय के लिए बलदायक, रुचिकर, त्रिदोष का शमन करने वाली तथा स्वर में निखार लाने वाली होती है पर बड़ी या मोटी मूली तीक्ष्ण, पचने में कठिन और गैस बनाने वाली तथा त्रिदोषकारक है किंतु बड़ी मूली को तेल या घी में भून लिया जाय तो वह लाभदायक होती है।

भारत के विभिन्न प्रदेशों में इसे भिन्न भिन्न नामों से जाना जाता है– जैसे हिन्दी–मूली, मुरई मूरा, संस्कृत– मूलक, नागदन्ती, हरिपर्णी, बंगला– मूला, मराठी– मुला, गुजराती– मूली, पंजाबी– मुरि, कन्नड एवं तमिल– मुल्लंगि, तेलुगू– मुलगीं, अंगेजी– रैडिश, लैटिन– रैफेनस सेटाइवस।

मूली कैसे उगायें– यह एक वर्षीय शाक बीजों से उगाया जाता है। दक्षिण और मध्य भारत के पहाड़ी स्थानों और उत्तर भारत के मैदानी भागों में जाड़ों के मौसम में इसे उगाते हैं। पूसा देशी, पूसाहिमानी, पूसी चेतकी, पूसा रेशमी, जापानी व्हाइट, पंजाब सफेद व कल्याणी सफेद आदि इसकी कुछ उन्नत किस्में हैं मूली के लिए सभी प्रकार की मिटटी उपयुक्त होती है। परन्तु भुरभुरी दुमट अच्दी उपज के लिए सर्वथा उपयुक्त होती है। मिटटी की अच्छी तरह जुताई कर उसमें गोबर की सड़ी खाद मिला देतें हैं। रासायनिक खाद का उपयोग मूली के लिए लाभप्रद होता है। रासायनिक खाद मिश्रण बुवाई के पहले डालकर क्यारी की भली भांति जुताई कर देनी चाहिए। इससे मूली की जड़ें स्वस्थ व आकार में बड़ी हो जाती हैं।

इसकी बुआई अगस्त से जनवरी तक की जाती है। मूली की बुआई छोटी छोटी क्यारियों में २ सप्ताह के अंतर पर करते हैं जिससे मूली बराबर प्राप्त होती रहे। कतारों में १५ से.मी. की दूरी पर बीजों को डाल देतें हैं। बीजों को सतह से २ से.मी. की गहराई पर डालकर बोते हैं। अधिक गहराई पर बोने पर फसल देर से होती है। इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि कम सड़ी अथवा बिना सड़ी खाद या कचरा खेत में नहीं डालें अन्यथा मूल विभाजित हो जाता है। मूली के कन्द स्वयं इतनी जल्दी बढ़ते हैं कि खर पतवार की विशेष कठिनाई नहीं होती है। बुआई के तुरंत बाद पानी लगाना चाहिए तथा उसके पश्चात् सप्ताह में एक बार पानी लगाना चाहिए। मूली ४०–५० दिन में तैयार हो जाती है। उखाड़ने के पहले एक बार हल्का सा पानी दे देना चाहिए। जिससे मूली आसानी से उखड़ जाए।

ग्रह और स्वास्थ्य

पं. काशीनाथ गोपाल गोरे, लखनऊ

स्वास्थ्य एवं शरीर संरचना की जानकारी जन्मकुण्डली से प्राप्त करने के लिए सर्वप्रथम तीन बातों पर ध्यान देना आवश्यक है, क्योंकि इन्हीं तीन बातों पर इस विषय की जानकारी निर्भर है।

तीन मुख्य बातें हैं लग्न, सूर्य और चन्द्रमा की स्थिति। इनमें से लग्न का प्रभाव शारीरिक बल और शरीर संरचना पर अधिक होता है तथा जिस राशि का लग्न हो उस राशि से सम्बन्धित काल पुरुष के अंगों के अनुसार सम्बन्धित व्यक्ति के अंगों पर बाह्य कारणों से होने वाला प्रभाव भी लग्न के क्षेत्र में आता है।

सूर्य, जीवन शक्ति एवं हृदय पर प्रभाव डालता है। सूर्य का प्रभाव इस सम्बन्ध में स्त्री और पुरुष दोनों पर समान रूप से पड़ता है। इस सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि यदि सूर्य लग्न के समय क्षितिज से ऊपर हो तो जीवन–शक्ति और हृदय बलवान रहेंगे और यदि क्षितिज से नीचे हो तो इनमें क्षीणता परिलक्षित होगी।

पुरुष के सम्बन्ध में सूर्य जीवनदाता का रूप ग्रहण करता है। जन्मकुण्डली में इसकी स्थिति तथा अन्य ग्रहों से उसके सम्बन्ध पर जीवन की अवधि निर्भर करती है।

स्त्री के सम्बन्ध में चन्द्रमा मूलतः जीवनदाता है और चन्द्रमा की स्थिति एवं अन्य ग्रहों के सम्बन्ध पर जीवन की अवधि निर्धारित होती है।

लग्न, सूर्य और चन्द्रमा आदि के सम्बन्ध में स्थिति के विवरण निम्नवत् हैं –

लग्न यदि विषम राशि में हो तो सामान्यतया शरीर बलवान होता है और आगन्तुक कारणों से रोग उत्पन्न होने की सम्भावना कम होती है। सम राशियों में लग्न हो तो सामान्यतया शरीर निर्बल होता है और रोगों की उत्पत्ति की सम्भावना अधिक होती है।

मेष, सिंह, और धनु राशि के लग्न के जातक बलवान होते हैं क्योंकि अग्नि ऊर्जा का रूप है और ये राशियाँ अग्न्यात्मक हैं। इसी श्रेणी में वायवीय राशियाँ अर्थात् मिथुन, तुला और कुम्भ भी हैं जिनमें लग्न होने पर शरीर बलवान रहता है।

पार्थिव राशियों में अर्थात् वृषभ, कन्या और मकर राशियों में लग्न होने पर सम्बन्धित व्यक्ति का शारीरिक बल यद्यपि कम होता है तथापि शरीर भरा–पूरा रहता है और उसकी रचना सही रहती है। जलीय राशियों अर्थात् कर्क, वृश्चिक और मीन में लग्न होने पर सम्बन्धित व्यक्ति सामान्यतया निर्बल होता है और उसकी रोग–प्रतिरोधक क्षमता अल्प होती है।

उपरोक्त बातों को निश्चित रूप से जानने के लिए लग्न के अंश (डिग्री) जानना भी आवश्यक है ताकि प्रथम भाव और लग्न की राशि पर लग्न का कितना प्रभाव है यह भी स्पष्ट हो सकेगा।

यदि लग्न में – सूर्य स्थित हो तो शारीरिक रोग एवं जुकाम से सम्बन्धित बाधाएँ उतपन्न होती हैं।

चन्द्र स्थित हो तो शरीर के विभिन्न संस्थानों में गड़बड़ियाँ उत्पन्न होती हैं।

मंगल स्थित हो तो जलन, दुर्घटनाजन्य कष्ट होता है।

बुध स्थित हो तो नाड़ी संस्थान में कष्ट या मानसिक असन्तुलन उत्पन्न होता है।

गुरु स्थित हो तो रक्त सम्बन्धी अथवा अति सेवन या अति कार्य आदि से दोष उत्पन्न होते हैं।

शुक्र स्थित हो तो विषय भोग की अतिशयता से कष्ट होता है।

शनि स्थित हो तो निर्बलता अथवा सर्दी, जुकाम आदि कष्ट–साध्य एवं लम्बे समय तक चलनेवाले रोग होते हैं।

सूर्य, जैसा कि ऊपर बताया गया है, सूर्य पुरुष के लिए जीवनदाता है और उसके प्रभाव से जीवन की अवधि निश्चित होती है। क्षितिज के ऊपर सूर्य की स्थिति उत्तम मानी जाती है और उस अवस्था में अन्य ग्रह निष्प्रभावी हो जाते हैं।

विषम राशियों में सूर्य अधिक बलवान होता है, जबकि सम राशियों में उसका बल क्षीण माना जाता है। विषम राशियों में वृषभ और वृश्चिक बलवान और सम राशियों में तुला और कुम्भ निर्बल हैं।

अग्न्यात्मक राशियाँ समान गुण धर्म की होने के कारण सूर्य इनमें बलवान् होता है। वायवीय, पार्थिव और जलीय राशियों में क्रमशः सूर्य का बल क्षीण होता जाता है।

चन्द्रमा, जिस प्रकार सूर्य पुरुष के लिए जीवनदाता माना जाता है उसी प्रकार चन्द्रमा स्त्री के लिए जीवनदाता होता है। स्त्री की कुण्डली में चन्द्रमा की स्थिति और अन्य ग्रहों से सम्बन्ध पर स्त्रियों की जीवन–लीला की अवधि दीर्घ या अल्प होती है। यदि चन्द्रमा शुक्लपक्ष का हो तो वृद्धिगत होने के कारण बलवान् होता है। कृष्ण पक्ष की अष्टमी से अमावस्या तक चन्द्रमा निर्बल होता है।

जलीय राशियों में तथा सम राशियों में चन्द्रमा बलवान् तथा अग्न्यात्मक और विषम राशियों में बलहीन होता है। पार्थिव और वायवीय राशियों में मध्यम होता है।

पृ 22 का शेष

आयुर्वेद में कस्तूरी से निर्मित औषध योग्य कस्तूरी भैरवरस, चतुर्भुजरस, मृगमदासव, हिंगुकर्पूरवटी आदि कतिपय योगों का उपयोग सन्निपातज्वर, हृदयविकार, हृदयावसाद, पक्षाघात, वातवह संस्थान विकार तथा विशेष रूप से ध्वजभंग (लिंगेन्द्रियदोष) शीघ्र पतन में वाजीकरण के प्रयोग में किया जाता है। अतः कस्तूरी एक कामोद्दीपक दौर्गन्ध्यहर, उग्रसुगन्धियुक्त व सौन्दर्य प्रसाधन में उपयोगी द्रव्य माना गया है। विदेशी कस्तूरी सौन्दर्य प्रसाधन सामग्री हेतु अधिक लोकप्रिय है।

जीवनीय विज्ञान पत्रकारिता पाठ्यक्रम निर्धारण हेतु कार्यशाला

विज्ञान पत्रकारिता की ओर उन्मुख करने वाले १४ सप्ताह के संक्षिप्त प्रशिक्षण पाठ्यक्रम निर्धारण हेतु जीवनीय सोसाइटी द्वारा लखनऊ विश्वविद्यालय के लोक प्रशासन विभाग में दो दिवसीय कार्यशाला का आयोजन विगत नवम्बर को किया गया। उ० प्र० सरकार के चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवा महानिदेशक श्री लव वर्मा ने कार्यशाला का उद्घाटन करते हुये इसे सामयिक आवश्यकता बताया। श्री लव वर्मा ने हमारे दैनिक जीवन में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के घुलमिल जाने को रेखांकित करते हुये इस बात पर प्रसन्नता व्यक्त की पत्र पत्रिकायें और दूरदर्शन इसे अधिक स्थान दे रहे हैं।

स्वास्थ्य संप्रेषण के क्षेत्र में कार्यरत जीवनीय सोसायटी द्वारा इस संक्षिप्त प्रशिक्षण कार्यक्रम का आरम्भ किया जा रहा है। भारत सरकार के विज्ञान और प्रोद्योगिकी विभाग के राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद की सहायता से आरम्भ किये जाने वाले इस डिप्लोमा पाठ्यक्रम को लखनऊ विश्वविद्यालय की मान्यता प्राप्त है। जीवनीय सोसायटी के अध्यक्ष और संजय गांधी आयुर्विज्ञान संस्थान के प्रो० एस० आर० नाइक ने विज्ञान पत्रकारिता में परिशुद्धता पर जोर देते हुये इस बात पर दुःख व्यक्त किया कि वैज्ञानिकों में अपने शोध परिणामों को संप्रेषित करने की इच्छाशक्ति और क्षमता का अभाव होता जा रहा है।

प्रस्तावित पाठ्यक्रम की रूपरेखा प्रस्तुत करते हुये जीवनीय सोसायटी के सचिव और केन्द्रीय औषधि अनुसंधान संस्थान में वैज्ञानिक डा० नरेन्द्र मेहरोत्रा ने सुझाव दिया कि विज्ञान पत्रकारिता को विकास की व्यापक समझदारी से संबद्ध होना चाहिये। चूंकि इस पाठ्यक्रम से पत्रकारों और अन्य पेशेवर लोगों को भी प्रशिक्षण देने की आशा है, उन्होंने प्रभावी संचार क्षमताओं और विश्लेषणात्मकता का विकास करने की आवश्यकता पर जोर दिया।

आई० आई० टी० कानपुर के प्रोफेसर पी. आर. के. राव ने विज्ञान पत्रकारों से अपेक्षा की कि विज्ञान और तकनीकी के प्रयोग से जनता को शक्ति प्रदान हो सके। यहीं से आये प्रोफेसर अगम प्रकाश शुक्ल ने विज्ञान और तकनीकी पर जनोन्मुख दृष्टिकोण अपनाने की बात कही क्योंकि इसके बिना जनता को शक्ति नहीं दी जा सकती है। उन्होंने इस प्रचलित भ्रम का खंडन करने का अनुरोध किया कि विज्ञान और तकनीकी का प्राथमिक कार्य केवल आर्थिक विकास है।

राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद्, नई दिल्ली से आए श्री मनोज पटैरिया ने उनके संस्थान द्वारा प्रायोजित दूरदर्शन धारावाहिकों का उदाहरण देकर बताया कि इनसे लोगों में वैज्ञानिक चेतना जागृत करने में मदद मिलेगी।

जीवनीय सोसायटी की कुमारी वीणा टंडन ने देश भर के विश्वविद्यालयों और दूसरी संस्थाओं में चल रहे पाठ्यक्रमों का सर्वेक्षण प्रस्तुत किया। प्रतिभागियों ने अनुभव किया कि इस पाठ्यक्रम को प्रायोगिक रूप से चलाना चाहिए तथा विशेषज्ञों को प्रत्येक प्रतिभागी की व्यक्तिगत क्षमताओं की ओर इस प्रकार ध्यान देना चाहिए कि एक मानक पाठ्यक्रम का ढांचा तैयार हो सके।

शेष पृ 55 पर

लो० स्वा० प० सं० स० समाचार

चीन यात्रा का विवरण

चीन की राजधानी बीजिंग में दिनांक ६ से १० सितम्बर १९९४ तक आयोजित तीसरी अंतर्राष्ट्रीय मानव–औषधि निर्माण विज्ञान कांग्रेस का आयोजन हुआ। इसमें भाग लेने हेतु लोक स्वास्थ्य परम्परा संवर्धन समिति के अध्यक्ष श्री दर्शन शंकर, सचिव डा० जी० जी० गंगाधरन और डा० पी पुष्पांगदन चीन यात्रा पर गये। यह यात्रा चीन सरकार के जनस्वास्थ्य मंत्रालय के आमन्त्रण पर हुई और इसे जर्मनी के जन स्वास्थ्य संवर्धन केन्द्र द्वारा प्रायोजित किया गया। उन्हें यह निमन्त्रण स्थानीय स्वास्थ्य परम्पराओं के संवर्धन और भारतीय चिकित्सा पद्धतियों के प्रचार प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान के लिये दिया गया। यह यात्रा १९८२ से चीन सरकार द्वारा चलाई जा रही खुलेपन की नीति के कारण सम्भव हुई।

कांग्रेस में ३५० लोगों ने भाग लिया जिनमें से लगभग १०० विदेशी प्रतिभागी थे। वैद्य गंगाधरन ने– " भारत में परम्परागत व्यवहार की दो धारायें– स्थानीय स्वास्थ्य परम्पराओं के संदर्भ में " विषय पर अपना आलेख पढ़ा। उन्होंने "तुलनात्मक औषधिविज्ञान" पर हुये सत्र की अध्यक्षता भी की उन्होंने चीन में चलाये जा रहे आधुनिकीकरण और चीनी जनता की अनुशासन, कठोर श्रम और स्वच्छता की आदतों की प्रशंसा की ।

परम्परागत चीनी चिकित्सा पद्धति (ची० चि० प०) का उनके देश में उच्च सम्मान है और तीन विश्वविद्यालय केवल इसी पद्धति की शिक्षा हेतु कार्यरत हैं। ची० चि० प० के इन विश्वविद्यालयों में पारम्परिक औषधियों के ३ वर्ष, ५ वर्ष और ७ वर्ष (स्नातकोत्तर) के पाठ्क्रम हैं। यह पाठ्यक्रम वहां की केन्द्रीय सरकार की शिक्षा समिति के अर्न्तगत हैं जो शिक्षा की सर्वोच्च अधिकारी है।

वैद्य गंगाधरन ने देखा कि सभी आधुनिक चिकित्सालयों में ची० चि० प० की सुविधा है और सरकारी नौकरी प्राप्त करने हेतु आधुनिक चिकित्सा पद्धति के डाक्टरों को भी ची० चि० प० का ज्ञान अनिवार्य है। चीन में बहुत से हर्बल गार्डेन और संरक्षण पार्क हैं। ची० चि० प० की औषधियों के व्यावसायिक निर्माण के लिये लगभग ३५ वनस्पतियों की खेती की जाती है।

ग्रामीण क्षेत्र में प्राथमिक स्वास्थ्य रक्षा के सभी क्षेत्र ची० चि० प० के अर्न्तगत आते हैं। औषधीय पौधा विकास संस्थान के निदेशक प्रोफेसर सिया–पी–किंग के अनुसार चीन की कुल औषध खपत का ४५% ची० चि० प० का है और उन्होंने औषधीय पौधों के सामुदायिक उद्यान लगाये हैं। सत्तर के दशक के आरम्भ में प्रारम्भ किये गये ग्रामीण डाक्टर (बेयरफुट डाक्टर) कार्यक्रम को अधिक शिक्षा और प्रशिक्षण देकर उच्चीकृत किया गया है।

भारतवर्ष अपने विशाल संसाधनों, जन शक्ति और उपलब्ध उच्च स्तर के ज्ञान भण्डार का सदुपयोग कर सवास्थ्य रक्षा के क्षेत्र में आश्चर्यजनक उपलब्धियां प्राप्त कर सकता है। दोनों देशों की पारम्परिक चिकित्सा पद्धति में बहुत समानतायें हैं। कई प्राचीन केन्द्रों की अपनी यात्रा में वैद्य गंगाधरन ने द्विपक्षीय सहयोग की संभावनाओं का आकलन किया। चीन में भारतीय दूतावास ने भी इस सम्बन्ध में पूरे सहयोग का आश्वासन दिया है।

पृ 54 का शेष

भारत सरकार की वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद के श्री आर० के० सहाय ने संतुलित पाठ्यक्रम तैयार करने के लिए जीवनीय सोसायटी की सराहना की तथा इसमें विधिक एवं नीतिपरक मुद्दों को शामिल करने का सुझाव दिया।

स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण के राष्ट्रीय संस्थान, दिल्ली से पधारी डा० (श्रीमती) गीता बामजई, ने प्रतिभागियों को हिंदी भाषा भाषी क्षेत्रों, विशेषतः उ० प्र० की परिस्थितियों पर ध्यान केंद्रित करने को कहा।

लखनऊ के वरिष्ठ पत्रकार प्रशांत कुमार ने इस बात पर प्रसन्नता प्रकट की कि यह प्रशिक्षण विज्ञान संप्रेषण में कई वर्षों से कार्यरत संस्था द्वारा किया जा रहा है। अतः प्रशिक्षणार्थियों को व्यावहारिक अनुभव भी प्राप्त होगा।

टाइम्स ऑफ इण्डिया के श्री आर० एम० लाल ने ऐसी व्यवस्था विकसित करने की मांग की जिससे विभिन्न वैज्ञानिक और तकनीकी संस्थाओं में प्राप्त नवीनतम वैज्ञानिक जानकारियों का संप्रेषण हो सके। पी० टी० आई० के श्री संजय जौहरी ने आशंका व्यक्त की कि इन स्रोतों से प्राप्त जानकारी का उपयोग तभी संभव है जब संपादक व समाचार पत्रों के मालिक इन्हें उचित स्थान दें। तमाम दबावों के बावजूद श्री जौहरी ने विज्ञान पत्रकारिता के भविष्य में पूरा विश्वास व्यक्त किया और आशा की कि इस तरह के पाठ्यक्रम सामयिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उचित वातावरण बनाते हैं।

समापन सत्र में परिचर्चा के दौरान प्राप्त संशोधनों को सम्मिलित करके पाठ्क्रम की अन्तिम रूपरेखा निश्चित की गई तथा आशा प्रकट की गई कि १४ सप्ताह का प्रशिक्षण कार्यक्रम शीघ्र आरम्भ हो जाएगा। जीवनीय सोसायटी की कुमारी वीणा टण्डन ने कार्यशाला के अन्त में धन्यवाद ज्ञापन किया।

त्वचा

पं० काशीनाथ गोपाल गोरे, लखनऊ

त्वचा, चमड़ी या खाल/छाल मांस धातु से संबद्ध उपधातु है। मांस के पोषक सभी घटकों का वहन करने वाले स्रोतों का मूल त्वचा है। महर्षि सुश्रुत के अनुसार शुक्र और आर्तव के संयोग से जब गर्भ की उत्पत्ति होती है उस समय, जिस प्रकार दूध गरम करते समय उस पर मलाई की परत जमती है, उसी प्रकार गर्भ के निर्माण की प्रक्रिया में रक्त के पचन होते समय त्वचा का निर्माण होता है। त्वचा सुश्रुत के मतानुसार सात परतों की होती है, जिनके नाम हैं १.अवभासिनी, २.लोहिता, ३.श्वेता, ४.ताम्रा ५.वेदिनी, ६.रोहिणी और ७.मांसधरा। चरक के मतानुसार त्वचा की छः परतें होती हैं, जिनके नाम क्रमशः उदकधरा, रक्तधरा, मांसधरा, मेदोधरा, अस्थिधरा और मज्जाधरा। मांसधरा त्वचा में सिध्म (कुष्ठ का एक प्रकार), श्वित्र (सफेद दाग), मेदोधरा त्वचा में दाद और अन्य कुष्ठ रोग, अस्थिधरा त्वचा में एलर्जी (फोड़े), विद्रधि और छठी त्वचा में विकृति से काले चकत्ते पड़ते हैं। इसके छिन्न होने से मूर्च्छा आती है और इसकी विकृति से सान्धि–स्थलों में गाठें होती हैं, जो असाध्यप्राय होती हैं।

सुश्रुत ने त्वचा का प्रमाण भी बताया है। सात परतों में पहली धान का अट्ठारहवां भाग, दूसरी सोलहवां भाग, तीसरी बारहवां भाग, चौथी आठवां भाग, पांचवी पांचवां भाग, छठी त्वचा एक धान के बराबर और सातवीं दो धान के बराबर होती है।

त्वचा स्पर्शनेन्द्रिय का आधिष्ठान है। इससे स्पर्श ज्ञान होता है। स्पर्शज्ञान के अन्तर्गत उष्ण, शीत, कोमल, कठोर, रूक्ष, गीला, चिकना, खुरदरा, द्रव, घन, वाष्प आदि आतें हैं। स्पर्श वायुतत्व का गुण है। अतः त्वचा वायुतत्व के अधीर कार्य करती है।

त्वचा द्वारा संपूर्ण शरीर आच्छादित है। यदि त्वचा न हो तो शरीर का सुडौलापन, सौन्दर्य बोध समाप्त हो जाय। मांस, रक्त, अस्थि आदि त्वचा द्वारा ढके होने के कारण ही शरीर को रूप प्राप्त होता है। त्वचा रूखी, चिकनी, खुरदरी, मुलायम, कठोर होती है। त्वचा से मनुष्य की प्रकृति तो खराब होती ही है, शरीर की विकृति त्वचा पर तत्काल अपना प्रभाव डालती है। त्वचा पर्याप्त लचीली होती है। दुबले मनुष्य पर मेद और मांस बढ़ने पर त्वचा फैल जाती है और मोटे व्यक्ति के दुबलाने पर त्वचा सिकुड़ती है। बुढ़ापे के कारण त्वचा में झुर्रियां पड़ जाती हैं।

त्वचा का ध्यान रखने से सौन्दर्य बढ़ता है।

शरीर की कान्ति त्वचा पर निर्भर है। स्त्रियों के लिए अपने त्वचा की अभिरक्षा हेतु त्वचा का ध्यान रखना, चाहे वह चेहरे की हो या हाथों और पैरों की हो, अनिवार्य है।

आधुनिक चिकित्सा शास्त्र के अनुसार त्वचा की रचना दो परतों में होती है। बाहरी परत पेशियों के पांच स्तरों से बनती है। ऊपर की त्वचा का पेशीस्तर घिसता रहता है, जिसकी पूर्ति पेशियों के पाँचवे स्तर के सतत् निर्माण से होती है। इस वाह्य परत में मेलेनिन नामक रंग द्रव्य होता है। इस द्रव्य की मात्रा आनुवांशिकता, वातावरण, लिंग, आयु आदि पर निर्भर है और इसकी मात्रा तथा त्वचा के नीचे स्थित मेद के कैरोटिन (पीला द्रव्य) और त्वचा के रक्त प्रवाह में स्थित हीमोग्लोबिन के आधार पर त्वचा का रंग– काला, सांवला, गोरा आदि–निर्धारित होता है।

त्वचा की दूसरी परत पेशियों और सूक्ष्म तन्तुमय पदार्थों से बनती है। इसी परत में रक्त प्रवाह हेतु सूक्ष्मवाहिनियां, संवेदना के ज्ञान हेतु मज्जा तन्तु और रोममूल होते हैं। इस परत से निकलने वाला तैलीय पदार्थ त्वचा को स्वस्थ रखता है। यह तैलीय पदार्थ त्वचा पर बने रहना नितान्त आवश्यक है। साबुन के प्रयोग से यह निकल जाता है और तैलीय पदार्थ की कमी से त्वचा में विकृति उत्पन्न होती है। अतः साबुन का प्रयोग अतिरिक्त तैलीय पदार्थ को या मैल को दूर करने हेतु न्यूनतम करना चाहिए।

त्वचा में विकार से होने वाले मुख्य रोग हैं–खुजली, कंडू, दाद, चकत्ते, जलन, एलर्जीजन्य सूजन और दाद, सिर में जुंए, पैरों में विवाई फटना, व्रण, कांटा चुभना, विद्रधि, छोटीमाता, बड़ी माता, खसरा, विभिन्न कुष्ठ रोग, श्वित्र (श्वेत कुष्ठ), पैर के तलुओं में सूजन और घाव, मुंहासे आदि।

त्वचा को स्वस्थ रखने के लिए सफाई का ध्यान रखना आवश्यक है। त्वचा को स्वच्छता और धूप मिलनी चाहिए। अभ्यंग और स्नान, मालिश, ढीले और ऋतु के अनुसार उपयुक्त कपड़े, नाखून स्वच्छ रखना आदि त्वचा को रोगों से बचाकर स्वस्थ रखते हैं।

त्वचा के नीचे पसीने की ग्रन्थियां होती है और उनसे पसीना त्वचा के ऊपर आता है। पसीना निकलने से शरीर का तापमान नियंत्रित होता है और उसके साथ शरीर के दोष निकलते हैं। पसीना मानसिक आघात, घबड़ाहट आदि में भी निकलता है और मानसिक सन्तुलन बनाये रखने के लिए आवश्यक है।

जीवनीय पहेली

हमारे पिछले अंक में प्रकाशित पहेली पर प्राप्त प्रतिक्रियाओं से हमारा उत्साह बढ़ा है हमें और अधिक शुद्ध हलों की प्रतीक्षा है और हम इसको और अधिक रोचक बनाने का संकल्प करते हुए प्रस्तुत करते हैं।

प्रथम पुरस्कार : दो वर्ष तक निःशुल्क जीवनीय।

द्वितीय पुरस्कारः एक वर्ष तक निःशुल्क जीवनीय।

नियम और शर्तें

- पहेली का हल भेजने का कोई शुल्क नहीं देना होगा।
- पहेली का हल कोई भी पाठक भेज सकता है।
- पहेली का हल साधारण डाक से भेजना होगा।
- एक व्यक्ति को एक ही पुरस्कार मिल सकेगा।
- सर्वशुद्ध हल न आने पर पुरस्कार देने या न देने का अधिकार सम्पादक को होगा।
- सम्पादक का निर्णय हर स्थिति में मान्य होगा। किसी तरह की शिकायत सम्पादक से ही की जा सकेगी।
- किसी भी तरह का कानूनी दावा, कहीं भी दायर नहीं किया जा सकेगा।
- यहाँ छपे पृष्ठ को भरकर सामान्य डाक द्वारा भेजी गयी पूर्ति ही स्वीकार्य होगी।

कृप्या सही का निशान (√) उन वाक्यों पर लगायें जो सही हों। जहाँ विवरण देने के लिए कहा गया है, वहाँ विवरण भरें।

१. आदान काल से क्या तात्पर्य है?

२. 'हंसोदक' क्या है? इसका सेवन कब करना चाहिए?

३. ऊर्जा अनुत्पादक आहार में खनिज लवण कितने प्रकार के हैं? उनके अन्तर्गत क्या क्या आते हैं?

४. बीटा कैरोटीन क्या है? संक्षेप में उसके लाभ लिखिये। यह किस वनस्पति में अधिक पाया जाता है?

५. रक्तगत शर्करा का सामान्य मान लिखिये।

६. शरद ऋतु में उचित शोधन क्रिया का नाम लिखिये।

७. कृपया प्रत्येक के सामने संख्या भरें

(क) मानव शरीर में अस्थियों की कुल संख्या–

(ख) मुख और सिर की अस्थियों की संख्या–

(ग) पीठ के कशेरुक–

(घ) कंठ

(ड.) वक्ष

(च) अधोशाखा

(ज) कान

८. नीचे दिये गये श्लोक का अर्थ लिखिये–

व्यायामादतिसंक्षोभादस्थ्नामति विघट्टनात्।
अस्थिवाहीनि दुष्यन्ति वातलानां च सेवनात्।।

९. 'प्रोटीन' के बारे में संक्षेप में लिखिये –

१०. अनुपान का क्या अर्थ है? उदाहरण देकर बताइये।

पुस्तक समीक्षा

पं. काशीनाथ गोपाल गोरे

पुस्तक का नाम–

एच. आई.वी.एंड एड्स, मैनुअल फार हेल्थ वर्क्स

लेखक–

डा.पी.एन.सहगल, मिस रोनी नेफ, डा.संजय कपूर

प्रकाशक–

वालन्टरी हेल्थ एसोसिएशन आफ इण्डिया, ४०, इन्स्टीटयूशनल एरिया, आई.आई.टी. के दक्षिण में, नई दिल्ली–११००१६, भारत

पृष्ठ संख्या– २६

ज्ञान में वृद्धि से नये–नये रोगों का पता चलता रहता है। इस समय जिस रोग ने पूरी दुनियां को झकझोर रखा है, वह है एड्स। ह्यूमन इम्यूनो डेफिशिएन्सी वाइरस (संक्षेप में एच.आई . वी) जनित एक्वायर्ड इम्यूनो डेफिशिएन्सी सिन्ड्रोम (संक्षेप में एड्स) का पता कुछ वर्ष पहले ही लगा है, परन्तु इस रोग ने लगभग पूरे विश्व में घुसपैठ कर ली है। एक अनुमान के अनुसार विश्व में इस समय एड्स से रुग्ण व्यक्तियों की संख्या २५ लाख है और एच.आई.वी. से प्रभावित व्यक्तियों की संख्या एक करोड़ से अधिक है। यह भी अनुमान है कि जिस क्रम से विषाणु प्रसृत हो रहे हैं, उस हिसाब से सन २००० तक एड्स से रुग्ण व्यक्तियों की संख्या एक करोड़ और एच.आई.वी. से प्रभावित व्यक्तियों की संख्या ४ करोड़ हो जाएगी।

इस रोग का सबसे दुःखद पहलू यह है कि अभी तक इसका कोई उपचार ज्ञात नहीं हो सका है। इसके अलावा यह भी उल्लेखनीय है कि एच.आई.वी. के शरीर में प्रविष्ट होते ही कोई लक्षण उत्पन्न नहीं होते। अधिकांश मामलों में ४ से १० वर्षों के बाद ही लक्षण उत्पन्न होते हैं और कुछ मामलों में तो इससे भी अधिक समय लगता है। अतः इस रोग की रोकथाम ही इसका सर्वोत्तम ज्ञात उपचार है। इसकी रोकथाम के उपाय करने से ही इससे बचा जा सकता है।

वालन्टरी हेल्थ एसोसिएशन आफ इण्डिया ने एड्स की रोकथाम के पुनीत उददेश्य से यह पुस्तक प्रकाशित की है। यह गांवों के स्तर पर स्वास्थ्य संबंधी कार्यकर्ताओं के लिए तैयार की गई है ताकि वे इस रोग पर कड़ी नजर रख सकें और प्रत्येक व्यक्ति को इसकी रोकथाम के उपायों से अवगत करा सकें।

पुस्तक में एच.आई.वी. और एड्स के बारे में जानकारी दी गई है। यह वाइरस किन माध्यमों से संक्रमित होता है, शरीर में प्रवेश के बाद यह किस प्रकार शरीर की प्रतिरोध शक्ति को नष्ट करता है, इसके लक्षण, निदान एवं उपचार, उसकी रोकथाम के उपाय और आवश्यकता आदि इस पुस्तक में सविस्तार वर्णित हैं। पुस्तक प्रत्येक व्यक्ति द्वारा पठनीय है ताकि वह एच.आई.वी के संक्रमण से अपने को बचा सके। क्योंकि एड्स के विरुद्ध फिलहाल कोई उपचार उपलब्ध न होने के कारण रोकथाम ही अपने हाथ में है । इस पुस्तक का पर्याप्त प्रचार नितान्त आवश्यक है।

आवश्यकता है।

लोक विज्ञान, स्वास्थ्य शिक्षण एवं स्थानीय स्वास्थ्य परंपराओं के संवर्धन में कार्यरत स्वैच्छिक संस्था "जीवनीय" को पूर्णतः अस्थाई पदों पर तीन प्रोजेक्ट सहायकों की आवश्यकता है। निम्नलिखित शैक्षिक योग्यताओं व अनुभव के आधार पर उचित वेतन का प्रावधान है।

पद 1. कृषि या वनस्पति विज्ञान में स्नातक जिसे पौधों की नर्सरी/बागवानी का अनुभव हो।

पद 2. **कम्प्यूटर में डेस्क टाप पब्लिशिंग (डी टी पी)** साफ्टवेयर वेंचुरा, अक्षर, पेजमेकर, कोरेलड्रा आदि में पारंगत व्यक्ति की जो पूर्णकालिक या अंशकालिक रुप से समय दे सके।

पद 3. सोसायटी के प्रकाशनों के विपणन व विज्ञापन एकत्र करने हेतु उचित वेतन एवं/अथवा आकर्षक कमीशन पर कार्य के इच्छुक युवा जो यात्रा करने में सक्षम हों। इच्छुक अभ्यार्थी अपनी शैक्षिणिक योग्यताओं /आयु/अनुभव आदि के साथ इस विज्ञापन के १५ दिनों के अंदर संपर्क करें।

सचिव, जीवनीय सोसायटी

ई–III/249, सेक्टर एच, अलीगंज, लखनऊ–२२६०२०, फोन– ७७५६८

आयुर्वेद कल, आज और कल

पं० काशीनाथ गोपाल गोरे, लखनऊ

समस्त शास्त्रों का प्राचीन उद्गम ईश्वर माना गया है। ब्रह्मा–विष्णु–महेश ये सदैव समस्त ब्रह्माण्ड के सर्जक,

पालक और संहारक हैं और इन्हें समस्त शास्त्रों का कारण माना जाता है। प्रत्येक भारतीय शास्त्रों का उद्भव इन त्रिदेवों में से किसी एक से हुआ है। जैसे संगीत शास्त्र अर्थात गायन–वादन–नर्तन का उद्गम महेश से माना गया है उसी प्रकार आयुर्वेद का उद्गम ब्रह्मा से माना गया है। इसीलिए इसे पंचमवेद भी कहते हैं। मानव द्वारा रचित न होने के कारण इसे अपौरुषेय कहा जाता है।

आयुर्वेदो नादि
रनन्तश्चतुर्मुखेणादावनुगीतः।
अथर्ववेदादपौरुषेयाज्जीवानां जीवनाय जातः।।

ईश्वर प्रणीत होने के कारण आयुर्वेद अनादि है इसमें जीवन से संबद्ध सभी विषयों का समावेश हो जाता है। यह सृष्टि के अन्त तक रहेगा और ईश्वर में लीन हो जायगा, अतः आयुर्वेद अनन्त है। सर्वप्रथम आयुर्वेद का प्रणयन ब्रह्मा द्वारा किया गया है। यह अथर्ववेद का अंगभूत है। इसका उद्गम जीवमात्र के सुखी एवं स्वस्थ जीवन के प्रयोजन से हुआ है। इस प्रकार आयुर्वेद एक दैवी विद्या है, मानुषी नहीं।

कृतयुग में अजरत्व और अमरत्व की प्राप्ति के लिए देव दानवों ने मिलकर मन्दराचल को मथानी और वासुकि नाग को रस्सी के रुप में प्रयोग कर महासागर का मंथन किया था। मंथन से अनेक रत्न उत्पन्न हुए, अन्त में विष्णु के अंशापन्नवतार श्री धन्वन्तरि अमृत कलश लेकर प्रकट हुए। देवों के लिए (अमरत्व) चिरजीवन और मनुष्यों के लिए अजरत्व (चिरयौवन) धन्वन्तरि के अवतार का प्रयोजन था। धन्वन्तरि आयुर्वेद के व्याख्याता थे। 'अमृत' अर्थात जरा और मृत्यु पर विजय आयुर्वेद के अन्तिम प्रयोजन की ओर स्पष्ट संकेत करता है।

जैसा कि 'आयुर्वेद' नाम से ही स्पष्ट है इस ज्ञानकोश का संबंध आयुष्य से, उसकी वृद्धि उसकी आनन्दमयता और सुखी और हरण करने में तत्पर रोगों को दूर करने से है। इसीलिए आयुर्वेद में स्वस्थ वृत्त, उचित आहार–विहार, और पथ्यापथ्य पर विशेष ध्यान दिया गया है। चूंकि रोग आयुष्य का हरण करते हैं, जीवन में दुःख पैदा करते हैं, अतः प्रसंगतः आयुर्वेद में रोग निदान, चिकित्सोपचार आदि भी वर्णित है। अतः आयुर्वेद को मात्र चिकित्साशास्त्र के रुप में समझना सही नहीं है, यह जीवन का नियामक शास्त्र है।

सुश्रुताचार्य ने स्वस्थ व्यक्ति की परिभाषा निम्नवत् दी है:

समदोषः समाग्निश्च समधातुमलक्रियः।
प्रसन्नात्मेन्द्रियमनाः स्वस्थ इत्यभिधीयते।।

जिसके शरीर में वात–पित्त–कफ ये तीनो दोष, पाचकाग्नि–भूताग्नि–धात्वग्नि ये ऊर्जा के तीनों रुप, रस–रक्त–मांस–मेद–अस्थि–मज्जा–शुक्र ये सात धातु, शुक्र धातु छोड.कर शेष छः धातुओं के मल, ये सब सम अर्थात उचित अनुपात में हों और जिस व्यक्ति के इन्द्रिय (पंच कर्मेनद्रिय और पंचज्ञानेंद्रिय) उचित रुप से क्रियाशील हैं, मन तथा आत्मा प्रसन्न निष्पाप से परिपूर्ण हो वही व्यक्ति स्वस्थ है। स्वस्थ व्यक्ति की ऐसी परिपूर्ण सर्वांग पूर्ण परिभाषा अन्यत्र उपलब्ध नहीं है। पंच कर्मेन्द्रियों की सम क्रियाशीलता से कर्म, कल्पनाप्रवण मन तथा पंच ज्ञानेन्द्रियों से बुद्धि तत्व की विवेकशीलता का ही समावेश, इसमे नहीं है अपितु, 'यो बुद्धेः परतस्तु सः ऐसे बुद्धि से भी परे आत्मतत्व का भी इसमें समावेश है। इस प्रकार संपूर्ण जड. एवं चेतन सृष्टि 'स्वस्थ' में समाहित है। 'स्व' का तात्पर्य भी मूलतत्व, सार,

आत्मा से है। जो व्यक्ति सभी प्रकार से जागरुक हो, जिसका आत्मतत्व माया से छिपा न हो वही दार्शनिक दृष्टिसे स्वस्थ होता है। यह परिभाषा समता पर आधारित है। जब तक शरीर में दोषरहित समत्व नहीं होता वह स्वस्थ नहीं हो सकता और जब तक मन, बुद्धि और आत्मा समत्व प्राप्त नहीं करते तब तक व्यक्ति स्वस्थ नहीं कहा जा सकता।

महर्षि चरक ने भी बताया है–

विकारो धतुवैषम्यं साम्यं प्रकृतिरुच्यते

धातुओं की विषमता से विकार उत्पन्न होते हैं और यदि साम्य/समत्व शरीर में बना रहे तो वह प्रकृति अर्थात सही स्थिति या स्वस्थता है।

समता या समत्व का सिद्धान्त विश्वव्यापी है। सभी शास्त्र किसी न किसी रुप मे समत्व पर आधारित है। श्रीमद्भगवद्गीता में भी समत्व को योग कहा गया है तथा समत्व संपन्न व्यक्ति को योगी या 'युक्त' कहा गया है। गीता का वचन है–

समत्वं योग उच्यते

गीता में उपदेश है कि जिस व्यक्ति में समत्व नहीं है, अर्थात जो 'युक्त' नहीं है वह सुख नहीं प्राप्त कर सकता। यथा–

नास्ति बुद्धिरयुक्त न चायुक्तस्य भावना।

न चाभावयतः शान्तरशान्तस्य कुतः सुखम्।।

अयुक्त अर्थात विषमशील, जिसने समत्व प्राप्त नहीं किया है, उसकी बुद्धि, विश्वास और श्रद्धा स्थिर नहीं होती और बुद्धि स्थिर न होने से अशान्त रहना स्वाभाविक है। इस प्रकार जो व्यक्ति अशान्त हो उसे सुख कहां से प्राप्त हो सकता है? सुखी होने के लिए चित्त और बुद्धि उद्वेगरहित शान्त होनी चाहिए और बुद्धि की स्थिरता समत्व के बिना प्राप्त नहीं होती।

योगः कर्मसु, कौशलम्

गीता के अनुसार समत्व योग है और योग ही कर्तव्य कर्म में कुशलता है। गीता में कहा गया है–

नात्यश्नतु योगोस्ति न चैकान्तमनश्नतः।

न चाति स्वपन्नशीलस्य जाग्रतो नैव चार्जुन।।

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।

युक्त स्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा।।

अर्थात् आवश्यकता से अधिक भोजन करने वाले को योग साध्य नहीं है। इसी प्रकार बिल्कुल न खाने वाले के लिए भी योग दुर्लभ है। जो निरन्तर सोता रहता है या जो निरन्तर जागता रहता है उसे भी योग साध्य नहीं होता, जिस व्यक्ति का आचार और विचार समत्वयुक्त अर्थात् युक्तियुक्त रुप से उचित है, जो कर्तव्य कर्म में उपयुक्त और पर्याप्त प्रयत्न करता है तथा निद्रा और जागरण में अनुपात रखता है, उसे ही योग साध्य होता है और ऐसे व्यक्ति का दुःख योग हरण करता है।

इस प्रकार आयुर्वेद और गीता दोनों अपने–अपने क्षेत्रों में मनुष्य के दुःखहरण के उपाय बताते हैं और दोनों के उपाय एक दूसरे से संगत और समत्व के सिद्धान्त पर आधारित हैं।

आधुनिक विज्ञान के अनुसार समस्त जगत् परमाणुओं से बना है। प्रत्येक परमाणु में मुख्यतया प्रोटान, इलेक्ट्रान और न्यूट्रान होते हैं, न्यूट्रान तो सदैव समत्वयुक्त अर्थात् उदासीन होता है। प्रोटान मे धनावेश और इलेक्ट्रान में प्रोटान के आवेश के तुल्य ऋणावेश होता है। जब तक किसी परमाणु के मूल तत्वों अर्थात् प्रोटान, और इलेक्ट्रान के धन एवं ऋण आवेशों में समता नहीं होती, तब तक वह परमाणु अस्थिर और आयनीकृत बना रहता है और यथाशक्य शीघ्र धनावेश या ऋणावेश की पूर्ति कर समता प्राप्त करता है। सृष्टि की इस मूल भूत इकाई परमाणु में आवेश की समता ही परमाणु का स्वस्थ रहना है। जिस प्रकार प्राणी दोष, धातु, अग्नि और मल, आदि में समत्व से ही स्वस्थ रह सकता है उसी प्रकार परमाणु भी आवेशों के समत्व की स्थिति में ही, स्थिर स्वस्थ रह सकता है। समत्व का सिद्धान्त परमाणु के विभिन्न इलेक्ट्रान आवरणों में स्थित इलेक्ट्रानों पर भी लागू होता है। ऊर्जा और घूर्णन (स्पिन) मे यदि समता न स्थापित हो सके तो ऐसे दो इलेक्ट्रान एक आवरण में नहीं रह सकते, वे ऊर्जा मुक्त कर या स्थान छोड.कर समत्व स्थापित करते हैं।

जब समस्त प्रकृति के मूल परमाणुओं तक में समता है और वे स्थिर रहने का प्रयास करते हैं और स्वस्थ रहते हैं तो समस्त जगत् को भी स्वस्थ चाहिए। तब फिर जगत् में विकार उत्पन्न ही क्यों होता है! आयुर्वेद में विकार अर्थात् समत्वहीनता को ही रोग कहा जाता है। इस संबंध में कालिदास का एक वचन उल्लेखनीय है––

मरणं प्रकृतिः शरीरिणां
विकृतिर्जीवितमुच्यते बुधैः

शरीरधारी प्राणियों की प्रकृति अर्थात् स्वभाव मृत्यु है और जीवन विकृति मात्र है। दर्शनशास्त्र के अनुसार जब निर्विकार, निर्विकल्प, निराकार, निर्गुण ईश्वर ने सृष्टि निर्माण की इच्छा की, उसमें इच्छारुपी विकार उत्पन्न हुआ, तभी इस सृष्टि की रचना हो सकी। जब तक सृष्टि में समत्व बना रहा तब तक विकार उत्पन्न नहीं हो सकता था। अतः समत्व में विकार ही जीवन के प्रादुर्भाव का कारण कहा गया है। जीवन अर्थात् विकार, संघर्ष, यही महाकवि कालिदास का अभिप्राय है। चूंकि विकार ही रोग है, कदाचित् इसीलिए जीवन के आधारभूत शरीर को व्याधिमन्दिर 'शरीर' व्याधिमन्दिरम' कहा गया है। आखिर प्रश्न उठता है कि जब समत्व परमाणुओं का स्वभाव है तो फिर विकार के रूप मे रोगों की उत्पत्ति ही नहीं, जीवन की उत्पत्ति भी कैसे हुई! सृष्टि में, मूलरूप में विकार की सत्ता होनी चाहिए। ज्योतिर्विज्ञानी बताते हैं कि संपूर्ण पृथ्वी आवेश की दृष्टि से सम नहीं है अपितु इसमें ऋणावेश अधिक है। कदाचित् यही वह विकार है जो इस पृथ्वी पर जीवन के प्रादुर्भाव का कारण हो क्योंकि विकार के बिना जीवन नहीं उत्पन्न हो सकता। ज्योतिविज्ञानी एवं जीव विज्ञानी जीवन की उत्पत्ति का रहस्य सुलझाने मे निरन्तर रत हैं। कदाचित् उपर्युक्त विकार को ध्यान में रखते हुए शोध कार्य हो तो रहस्य का कोई सूत्र पकड़ में आ सके।

भारतीय विचारधारा सदैव कर्मवादी रही है। यद्यपि भारत में भाग्यवाद के भी प्रबल समर्थक रहे हैं, परन्तु उनसे कर्मवाद की आधारशिला पर कोई आघात नहीं हो सका। विश्व में समादृत भारत के दर्शन संबंधी अलौकिक उपदेश गीता में श्रीकृष्ण ने भ्रम में पडे. हुए अर्जुन को कर्म की ही प्रेरणा दी थी। आयुर्वेद भी कर्मवाद का अन्यतम उदाहरण है। यदि अस्वस्थता, रोग आदि भाग्य से उत्पन्न होकर भाग्य से ही दूर होने का सिद्धान्त अर्थात् भाग्यवाद मान्य होता तो ऋषि मुनियों को आयुर्वेद के प्रणयन की आवश्यकता ही न पड़ती। यदि भारतीय संस्कृति आदि में ह्रास हुआ है तो उसके कारण इतिहास में ढूंढने होंगे। इसके लिए संस्कृति दोषी नहीं हो सकती। (क्रमशः)

आयुर्वेदिक एवं तिब्बी अकादमी उत्तर प्रदेश : एक लावारिस संस्था

भारत की एकमात्र आयुर्वेदिक एवं तिब्बी अकादमी जो कि राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय भवन लखनऊ में स्थिति है प्रदेश सरकार की उदासीनता के कारण रसातल में पहुंच गई है। वर्तमान में हालत यह है कि अकादमी में करोड़ों रुपये मूल्य की पुस्तकें और पाण्डुलिपियां दिनोंदिन नष्ट होती जा रही हैं।

उक्त अकादमी के कर्मचारियों को जहां फरवरी १९९४ से वेतन तक नहीं मिल रहा है वहीं अकादमी के समस्त क्रियाकलाप जैसे प्रकाशन, वैद्य व हकीमों को ग्रन्थ लेखन के लिए पुरस्कार, उत्तम अनुसंधानकर्ताओं को स्वर्ण पदक, अनुसंधान उपयोगी पुस्तकालय का संवर्धन और रखरखाव जैसे सारे कार्य ठप्प हैं ।

प्रदेश शासन ने वर्ष १९५० में इस अकादमी की स्थापना इस उद्देश्य से की थी कि आयुर्वेद एवं यूनानी विषयों पर प्रमाणिक पाठयपुस्तकें और संदर्भ ग्रन्थ जो आज भी उपलब्ध नहीं हैं और महत्वपूर्ण हैं उनका हिन्दी में प्रकाशन हो।

अकादमी ने १९७१ और १९८२ के बीच जो १४ ग्रन्थ प्रकाशित किये हैं वे अपने ढंग के अनूठे हैं। आर्थिक तंगीयों के चलते १९८२ के बाद से अब तक कोई नया ग्रन्थ प्रकाशित नहीं हो सका है। जबकि तमाम उपयोगी पाण्डुलिपियां अकादमी के पास प्रकाशनार्थ स्वीकृत पड़ी हैं। इनमें से दो पाण्डुलिपियों के लेखक ९० वर्षीय आचार्य निरन्जन देव ग्रन्थ प्रकाशित होने का इन्तजार करते- करते स्वर्ग सिधार चुके हैं। अकादमी अपने प्रकाशनों को जनहित में हानि लाभ रहित मूल्य पर बेचती है। इसका उद्देश्य हिन्दी चिकित्सा साहित्य का प्रचार- प्रसार करना है न कि लाभ अर्जित करना।

आयुर्वेद एवं तिब्बी अकादमी का सालाना बजट ९१ हजार ४०० रुपये है। यह बजट इतना कम है कि कर्मचारियों के वेतन में तीन माह में ही खर्च हो जाता है इसी कारण फरवरी १९९४ के बाद यहां के डाक्टरों एवं कर्मचारियों को वेतन नहीं मिला है।

अकादमी को वर्ष १९७८ से मिलने वाली अनुदान राशि (९१४०० रु.) में भी इजाफा नहीं किया गया है। जबकि इस बीच दो बार (वर्ष १९७९ एवं १९८६) वेतन आयोग की संस्तुतियां लागू हो चुकी हैं। इसके अलावा मंहगाई भत्ता भी समय समय पर बढ़ा है। मौजूदा समय में केवल वेतन के लिए ही अकादमी को प्रति वर्ष तीन लाख पचास हजार रुपये की आवश्यकता है।

आलम यह है कि वैद्य व हकीमों को हिन्दी व उर्दू में प्रकाशित उनके चिकित्सा शोध ग्रन्थों पर प्रति वर्ष प्रोत्साहन पुरस्कार का प्रावधान है। इसकी प्रोत्साहन राशि मात्र ७५० रुपये (प्रथम पुरस्कार), ५०० रुपये (द्वितीय पुरस्कार) तथा २५० रुपये (तृतीय पुरस्कार) जो १९५० में जितनी थी आज भी उतनी ही है। यह पुरस्कार भी दस वर्षों से नहीं दिये गये हैं। चिकित्सा अभिषेक शोध के लिए हिन्दी, उर्दू, संस्कृत, अरबी और फारसी आदि विभिन्न भाषाओं की चिकित्सा ग्रन्थों से युक्त एक पुस्त्कालय भी अकादमी चला रही है। इस पुस्तकालय की हालत किसी कबड़ी की दुकान की तरह है कारण यह है कि इसके रख-रखाव का जो बजट वर्ष १९५० में मात्र २५०० रुपये वार्षिक था वही अब भी है।

अकादमी के कर्मचारियों को अभी तक कोई नैवृत्तिक सुविधा भी अनुमन्य नहीं हुई है जबकि उक्त अकादमी की स्थापना के वर्षों बाद स्थापित तथा समान कार्य करने वाली तीन-तीन अकादमियां उत्तर प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी, उत्तर प्रदेश उर्दू अकादमी के कर्मचारियों को समस्त राजकीय नैवृत्तिक सुविधायें प्रदान की जा चुकी हैं।

वानस्पतिक और समुद्री औषधीय पदार्थों में जैव तकनीकी विकास पर विश्व कांग्रेस

अब यह मान लिया गया है कि कई प्रकार के रोगों जैसे गठिया, दमा, कैन्सर और एड्स आदि की आधुनिक चिकित्सा पद्धति में कोई औषधि नहीं हैं। अतः इस प्रकार के रोगों की सुरक्षित औषधि न होने पर वनस्पति और समुद्री औषधीय पदार्थों से प्रभावी और बिना किसी दुष्प्रभाव वाली सुरक्षित औषधियों की खोज की जा रही है। पूरी दुनियां के वैज्ञानिक इस दिशा में प्रयासरत हैं।

इस विश्व कांग्रेस में विभिन्न क्षेत्रों के वैज्ञानिक अपने शोधपत्र रखेंगे व भाषण तथा परिचर्चायें आयोजित की जांएगी। इस कांगेस का आयोजन दिनांक १९ फरवरी १९९५ तक लखनऊ मेडिकल कालेज में किया जा रहा है। कांग्रेस का आयोजन इंटरनेशनल सोसायटी फार हर्बल मेडिसिन, किंग जार्ज मेडिकल कालेज लखनऊ, एशियन फेडरेशन आफ क्लीनिकल फार्मकोलोजिस्टस, इंडियन अकेडमी आफ लोनजियालोजी (दीर्घायु विज्ञान) और इन्डियन अकेडमी आफ न्यूरोसाइन्सेज ने संयुक्त रुप से किया है। कांग्रेस में भारतीय वैज्ञानिकों के साथ साथ कई विदेशी वैज्ञानिक भी भाग लेंगे।

कांग्रेस में आठ सत्रों में विभिन्न विषयों जैसे प्राचीन भारतीय ग्रन्थों से औषधीय पौधों के बारे में प्राप्त जानकारी और आधुनिक चिकित्सा पद्धति, औषधीय पौधों की खेती, संरक्षण और जैवतकनीकी शोध, वानस्पतिक बनाम संस्लेषित औषधि, औषधीय पौधों और समुद्री संसाधनों से औषधि निर्माण हेतु तकनीकी विकास, वानस्पतिक और समुद्री औषधियों का मानकीकरण आदि पर गहन परिचर्चा के साथ ही इन औषधियों के बेहतर वितरण के बारे में भी चर्चा होगी।

साक्षात्कार

केरल के लोक चिकित्सक वैद्य के.एम.पाली

साक्षात्कारकर्ता– डा.के.एस.पिल्ले, पडप्पई, तमिलनाड़ ईरनाकुलम से थोड़ी दूर स्थिति पिरुमपब्वूर कस्बे के सभी लोक कनमपुरातु कुडी घराने के श्री के.एम.पाली को जानते हैं। अस्सी वर्षीय नौजवान श्री के.एम.पाली हरे भरे गांव वैकारा में रहते हैं। उन्हें गायों से बहुत प्रेम है और उनकी देखभाल में लगे रहते हैं। इस आयु में भी वह बहुत सबेरे उठकर गायों का दूध दुहते हैं।

श्री पाली गौ प्रेमी के साथ साथ सर्पदंश, नेत्र रोग और अस्थिभंग की चिकित्सा करने वाले वैद्य के तौर पर जाने जाते हैं। उन्होंने चिकित्सा का ज्ञान अपने राजवैद्य पिता से प्राप्त किया। यद्यपि पाली जी ने नेत्र चिकित्सा से अपना इलाज प्रारम्भ किया वे सर्पदंश के चिकित्सक के रुप में अधि व्यस्त रहते हैं। सौभाग्य से अन्य परंपरागत चिकित्सकों से अलग हटकर डा.पाली अपने रोगियों का चिकित्सा रिकार्ड सुव्यवस्थित ढंग से रखते हैं। वे गर्व से बताते हैं कि उन्होंने अब तक दो हजार सात सौ सर्पदंशो का उपचार किया है। उनके चेहरे पर निराश की झलक आती है जब वे बताते हैं कि वे ५% रोगियों की जान नहीं बचा सके। उन्होंने बताया कि ये रोगी बहुत देर से अन्तिम अवस्था में उनके पास आये जब कुछ नहीं किया जा सकता था।

प्रश्न– क्या आपने ऐसे रोगियों का इलाज किया है जहां एलोपैथी सफल न हुई हो?

उत्तर– हां। मैंने ऐसे बहुत से रोगियों का इलाज सफलतापूर्वक किया है।

प्रश्न– कृपया अपने इलाज का तरीका बतायें?

उत्तर– मैं मरीजों का इलाज पत्थर (जहर मोहरा) से करता हूं।

इस पत्थर को बनाने में लगभग ६२ खनिज और वानस्पतिक वस्तुओं का प्रयोग किया जाता है। सांप काटे क्षेत्र को देख कर मैं पहचान जाता हूं कि रोगी को कम जहरीले या अधिक जहरीले सांप जैसे नाग, करैत या वाइपर ने काटा है। तब मैं यह पत्थर घाव पर लगा देता हूं जो अपने आप घाव से चिपक जाता है। जब यह पत्थर अपने आप घाव से अलग हो जाता है तो इसका अर्थ होता है कि जहर नष्ट हो गया है। इसके बाद रोगी को घर जाने दिया जाता है। इसके पश्चात भोजन में कुछ चीजों का परहेज करना होता है।

प्रश्न– सर्प दंश किना घातक होता है?

उत्तर– कुछ सांपों का जहर बहुत घातक होता है लेकिन यदि समय पर चिकित्सा की जाय तो उन्हें सफलतापूर्वक ठीक किया जा सकता है। इसीलिए मैं कहता हूं कि समय इस में बहुत महत्वपूर्ण है।

प्रश्न– आप नेत्र रोगियों की चिकित्सा कैसे करते हैं?

उत्तर– मैं नेत्र रोगों की चिकित्सा में वनस्पतियों का प्रयोग करता हूं इन वनस्पतियों को छाया में सुखाया जाता है।

प्रश्न– आप हडडी टूटने की चिकित्सा कैसे करते हैं?

उत्तर– सबसे पहले मैं टूटी हडडी को सही स्थिति में रखता हूं फिर त्वचा पर एक प्रकार का वनस्पतिक लेप लगता हूं और पूरे क्षेत्र को पट्टियों से ढक देता हूं। हडडी को अचल बनाने के लिए में बांस की खपच्चियों का प्रयोग करता हूं।

जब मैंने केरल में परम्परागत चिकित्सा के भविष्य के बारे में पूछा तो उन्होंने कहा कि भविष्य बहुत अच्छा है। लेकिन उन्होंने हाल के वर्षों में कुकुरमुत्ते की तरह उग आये निर्माताओं द्वारा आयुर्वेदिक औषधियों के प्रचार के तरीकों पर रोष व्यक्त किया। श्री पाली पुत्र आयुर्वेदिक डक्टर है तथा अन्य भी व्यवस्थित हो गये हैं। डा.पाली अपने रोगियों से कोई फीस नहीं मांगते। धन उनके लिए संतोष का श्रोत नहीं है। उन्हें रोगी के ठीक हो जाने और उन्हें अपना जीवन दाता मानने पर संतोष होता है।

उदर विकारों पर लोकोक्तियां

वैद्य रमाकान्त मणि, कानपुर

१. लौंग सोंठ अजवाइन की, बटी बनाकर खाये
सुबह शाम दोपहर लें, शीघ्र अजीरन जाये।

२. स्वेत जीरा, सोंठ, सन, लेवे माशा तीन
बदहजमी तुरतै हरै, तन मन सुख तल्लीन।

३. तेल बूंद अजवाइन, पान संग जो खाय
निश्चय ही बद–हाजमा, तुरत समन हो जाय।

४. कचूर कचरी चूर्ण कर निश–दिन माशा खाय
बदहजमी के रोग से जल्द मुक्त हो जाय।

५. शहद संग में चाटिये, पीपरि माशा दोय
सुबह–शाम सप्ताह ले, कठिन अजीरन खोय।

६. काली जीरी और गुड़, राई लेय समान
गरम गरम जल साथ ले, हरे अजीरन जान।

७. हरें घी में भून कर– सोचर नमक मिलाय
गुन गुन जल से माशा छै लेवे, तुरत अजीरन जाय।

८. मोथा, धनियां भाग सम, गुनगुन जल से खाय
छः माशा सेवन करै बदहजमी मिट जाय।

९. तोला भर नित पीजिये दस अमरुदी पात
खाँड़ संग सप्ताह ले, कठिन अजीरन जाय।

१०. हरड़, बहेड़ा, आँवला, भाग एक दो चार
चूरन कर संग लीजिए, कबुज नष्ट हो जाय।

११. पांच जवा लहसुन रसा, पीजे नमक मिलाय
तीन बार के पियत ही, पेट दरद मिट नाय।

१२. आधा तोला वजन में बायविडंग मिलाय
रत्ती भर मधु संग ले, पेट दरद मिट जाय।

अतिसार से होने वाली मौतों की रोकथाम

माता को सलाह

पतले दस्त बार-बार होने से पानी की कमी बच्चों की मौतों का सबसे आम कारण है। अतिसार से हुई पानी की कमी को समय से तरल पदार्थ और इलेक्ट्रोलाइटस देकर इन मौतों को रोका जा सकता है।

ओ.आर.एस. (मुखीय पुनर्जलपूरण घोल) अतिसार के सभी मामलों में जीवन रक्षक है। माताओं को यह जरुर बताया जाये कि वे ये पैकेट पास के स्वास्थ्य केन्द्र अथवा मुखीय पुनर्जलपूरण घोल डिपों से प्राप्त करें। यह जरुरी है कि अतिसार से होने वाली पानी की कमी की रोकथाम के लिए बच्चों को दिए जाने वाले मुखीय पुनर्जलपूरण घोल तैयार करने के सही तरीकों तथा मुखीय पुनर्जलपूरण की उचित मात्राओं के बारे में माताओं को जानकारी दी जाए।

पानी की कमी की रोकथाम के लिए ओ.आर.एस. (मुखीय पुनर्जलपूरण घोल)/घर में ही उपलब्ध तरल पदार्थों की कितनी मात्रा दी जाए:

आयु	हर दस्त के बाद
६ महीने	चौथाई गिलास (५० मिली)
७ महीने से २ वर्ष	चौथाई से आधा गिलास (५०-१०० मिली)
२ से ५ वर्ष	आधे से एक गिलास (१००-२०० मिली)

यदि बच्चा प्यासा है और पानी पीना चाहता है तो अधिक घोल दिया जाना चाहिए

सौजन्य से : स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण निदेशालय, उत्तर प्रदेश

मस्तरामजी

कथा : पं० काशीनाथ गोरे
चित्र : सन्दीप सेन

..सही दिशा में ही मालिश करना चाहिए ..
"पैरों की मालिश ऊपर की दिशा में करना चाहिए."
"पैरों की उंगलियों की मालिश ठीक से करनी चाहिए."
पैरों के तलुवों की मालिश भी आवश्यक है.
"पेट की मालिश में नीचे से ऊपर और फिर ऊपर से नीचे की दिशा होनी चाहिए
इन तरीकों से मालिश करने का क्या महत्व है..मालूम?
यह आसान करता है निकालना पेट..
..में इकट्ठा दोष! यह माँस-पेशियों को भी स्वस्थ बनाती है..
नसों के बारे में क्या? वैद्य जी?
हाँ, मालिश उनको कार्यशील रखती है!
यह तुमको चुस्त व गतिशील बनाए रखती है!
इसलिए अपनी मालिश नियमित करो!

रजि० नं० : ५५५०३/९०

द्वैमासिक

जीवनीय

स्वास्थ्य पत्रिका

1995

JANUARY

S	M	T	W	T	F	S
1	2	3	4	5	6	7
8	9	10	11	12	13	14
15	16	17	18	19	20	21
22	23	24	25	26	27	28
29	30	31				

FEBRUARY

S	M	T	W	T	F	S
			1	2	3	4
5	6	7	8	9	10	11
12	13	14	15	16	17	18
19	20	21	22	23	24	25
26	27	28				

MARCH

S	M	T	W	T	F	S
			1	2	3	4
5	6	7	8	9	10	11
12	13	14	15	16	17	18
19	20	21	22	23	24	25
26	27	28	29	30	31	

APRIL

S	M	T	W	T	F	S
30						1
2	3	4	5	6	7	8
9	10	11	12	13	14	15
16	17	18	19	20	21	22
23	24	25	26	27	28	29

MAY

S	M	T	W	T	F	S
	1	2	3	4	5	6
7	8	9	10	11	12	13
14	15	16	17	18	19	20
21	22	23	24	25	26	27
28	29	30	31			

JUNE

S	M	T	W	T	F	S
				1	2	3
4	5	6	7	8	9	10
11	12	13	14	15	16	17
18	19	20	21	22	23	24
25	26	27	28	29	30	

JULY

S	M	T	W	T	F	S
30	31					1
2	3	4	5	6	7	8
9	10	11	12	13	14	15
16	17	18	19	20	21	22
23	24	25	26	27	28	29

AUGUST

S	M	T	W	T	F	S
		1	2	3	4	5
6	7	8	9	10	11	12
13	14	15	16	17	18	19
20	21	22	23	24	25	26
27	28	29	30	31		

SEPTEMBER

S	M	T	W	T	F	S
					1	2
3	4	5	6	7	8	9
10	11	12	13	14	15	16
17	18	19	20	21	22	23
24	25	26	27	28	29	30

OCTOBER

S	M	T	W	T	F	S
1	2	3	4	5	6	7
8	9	10	11	12	13	14
15	16	17	18	19	20	21
22	23	24	25	26	27	28
29	30	31				

NOVEMBER

S	M	T	W	T	F	S
			1	2	3	4
5	6	7	8	9	10	11
12	13	14	15	16	17	18
19	20	21	22	23	24	25
26	27	28	29	30		

DECEMBER

S	M	T	W	T	F	S
31					1	2
3	4	5	6	7	8	9
10	11	12	13	14	15	16
17	18	19	20	21	22	23
24	25	26	27	28	29	30

LIST OF HOLIDAYS

JAN	13th	Lohri
	14th	Makar Sankranti
	26th	Republic Day
FEB	4th	Basant Panchmi
	27th	Maha Shiv Ratri
MAR	4th	Id-Ul-Fitar
	17th	Holi
APR	1st	Bank Holiday
	9th	Ram Navmi
	13th	Baisakhi
MAY	11th	Id-Uz-Zuha
JUNE	10th	Moharram
AUG	10th	Raksha Bandhan
	10th	Barabafat
	15th	Independence Day
	18th	Janamashtmi
OCT	2nd	Gandhi Jayanti
	3rd	Dasshera
	23rd	Diwali
NOV	7th	Guru Nanak Jayanti
DEC	25th	X'mas Day